Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3081
4

R
891.43081
P88L

CC-0 In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Jamal Foundation C

Acc. No. 48675
A 58 1 C 1 7 7 1 3 1

R
891.43
VAR-H

G.K.V.
LIBRARY

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय कुरुक्षेत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

894.43081, P88L
7081

राष्ट्रभाषा

हिंदी-मराठी कोश

CAT.KS

संपादक

कृष्णलाल वर्मा, विशारद, साहित्यभूषण.

सेवानिवृत्त हिंदी-हिंदुस्तानी ऑर्गनायझर म्यु. मराठी गुजराती स्कूल्स, मुंबई

आणि

राहामनबाई पेणकर

मुख्याध्यापिका म्यु. भायखळा अ. प्रा. मराठी शाळा नं. २.

या कोशांत

शब्द २६५४८

वाक्प्रचार १९५२

म्हणी ९०५

घटना-समितीचे पारिभाषिक शब्द १०५६

विषयवार शब्द १२१५

प्रथमावृत्ति जुलै १९५१]

आठ रुपए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेत-सूची

अ०—अव्यय

अ० व०—अनेक वचन

क्रि० अ०—क्रिया अकर्मक

क्रि० स०—क्रिया सकर्मक

पु०—पुल्लिंग

प्र०—प्रत्यय

वि०—विशेषण

संबो०—संबोधन

स०—सर्वनाम

स्त्री०—स्त्रीलिंग

४-८६७५

मुद्रक—१. धीरूभाई दलाल, ॲसोसिएटेड, ॲडवरटाइझर्स अँण्ड प्रिंटर्स ५०५, ऑर्थर रोड, ताडदेव, मुंबई. ७ (पान १ ते ८ आणि १ ते ६०८

२. रघुनाथ बीभाजी देसाई, न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस, केळेवाडी मुंब (परिशिष्ट पान १ ते ८८ पर्यंत).

प्रकाशक—कृष्णलाल वर्मा, ग्रंथभंडार, लक्ष्मी हाउस, लेडी हार्डिंज रोड, ग बंबई नं. १६.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुक्रमणिका

(आलोचना भाग)

प्रश्नक्रम	विषय	पृष्ठ
१.	'प्रसाद' के जीवन-वृत्त पर प्रकाश डालिए।	९
२.	'प्रसाद'-काव्य की पृष्ठभूमि पर एक सारगर्भित लेख लिखिए।	१५
३.	'प्रसाद' जी के काव्य का क्रम-विकास स्पष्ट कीजिए।	
	अथवा	
	'प्रसाद' जी की काव्य-कृतियों का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।	२३
४.	'प्रसाद' जी की चिन्तन-धारा पर एक सारगर्भित लेख लिखिए।	३४
५.	रहस्यवाद क्या है? उसकी मूल प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालते हुए 'प्रसाद' जी के रहस्यवाद को स्पष्ट कीजिए।	
	अथवा	
	'प्रसाद'-काव्य से उदाहरण देते हुए रहस्यवाद की मूल प्रवृत्तियों एवं तत्त्वों पर प्रकाश डालिए।	४५
६.	'प्रसाद' जी के प्रकृति-चित्रण पर सारगर्भित निबन्ध लिखिए।	
	अथवा	
	प्रकृति-चित्रण के विभिन्न रूपों का उल्लेख करते हुए 'प्रसाद' जी के प्रकृति-चित्रण का स्वरूप स्पष्ट कीजिये।	५२
७.	'लहर' के आधार पर 'प्रसाद' जी के जीवन-दर्शन को स्पष्ट कीजिये।	
	अथवा	
	''लहर' में 'प्रसाद' जी का व्यक्तित्व' विषय पर एक लेख लिखिये।	५९
८.	'लहर' में व्यक्त कवि की प्रेम-सौन्दर्य भावना का स्पष्टीकरण कीजिए।	६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. छायावादी काव्य की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परख कीजिए।

अथवा

'लहर' में छायावादी तत्त्व' पर एक निबन्ध लिखिए। ७०

१०. 'लहर' के आधार पर 'प्रसाद' की काव्य-भाषा की आलोचना कीजिए। ७९

११. गीति-काव्य की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परीक्षा कीजिए।

अथवा

'प्रगीत-काव्य' और 'लहर' विषय पर लेख लिखिए। ८५

१२. 'लहर' के काव्य-सौन्दर्य का स्पष्टीकरण कीजिए। ९२

१३. प्रतीकात्मकता की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परीक्षा कीजिए।

अथवा

'लहर' में प्रतीक-विधान विषय पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए। ९७

१४. कल्पना-सौष्ठव की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परख कीजिए। १०२

व्याख्या-भाग

(पृष्ठ १०५ से पृष्ठ २२२ तक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रसाद' और उनकी लहर

प्रश्न १—'प्रसाद' के जीवन-वृत्त पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—श्री जयशंकर 'प्रसाद' का जन्म काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य घराने में माघ शुक्ला संवत् १९४६ में हुआ था। उनका परिवार 'सुँघनी साहू' के नाम से विख्यात था। उनके पिता का नाम श्री देवीप्रसाद जी साहू था। 'प्रसाद' जी के परिजन धनी होने के साथ-साथ उदार भी थे। 'प्रसाद' जी के पितामह इतने उदारात्मा थे कि गंगा-स्नान से लौटते समय अपने पहनने के वस्त्र भी दान में भिखारियों को दे देते थे। उदार होने के साथ ही 'प्रसाद' जी के सम्बन्धी विद्या-प्रेमी भी थे। उनके घर में कवियों का समाज सदैव एकत्र रहता था। बालक 'प्रसाद' के अन्तःकरण में इसी वातावरण ने कवि बनने के संस्कार जमा दिये।

'प्रसाद' जी का परिवार कट्टर शैव-मतावलम्बी था। कश्मीरी प्रत्यभिज्ञा-दर्शन की विचारधारा उनके परिवार में स्वीकृत चली आ रही थी, जिसका अत्यन्त गहरा प्रभाव 'प्रसाद' जी की चिन्तन्-धारा पर पड़ा। उस समय काशी में समस्या-पूर्ति की धूम थी। बालक 'प्रसाद' ने शैशव में ही ब्रजभाषा में समस्या-पूर्ति की ओर अपनी अभिरुचि प्रकट की। भगवान् शंकर की प्रशंसा में 'प्रसाद' ने नौ वर्ष की अल्पायु में एक सवैया बनाकर अपने गुरु श्री सोहिनीलाल गुप्त 'रसमयसिद्ध' जी को सुनाया था, जिसे सुनकर विस्मय-विमुग्ध होकर उन्होंने बालक 'प्रसाद' को महाकवि होने का आशीर्वाद दिया था।

शैशव-विकाश—बालक 'प्रसाद' की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा तो घर पर ही हुई थी, किन्तु दस वर्ष की आयु में विधिवत् विद्याभ्यास करने के लिए उन्हें क्वींस कालेज में प्रविष्ट कराया गया। वह वहाँ दो वर्ष ही पढ़ पाये थे कि १२ वर्ष की आयु में उनके पिता जी का देहावसान हो गया और फिर तो उन्हें जीवन-संघर्ष का ही सामना करना पड़ा और उन्हीं संघर्षों के बीच उनका व्यक्तित्व निखर कर महान बन सका। जैसा कि एक पाश्चात्य विद्वान् निकल्सन (Nicholson) ने लिखा है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'Personality is a state of tension and can continue only if that state is maintained.'

अर्थात् संघर्षों के बीच रहने से ही व्यक्तित्व निखरता है। 'प्रसाद' जी का कवि-व्यक्तित्व भी निरन्तर संघर्ष से जूझने से निखर पाया है। अपनी बाल्यावस्था में ही उन्हें बड़े-बड़े संघर्षों का सामना करना पड़ा। पिता के देहान्त के साथ ही उनके घर में अनेक प्रकार के झंझट उठ खड़े हुए। उनके बड़े भाई शम्भुरत्न जी ने व्यवसाय सम्हाला, किन्तु पिता की मृत्यु के तीन वर्ष बाद परिवार में मुकदमेबाजी प्रारम्भ हुई और लाखों रुपये नष्ट होने के बाद समस्त सम्पत्ति चार भागों में विभक्त कर दी गई। शम्भुरत्न जी और जयशंकर जी का एक ही भाग था। इसी बीच इनकी माता जी का भी देहान्त हो गया। अब बालक 'प्रसाद' के सिर पर ज्येष्ठ भ्राता शम्भुरत्न जी की ही छाया शेष थी। शम्भुरत्न जी ने उन्हें बड़े लाड़-प्यार से पाला, किन्तु दुर्भाग्य के प्रहार ने सत्रह वर्ष की आयु में 'प्रसाद' जी से उनके ज्येष्ठ भ्राता को भी छीन लिया। शम्भुरत्न जी की असामयिक मृत्यु 'प्रसाद' जी पर वज्र-प्रहार से कम न थी। अब घरबार और व्यवसाय-व्यापार का पूरा दायित्व उनके सुकुमार कन्धों पर आ पड़ा। उनके सामने अब अनेक प्रकार की बाधाएँ उपस्थित थीं; व्यापार की देखभाल, भाई के समय का भारी ऋण, गृहस्थी को जमाने की चिन्ता और अपने अन्तर में आन्दोलित होने वाली भावलोक को पुकार, इन सब विषम परिस्थितियों में युवक 'प्रसाद' ने व्यापार, घरबार, काव्य-साहित्य, शरीर-स्वास्थ्य सब कुछ सम्हाला और बड़े कौशल के साथ कठिन परिस्थितियों का सामना किया। इसी बीच 'प्रसाद' जी की दो पत्नियाँ भी एक के बाद एक चल बसीं। इस प्रकार 'प्रसाद' जी का जीवन निरन्तर संघर्षमय रहा है।

शिक्षा-दीक्षा—'प्रसाद' जी की शिक्षा, जिसे 'स्कूली शिक्षा' कहा जाता है, बहुत ऊँचे दर्जे तक नहीं हुई थी। आरम्भ में उन्होंने अपने मुहल्ले की पाठशाला में ही अक्षर-ज्ञान प्राप्त किया। श्री मोहिनीलाल गुप्त उनके प्रारम्भिक गुरु थे। उन्हीं से 'प्रसाद' जी ने ब्रजभाषा में कविता लिखने की प्रेरणा ग्रहण की थी। उसके बाद क्वींस कालेज में सातवीं श्रेणी तक नियमित रूप से पढ़े, किन्तु पिता जी की असामयिक मृत्यु के कारण कालेज की पढ़ाई बन्द हो गई, परन्तु बालक 'प्रसाद' के अन्तर में ज्ञान-पिपासा इतनी उत्कट थी कि वे निय-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मित शिक्षा के अभाव में भी अपने घर पर ही अध्ययन में लीन बने रहे। प्रारम्भ में उन्होंने हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू भाषाओं का अच्छा ज्ञानार्जन किया। तदनन्तर संस्कृत के महाकाव्य, उपनिषद्, दर्शन, पुराण आदि के विधिवत् पारायण में प्रवृत्त हुए। शैव-दर्शन के प्रति गहरी रुचि होने के कारण उन्होंने आस्तिक-नास्तिक दर्शनों की गूढ़ विचार-धारा से साक्षात् परिचय किया। अपने मुहल्ले के कायस्थ-परिवारों के उर्दू-फारसी ज्ञाता व्यक्तियों से उर्दू शायरी का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त करने में 'प्रसाद' जी पीछे न रहे।

कविता के अतिरिक्त 'प्रसाद' जी के अध्ययन के दूसरे प्रिय विषय थे—पुरातत्व (Archaeology) और इतिहास (History)। वे सांस्कृतिक विषयों की तह तक पहुंचना चाहते थे। अतः इतिहास की सूक्ष्म ग्रन्थियों को सुलझाने के लिए ऐतिहासिक घटनाओं एवं तथ्यों का गहन अध्ययन ही नहीं करते थे, वरन् उनके मर्म का उद्घाटन करने में भी आनन्द लेते थे। उनके नाटक इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं। 'स्कन्दगुप्त', 'चन्द्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' आदि सभी ऐतिहासिक नाटकों में भारत के अतीत इतिहास का ही प्रतिफलन हुआ है। इन नाटकों में इतिहास का आधार सांस्कृतिक संघर्ष है। इसका कारण यह है कि 'प्रसाद' संस्कृति, सभ्यता, धर्म, नीति-दर्शन और विचारधारा के अवगाहन द्वारा ही इतिवृत्त को पल्लवित करने के पक्षपाती थे। घटनाओं का स्थूल रूप उन्हें कभी आकृष्ट नहीं कर सका।

शील-स्वभाव—'प्रसाद' जी अत्यन्त गम्भीर व सौम्य स्वभाव के थे। वह प्रेमी व रसिक हृदय भी थे, पर कम। वह स्वभाव से बड़े संकोचशील थे। अतः सभा-सोसाइटी में जाना उनके लिए सहज न था। काशी में भी तीन-चार मित्रों को छोड़ वह किसी के यहाँ प्रायः नहीं आते-जाते थे। श्री विनोदशंकर व्यास ने उनकी संकोची-प्रवृत्ति का अच्छा परिचय दिया है। कविता-पाठ के लिए सम्मेलनों में जाना तो उनकी प्रवृत्ति के सर्वथा विपरीत था। दुकान पर बैठे हुए अथवा कभी मित्रों के यहाँ प्रकाशित कविताओं का सामान्यतः पाठ कर लिया करते थे। 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के कोशोत्सव-स्मारक-समारोह के अवसर पर उन्होंने सार्वजनिक रूप से 'नारी और लज्जा' शीर्षक कविता का पाठ किया था।

दिनचर्या—'प्रसाद' जी की दिनचर्या में अध्ययन तथा साहित्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्जन को सबसे प्रथम और प्रमुख स्थान प्राप्त था। वह ब्राह्म-मुहूर्त में शैया त्यागकर साहित्य-सर्जन किया करते थे। तदुपरान्त प्रातःकालीन भ्रमणार्थ वेनिया पार्क में टहलने जाते थे। वहाँ भी प्रेमचन्द आदि साहित्यिकों के साथ वार्तालाप करते रहते। घूमने के बाद घर आकर दूध पीते थे। फिर व्यापार-व्यवसाय का निरीक्षण करते। नित्य निर्यामत रूप से १० बजे के लगभग तेल-मालिश, व्यायाम आदि करते थे। 'प्रसाद' जी की शरीर-सम्पदा उनके नियमित रूप से व्यायाम का ही फल थी। दोपहर को १२ बजे भोजन करके दो घण्टे नित्य विश्राम करते। उस नियम में कभी हेर-फेर न होता था। मध्याह्नोत्तर तीन बजे से पुनः अपने कारोबार की देख-रेख तथा व्यावसायिक पत्रों के उत्तर लिखते। सायंकाल फिर सात बजे के लगभग दुकान पर पहुंचते। वहाँ रात के नौ बजे तक ठहरते। इस बीच दुकान पर साहित्यिक विचार-गोष्ठी भी जमती। अनेक मित्र 'प्रसाद' जी के पास आकर विविध विषयों पर बातचीत करते रहते। व्यवसाय और साहित्य का यह संगम काशी में ही देखने में आता था। मित्र-मण्डली की गपशप समाप्त होने पर 'प्रसाद' जी लगभग १० बजे रात्रि में घर पहुंचते और भोजन से निवृत्त होकर सो जाते थे। ऐसी थी उनकी दिनचर्या !

विनोद और रुचि – 'प्रसाद' जी के विनोद के प्रमुख साधन थे – बागबानी, शतरंज, कविता-पाठ और कभी-कभी चलचित्र-दर्शन। विशाल विश्व ही उनकी खुली पुस्तक थी, जिसका वे सतत अध्ययन करते रहते थे। सामान्यतः जगत् के भौतिक रूप (Materialistic form) में लिप्त रहना उन्हें विशेष प्रिय न था।

कवि-हृदय होने के साथ सौन्दर्य-प्रेम उन्हें विरासत में मिला था। ललित-कलाओं में उनकी गहरी रुचि थी। संगीत के प्रति उनकी अभिरुचि का प्रमाण यह है कि वह गान-विद्या का आनन्द प्राप्त करने काशी की सुप्रसिद्ध गायिकाओं के यहाँ भी जाते रहते थे। वे काशी की प्रसिद्ध वेश्या सिद्धेश्वरी के यहाँ प्रायः अपनी मित्र-मण्डली के साथ जाया करते थे। प्रकृति की मनोरम छटा को निहारने के लिए वह सारनाथ घूमने जाते थे। सारनाथ में मूर्तियों का निरीक्षण करते हुए घण्टों बिता देते थे। प्राचीन भग्नावशेषों को देखकर उनके अन्तर्मन में वे दृश्य साकार हो जाते, जिनकी स्मृति उन ध्वंसावशेषों में सन्निहित है। वसुधा के अंचल पर प्रकृति के जो रमणीय दृश्य बिखरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़े हैं, उनमें उस स्रष्टा की लीला और विलास को देखना ही कवि 'प्रसाद' को अभीष्ट था—

वसुधा के अञ्चल पर
यह क्या कन-कन सा गया बिखर ?
जल शिशु की चंचल क्रीड़ा-सा,
जैसे सरसिज दल पर ।

— लहर

प्रकृति-प्रेम का बीज-वपन तो उनमें शैशवावस्था में की गयी एक यात्रा से ही हो गया था, किन्तु उसके बाद उन्होंने प्रकृति के मर्म को समझने में ही अधिक समय लगाया । उनके प्रकृति-प्रेम के विषय में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का कथन है—

'अंग्रेज कवि वर्ड्सवर्थ (Wordsworth) की भाँति प्रकृति के प्रति उनका सिद्ध तादात्म्य नहीं दीख पड़ता । प्रत्येक पुष्प से उन्हें वह प्रीति नहीं, जो वर्ड्सवर्थ ने व्यक्त की थी । प्रत्येक पर्वत, प्रत्येक घाटी उनकी आत्मीय नहीं । वह प्रत्येक पक्षी को प्यार नहीं करते । उनका प्रेम रमणीयता से है, प्रकृति से नहीं । वह सुन्दरता में रमणीयता देखते हैं । इस सुन्दरता के सम्बन्ध में उनकी भावना 'रति' भी है और 'जिज्ञासा' भी । 'रति' उनका हृदय-पक्ष है और 'जिज्ञासा' उनका मस्तिष्क पक्ष !'

श्री विनोदशंकर व्यास ने भी "प्रसाद का जीवन और साहित्य" पुस्तक में 'प्रसाद' जी के सौन्दर्य एवं कला-प्रेम का अच्छा विवरण दिया है ।

खान-पान में 'प्रसाद' जी को निरामिष आहार ही प्रिय था । वह मांस-मदिरा से दूर रहकर सात्विक किन्तु पौष्टिक भोजन पसंद करते थे । वे स्वयं भी सुन्दर भोजन बना लेते थे । गोभी, आलू, मटर, भिण्डी आदि बनाने में सिद्धहस्त थे । यदा-कदा वह अपने मित्रों के साथ बाग-बगीचे में घूमने चले जाते और वहाँ स्वयं खाना बनाकर सबको खिलाते थे । मित्र 'प्रसाद' जी के भोजन की प्रशंसा करते अघाते नहीं थे ।

सात्विक वृति का जीवन व्यतीत करने के कारण 'प्रसाद' जी का शील-सदाचार भी बहुत उच्च कोटि का था । अपनी हानि उठाकर भी वे दूसरों के हित-सम्पादन में सदैव तत्पर रहते थे । जिस प्रकार काव्य में ममता, करुणा और स्नेह उनके प्रिय विषय थे, उसी प्रकार जीवन में भी मानवता से परिपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्नेह, ममता, अहिंसा, करुणा और दया-भाव चिर सहचर थे। आर्थिक प्रलोभनों से उन्होंने सदैव अपने आपको दूर रखा। सात्विकता उनके चरित्र में कूट-कूट कर भरी थी।

'प्रसाद' के चरित्र का एक अन्य गुण है—'मनमौजीपन। वह खेल-तमाशे व मेलों में बड़ा आनन्द लेते थे। काशी में होली के पुनीत-पर्व पर राम, कृष्ण आदि का वेश बनाकर गाती हुई मण्डलियों का आनन्द स्थान-स्थान पर लिया करते थे। रंगभरी एकादशी के दिन वह विश्वनाथ के मन्दिर में शृंगार देखने के लिए भी जाया करते थे। नौका-विहार उन्हें रुचिकर था। कभी-कभी भांग-ठंडाई भी पी लेते थे।

मित्र—प्रसाद जी के अन्तरङ्ग मित्रों में रायकृष्णदास, विनोशंकर व्यास तथा 'उग्र' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जहाँ कहीं भी इनकी गोष्ठी आयोजित होती थी, ये तीनों मित्र अवश्य रहते थे। अन्य मित्रों में सर्वश्री मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला,' रामचन्द्र वर्मा, जैनेन्द्रकुमार, प्रेमचन्द्र, महादेवी वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं। पण्डित रामचन्द्र शुक्ल, लाला भगवानदीन, अयोध्यासिंह उपाध्याय आदि से वे 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' जाने पर मिल लिया करते थे। इसके अतिरिक्त आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, बेनीपुरी, सुमन, बेढब बनारसी, वाचस्पति पाठक आदि से भी उनकी अच्छी मित्रता थी।

देहावसान—यह हिन्दी-जगत् का दुर्भाग्य ही समझा जायगा कि 'प्रसाद' जैसा कलाकार सुन्दर स्वास्थ्य के होते हुए भी दीर्घायु प्राप्त न कर सका। संवत् १९९३ में 'प्रसाद' जी को जाड़ा-बुखार हुआ। प्रारम्भ से इस ज्वर को साधारण मलेरिया समझा गया और उसी ज्वर की चिकित्सा भी होती रही, किन्तु शीत ऋतु से जब हल्की-हल्की खाँसी भी प्रारम्भ हुई, तो मित्रों को कुछ चिन्ता हुई। दुर्भाग्य से उस समय भी रोग का समुचित निदान न हो सका। उसी वर्ष शीत-ऋतु में 'प्रसाद' जी लखनऊ-प्रदर्शनी देखने गये और वहाँ से लौटने पर फिर वात-रोग ने जब पकड़ा तो ठीक-ठीक निदान करने पर तपेदिक (राजयक्ष्मा) का पता चला; संवत् १९९४ के प्रारम्भ में चिकित्सा की व्यवस्था में परिवर्तन होने पर कुछ स्वस्थ हुए, किन्तु बरसात आते ही फिर रोगग्रस्त हो गये और इस बार उनका स्वास्थ्य निरन्तर गिरता ही गया। चिकित्सकों का आग्रह था कि 'प्रसाद' जी किसी पर्वतीय स्थान पर चले जायं तो स्वास्थ्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधार सम्भव है किन्तु 'प्रसाद' जी ने बाहर जाना व्यर्थ समझते हुए काशी न छोड़ी। ऐसी रुग्णावस्था में भी 'प्रसाद' जी ने अपनी साहित्य-साधना न छोड़ी। उन्होंने 'इरावती' उपन्यास प्रारम्भ कर रखा था। एक अन्य उपन्यास की रूपरेखा उनके मस्तिष्क में थी और 'कामायनी' के समान ही एक अन्य महाकाव्य - 'इन्द्र' लिखने की उनकी तीव्र इच्छा थी। कहते हैं 'कामायनी' तो उसी 'इन्द्र' महाकाव्य का एक अंश है, जिसे 'प्रसाद' जी विशाल रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे। किन्तु 'मेरे मन कछु और है कर्त्ता के कछु और' के अनुसार 'प्रसाद' जी की समस्त योजनाएं विधाता के विधान के आगे कहाँ सफल हो सकती थीं। यह हिन्दी का ही नहीं, विश्व-साहित्य का भी दुर्भाग्य है कि एक महाकवि अपनी वह महान् कृति न दे सका, जिसके सम्बन्ध में वह बहुत दिन से चिंतन-मनन करता आ रहा था। मेनेंडर (Menander) ने लिखा है—

'He whom God loves, dies young' (जो यहाँ प्रिय होता है, वह ईश्वर को भी प्रिय होताहै।) यही 'प्रसाद' जी के विषय में घटित हुआ। संवत् १९९४ की कार्तिक शुक्ल एकादशी को ४६-४७ वर्ष की अल्प आयु में ही उन्होंने अपनी इहलोक लीला समाप्त की। हिन्दी का रवीन्द्र, शिव का परम उपासक, अमर काव्य-प्रणेता इस नश्वर संसार से सदा के लिए प्रस्थान कर गया।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'प्रसाद' जी के महाप्रयाण पर लिखा था—

'जयशंकर' कहते-कहते ही, अब भी काशी आवेंगे।
किन्तु 'प्रसाद' न विश्वनाथ का, मूर्त्तिमान हम पावेंगे॥
तात भस्म भी तेरे तनु की, हिन्दी की विभूति होगी।
पर हम जो हँसते आते थे, रोते रोते जावेंगे॥

इसके अतिरिक्त महाकवि निराला द्वारा 'प्रसाद' जी के व्यक्तित्व एवं चरित्र के सम्बन्ध में कही गई निम्नलिखित पंक्तियाँ भी विशेष रूप से अवलोकनीय हैं—

'किया मूक को मुखर, लिया कुछ दिया अधिकतर।
पिया गरल पर किया जाति, साहित्य को अमर॥

प्रश्न २—'प्रसाद' काव्य की पृष्ट-भूमि' पर एक सारगर्भित लेख लिखिए।

उत्तर—काव्य-रचना में परम्परा और पृष्ठभूमि का विशेष योग रहता है। कवि पर एक ओर परम्पराओं का प्रभाव पड़ता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो दूसरी ओर देश-कालगत परिस्थितियों का। कवि चेष्टा करने पर भी परम्पराओं एवं परिस्थितियों से बच नहीं सकता। काव्य में उनका स्वरूप किसी-न-किसी प्रकार आभासित होता रहता है और कभी-कभी तो कवियों की कृतियाँ युग का सम्पूर्ण प्रतिनिधित्व करती हैं। यदि हम कविकुल-गुरु कालिदास की रचनाओं पर दृष्टिपात करें, तो विदित होगा कि उनकी रचनाओं में भारत के स्वर्णयुग (Golden-Age) का समस्त वैभव प्रस्तुत किया गया है। जर्मन लेखक गेटे के व्यक्तित्व का निर्माण संघर्षशील सामाजिक परिस्थितियों में ही हुआ था। इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक अवस्था तथा साहित्यिक परम्परा दोनों ही काव्य की पृष्ठभूमि का कार्य करते हैं। अपने अतीत से प्रेरणा लेता हुआ कवि युग के अनुकूल नवनिर्माण में प्रयत्नशील होता है। यदि परम्परावादी में अनुसरण की भावना अधिक रहती है, तो स्वच्छन्दतावादी (Romantic) कवि में विद्रोह की भावना, किन्तु दोनों पर ही युग की छाया रहती है। जान लिविंग्स्टन लोस (John Livingston Lowes) का निम्न कथन इस विषय में विशेष रूप से द्रष्टव्य है—

'Art moves from stage to stage·····by two opposing paths; the way of constructive acceptance, and the way of revolt.'

अर्थात् कला क्रमशः क्रियाशील स्वीकृति और विद्रोह के दो विरोधी मार्गों पर चलती है।

जहाँ तक 'प्रसाद' जी का सम्बन्ध है, उनसे पूर्व काव्य की एक दीर्घ परम्परा मिलती है। हिन्दी में सूर, तुलसी, जायसी, कबीर आदि के आदर्श उनके समक्ष थे और पाश्चात्य-काव्य में होमर, दान्ते (Dante), शेक्सपियर, गेटे (Goethe) आदि की परम्परा। किन्तु इतना निश्चित है कि उन्होंने काव्य की किसी परम्परा अथवा परिपाटी विशेष का अनुसरण नहीं किया, फिर भी उन पर काव्य की उस परम्परा की छाप अवश्य है, जो रस को काव्य की आत्मा मानकर चलती है। वस्तुतः आरम्भ में उन्होंने अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय कलाकारों से प्रेरणा ग्रहण की, किन्तु अन्त में उन्होंने एक महान् कलाकार की भाँति अपनी स्वतंत्र प्रतिभा का परिचय दिया। उन्होंने अपने युग और देश की समस्त चेतना को काव्य के माध्यम से प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने की चेष्टा की। हिन्दी-साहित्य में उनका प्रवेश एक विद्रोही कलाकार के रूप में नहीं हुआ। उन्होंने प्रचलित परम्परा के प्रति न तो कोई आन्दोलन चलाया और न उसका विरोध किया। उन्होंने तो अपनी रचनाओं से काव्य की सच्ची परम्परा को विकसित किया। उनके काव्य की मूल प्रवृत्तियाँ एक स्वच्छन्दतावादी कलाकार तथा दार्शनिक, चिन्तनशील कवि के संयोग से निर्मित हैं। उनके काव्य का मूल स्वर राष्ट्रीय चेतना से अनुप्रणित है। कविता और दार्शनिकता का मणि-कांचन संयोग उनके साहित्य की निजी विशिष्टता है।

उन्नीसवीं शताब्दी का अन्तिम चरण—'प्रसाद' का जन्म उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में हुआ था। उस समय राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, रामकृष्ण परमहंस जैसे नेता समाजसुधार के अनेक आन्दोलनों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। इन नेताओं के आन्दोलनों का मुख्य उद्देश्य था—समाज-सेवा का प्रचार करना। १८५७ के बाद तो भारत में अनेक सामाजिक-सुधार-आन्दोलन उठ खड़े हुए, जिन्होंने देश में नयी जागृति और चेतना को प्रसारित करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

इन आन्दोलनों के मूल में देश-प्रेम की भावना कार्य कर रही थी। 'प्रसाद' के व्यक्तित्व-निर्माण में इन आन्दोलनों का विशेष स्थान है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक भारत में चेतना की एक लहर-सी दौड़ चुकी थी। देश के बड़े-बड़े नेता और लेखक सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों में कार्य कर रहे थे। उनके कार्य के मूल में राष्ट्रीयता की प्रबल भावना निहित थी। वे लोग देश का सामाजिक स्तर उन्नत करना चाहते थे। फलतः उन्होंने अपने गौरवपूर्ण अतीत से बहुत अधिक प्रेरणा ग्रहण की।

भारतेन्दु-युग—उन्नीसवी शताब्दी के आन्दोलनों भरे वातावरण में हिन्दी-साहित्य की नवीन परम्परा का विकास हुआ। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र साहित्य-क्षेत्र में अवतरित हुए। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से अपने युग का प्रतिनिधित्व किया। देश में व्याप्त अनेक कुरीतियों एवं मिथ्याडम्बरों के सुधार का उन्होंने प्रयत्न किया। सामाजिक सुधारों के लिए उन्होंने प्रमुखतः नाटकों का आश्रय लिया, किन्तु कविता में भी उन्होंने इन भावनाओं को यथास्थान अभिव्यक्त किया। 'भारत-दुर्दशा' नाटक में भारत की दीन-हीन दशा के विषय में उन्होंने कहा था—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवहु, मिलकै, रोवहु सब भारत भाई,
हा, हा, भारत-दुर्दशा न देखी जाई।

इसी प्रकार अन्यत्र अंग्रेजों का अनुग्रह स्वीकार करते हुए भी उन्होंने कहा—

'पै धन विदेश चलि जात, यहै अति ख्वारी।'

उन्होंने अनेक सामाजिक कुरीतियों एवं आडम्बरों पर कड़े व्यंग्य किये। राष्ट्र-प्रेम की उदात्त भावना उनके चरित्र में कूट-कूट कर भरी थी। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में--

'नवीन धारा के बीच भारतेन्दु की वाणी का सबसे ऊँचा स्वर देशभक्ति का था। 'नीलदेवी', 'भारत-दुर्दशा' आदि नाटकों के भीतर आयी हुई कविताओं में देश-दशा की जो मार्मिक व्यंजना है, वह तो है ही, बहुत-सी स्वतन्त्र कविताएं भी उन्होंने लिखीं, जिनमें कहीं देश की अतीत-गौरव-गाथा का गर्व, कहीं वर्तमान अधोगति की क्षोभभरी वेदना, कहीं भविष्य की भावना से जगी हुई चिन्ता इत्यादि अनेक पुनीत भावों का संचार पाया जाता है।'

शुक्ल जी के उपर्युक्त शब्दों द्वारा स्पष्ट है कि भारतेन्दु बहुमुखी व्यक्तित्व को लिए हुए थे। आधुनिक हिन्दी-काव्य की राष्ट्रीय परम्परा को जन्म देने में उनका निश्चय ही बहुत बड़ा योगदान है। भारतेन्दु के बहुमुखी व्यक्तित्व ने स्वयं 'प्रसाद' जी को बहुत प्रभावित किया और उन्होंने उनसे काफी प्रेरणा ली।

बीसवीं शताब्दी का आरम्भ—'प्रसाद' का वास्तविक कृतित्व बीसवीं शताब्दी में ही आरम्भ होता है। राजनीतिक-क्षेत्र में उस समय गोखले, महात्मा गांधी, महामना मालवीय तथा मोतीलाल नेहरू आदि अनेक विचारशील नेता देश की बागडोर हाथ में लिए सामने आये। राष्ट्रीय भावना का प्रसार जोरों पर था। सामाजिक-सुधार का कार्य भी आर्य-समाज, थियासाफिकल सोसाइटी, रामकृष्ण मिशन आदि के द्वारा हो रहा था। शिक्षा का भी प्रसार जोरों से हो रहा था। साहित्य-क्षेत्र में रवीन्द्र का आगमन हुआ, जो एक नयी दिशा का सूचक था। हिन्दी-साहित्य के अनेक कलाकारों पर रवीन्द्र का प्रभाव पड़ा। हिन्दी-साहित्य की विचारधारा का प्रतिनिधित्व उस युग में प्रकाशित 'सरस्वती' पत्रिका द्वारा होता था। कुछ समय पश्चात् छायावाद-युग का आरम्भ हुआ, जिसका प्रतिनिधित्व 'इन्दु' ने किया। प्रसाद-काव्य पर एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर रवीन्द्र का प्रभाव पड़ा और दूसरी ओर युगीन-परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों का।

द्विवेदी-युग—राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र से द्विवेदी-युग के काव्य ने अतीत गौरव, राष्ट्रीय एवं मानवीय भावनाओं को ग्रहण किया। इस युग की समूची साहित्यिक चेतना के सूत्रधार स्वनामधन्य महावीरप्रसाद द्विवेदी थे। इसके अतिरिक्त श्री मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', पं० रामचरित उपाध्याय आदि कवियों ने भी इस युग के काव्य में विशेष योगदान किया। इन कवियों ने अपने काव्य-ग्रन्थों के माध्यम से अपनी राष्ट्रीय भावना का प्रकाशन किया। लोचनप्रसाद 'पाण्डेय' ने सरल भाषा द्वारा मानव और प्रकृति के तादात्म्य पर प्रकाश डाला। अन्य अनेक कवियों ने भी खड़ी बोली में कविता की। उन सभी पर आचार्य द्विवेदी का प्रभाव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पड़ा।

इस युग के काव्य की विशेषता यह है कि उसमें लोक-सेवा, विश्व-प्रेम, लोक-रक्षा, कर्त्तव्य, त्याग, नेतृत्व, संघटन और उन्नयन (Sublimation) आदि की अनेक भावनाएँ मिलती हैं और ये भावनाएँ भारत के अतीत में भी मिलती हैं। इस प्रकार इस युग के कवि ने अपने अतीत की, राम और कृष्ण आदि की, कथाओं में विविध नवीन तत्त्वों का समावेश करके उनकी बुद्धि-सम्मत व्याख्या प्रस्तुत की। कवि ने अतीत के गौरव का स्मरण दिलाकर वर्तमान में निर्माण का उत्साह भरना चाहा। इस युगके कवि ने अतीत के कला, साहित्य, दर्शन, विज्ञान और समृद्धि, सबका विशद गान किया और वह पुकार उठा —

'संसार को पहले हमीं ने ज्ञान-शिक्षा दान की।'

तथा

वह पुण्यभूमि प्रसिद्ध है, इसके निवासी आर्य हैं।
विद्या, कला-कौशल सभी के जो प्रथम आचार्य हैं॥
हैं रह गए यद्यपि हमारे, गीत आज रहे-सहे।
पर दूसरों के वचन भी साक्षी हमारे हो रहे।

उपर्युक्त कथनों से एक बात स्पष्ट है कि कवि हिन्दू-पुनरुत्थान (Renaissance) के लिए अधिक सचिंत है, पर यह स्मरण रखना होगा कि उसे अन्य जातियों से विद्वेष नहीं है। उन्होंने पाश्चात्य-संस्कृति के कुप्रभाव को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूर करने के लिए, हिन्दुओं में जातीय अभिमान को जगाने के लिए अपनी संस्कृति की उच्चता का विश्वास दृढ़ किया और अपनी सांस्कृतिक विशिष्टता बनाये रखने की प्रेरणा दी।

भाषा-संस्कार द्विवेदी-युग की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना है। खड़ी-बोली-आन्दोलन में खड़ी बोली के समर्थकों को सफलता मिली। उन्होंने ब्रज-भाषा को काव्य-क्षेत्र से अपदस्थ करके साहित्य के दोनों क्षेत्रों—गद्य और पद्य में खड़ी बोली का अबाध प्रयोग किया तथा उसकी काव्योपयुक्तता सिद्ध कर दी। परन्तु अभी तक उसके रूप के परिष्कार तथा संस्कार की आवश्यकता शेष थी, जिसे द्विवेदी जी तथा उनके सहयोगी 'गुप्त' एवं 'हरिऔध' आदि ने पूरा किया। आचार्य द्विवेदी ने उर्दू और अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों को हिन्दी में लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। खड़ी बोली के व्याकरण सम्मत प्रयोग पर अत्यधिक बल दिया, वाक्य-विन्यास को शुद्ध किया और विभक्तियों के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये। इस प्रकार उन्होंने खड़ी बोली के रूप को स्थिरता प्रदान की, उसमें स्वच्छता और परिपक्वता का समावेश कराया। उस समय से खड़ी बोली कविता की शैली उत्तरोत्तर स्वच्छ, शक्तिशाली एवं अभिव्यक्तिपूर्ण होती गई। स्पष्ट है कि 'प्रसाद' आदि छायावादी कवियों की कविता में मसृणता, कलात्मकता और अभिव्यक्ति क्षमता के लिए बहुत कुछ भूमि द्विवेदी-युग में तैयार हो गई थी।

अँग्रेजी स्वच्छन्दतावाद (Romanticism)--अँग्रेजी साहित्य के स्वच्छन्दतावादी कवियों में कीट्स, शेली, बायरन, वर्ड्सवर्थ आदि प्रमुख हैं। इन कवियों ने अनुभूति की सत्यता और तीव्रता को ही कविता का प्राण माना था। संगीतात्मकता की दृष्टि से इन कवियों का काव्य विशेषतः सम्पन्न है। ये कवि जीवन और कविता दोनों में समान रूप से क्रांति चाहते थे। ये पूर्णतया स्वछन्दतावादी थे। परवर्त्ती गीतिकाव्य-परम्परा उनकी नैसर्गिक स्वर-लहरी से प्रभावित हैं। छायावादी कवियों की काव्य-चेतना पर इन स्वच्छन्दतावादी कवियों का पर्याप्त प्रभाव रहा है। स्वच्छन्दतावादी-काव्य की आधारभूत विशेषताएँ हैं—प्रेम-सौन्दर्य भावना, प्रकृति-प्रेम, रहस्यमयता एवं दार्शनिक चिंतन।

नया युग—बीसवीं शताब्दी के आरम्भ के साथ ही भारत में अरुणोदय की देदीप्यमान रश्मियाँ प्रखर हो रही थीं। राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्रीय आन्दोलनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
891.43081 P88L 7081

का प्राधान्य था। महात्मा गांधी ने देश की बागडोर अपने हाथों में ले ली थी। एक ओर उनके सत्य, अहिंसा, असहयोग एवं सत्याग्रह के अस्त्र देशवासियों को शक्ति प्रदान कर रहे थे और दूसरी ओर हरदयाल, भगतसिंह तथा चन्द्रशेखर आज़ाद जैसे क्रांतिकारियों (Revolutionists) का दल जीवन देकर स्वतन्त्रता के वरण में प्रयत्नवान था। राजनीतिक दृष्टि से यह गांधी-युग था। अपने सत्य-अहिंसा के अमोघ अस्त्र द्वारा उन्होंने विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रसार किया यूरोप के मानवतावाद ने भी भारतीय-आन्दोलन को प्रभावित किया। फलतः अछूतोद्धार का प्रयत्न होने लगा, शिक्षा को महत्त्व मिलने लगा तथा धर्म की व्यापक परिभाषा की गई। जन-सामान्य को एक नैतिक-शक्ति प्राप्त हो रही थी।

इस राजनीतिक और सामाजिक उत्तेजना का प्रभाव साहित्य की गति-विधि पर पड़ना भी सहज-स्वाभाविक था। बंगाल में बंकिम अपने प्रयाण-गीत गा रहे थे। साथ ही रवीन्द्र भी अपनी अप्रतिम प्रतिभा लेकर साहित्य-क्षेत्र में अवतरित हुए। उनमें एक साथ भारतीय-परम्परा, संस्कृति, राष्ट्रीयता और मानवीयता का संगम था। उन्होंने भारतीय अतीत से प्रेरणा ग्रहण की। उनके गीतों में स्वच्छन्दतावाद की गीतात्मकता, कवि की तन्मयता, भारतीय दर्शन, मानवीयता, रहस्य-भावना आदि एक साथ समाविष्ट हो गये थे। 'गीतांजलि' जैसी रचना पर नोबेल पुरस्कार (Nobel-Prize) मिलते ही जनता ने एक स्वर से उनका गान किया था। इधर हिन्दी-कविता के क्षेत्र में द्विवेदी-युग के साहित्यकार कार्य कर ही रहे थे। अँग्रेजी ग्रन्थों के अनुवाद से नयी बातें प्रकाश में आ रही थीं। अँग्रेजी कवियों का स्वच्छन्दतावाद भी भारतीय कवियों को एक नवीन प्रेरणा दे रहा था। भारतीय दर्शन और अतीत कवियों का प्रिय विषय बनने लगा।

कवि भारतीय अद्वैतवाद तथा पाश्चात्य मानवतावाद के द्वारा शाश्वत भावना को काव्य का आधार बनाने में प्रयत्नशील थे। एक ओर भारतीय दर्शन को नवीन प्रकाश में देखने का प्रयास चल रहा था, तो दूसरी ओर पाश्चात्य चिन्तन-प्रणालियों को भी महत्व दिया जाने लगा। मनोविज्ञान की भी व्याख्या आवश्यक-सी हो गई थी। नारी के प्रति एक विशेष आदर एवं सम्मान रखा जाने लगा। इस प्रकार साहित्य को एक नवीन दिशा एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यापक क्षेत्र प्राप्त हो रहा था । रवीन्द्र-काव्य इस बात का स्पष्ट प्रमाण है।

'प्रसाद' का प्रवेश—हिन्दी-साहित्य में 'प्रसाद' का प्रवेश ऐसी ही परिस्थितियों में हुआ। 'प्रसाद' अपनी बहुमुखी प्रतिभा लेकर साहित्यक्षेत्र में अवतरित हुए। छायावादी काव्य के वह सही अर्थों में प्रवर्तक हैं। हिन्दी-साहित्य को उनकी देन अत्यन्त उच्चकोटि की है। वह न केवल कवि-रूप में ही सफल रहे, वरन् नाटककार, उपन्यासकार, कहानीकार तथा निबन्धकार के रूप में भी अत्यन्त सफल रहे। काव्य के क्षेत्र में उन्होंने हिन्दी-जगत् को 'कामायनी', 'आँसू', 'लहर' तथा 'झरना' जैसे अमूल्य काव्य-रत्न प्रदान किये। नाटक के क्षेत्र में उन्होंने 'स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य', 'चन्द्रगुप्त मौर्य', 'ध्रुवस्वामिनी', 'राज्यश्री' तथा 'अजात शत्रु' जैसे उच्चकोटि के ऐतिहासिक नाटक माँ-भारती को समर्पित किये। इन नाटकों में एक ओर उनकी नाटकीय-शक्ति का परिचय मिलता है, तो दूसरी ओर उनकी अनुसन्धानपरक ऐतिहासिक दृष्टि का। उनके नाटकों की भूमिकाओं में व्यक्त भाव अनेक ऐतिहासिक तथ्यों की ओर संकेत करते हैं। इसके अतिरिक्त उनके नाटकों में उनका कवि-हृदय भी अत्यन्त मुखर है। जहाँ तक उपन्यास-क्षेत्र का सम्बन्ध है, उन्होंने केवल तीन उपन्यास लिखे—१. कंकाल, २. तितली और ३. इरावती (अपूर्ण)। 'आकाशदीप', 'आँधी', 'प्रतिध्वनि' तथा 'इन्द्रजाल' उनके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह हैं। निबन्धकार की दृष्टि से उनकी 'काव्य-कला तथा अन्य निबन्ध' नामक पुस्तक उल्लेखनीय है। इस प्रकार कविता, नाटक, उपन्यास, निबन्ध तथा कहानी सभी क्षेत्रों में, अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा से कार्य करने के कारण उन्होंने अपने समय की समस्त सांस्कृतिक-चेतना का रसात्मक संस्करण प्रस्तुत कर दिया है।

'प्रसाद' जी के साहित्य में वे अनुभूतियाँ मिलती हैं, जिनका सम्बन्ध परम्परा से है। द्विवेदी-युग की इतिवृत्तात्मकता और जातीयता के विरोध में जो छायावाद उठ खड़ा हुआ था, उसका चरम विकास कवि 'प्रसाद' में स्पष्ट है। उनमें कवि की अनुभूति की सच्चाई, भावों की गहनता, राष्ट्रीय प्रेम की भावना एवं सांस्कृतिक मोह आदि सब कुछ है। भारतीय इतिहास के स्वर्णयुग को लेकर उन्होंने अपनी कल्पना द्वारा उनमें नवीन जीवन भर दिया। रवीन्द्र के आदर्श सदैव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके समक्ष रहे। उन पर जर्मन विद्वान् गेटे (Goethe) की विचारधारा का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इसके अतिरिक्त, स्वच्छन्दतावादी काव्य के भी अधिकांश तत्त्व उनके काव्य में मिलते हैं, किन्तु यह निश्चित है कि उनके साहित्य की परम्परा मूलतः भारतीय है। उपनिषदों का अद्वैतवाद, शैव-दर्शन की प्रत्यभिज्ञा तथा बौद्धों की करुणा एक साथ उनके काव्य में प्रस्फुटित हुए मिलते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'प्रसाद' अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं के होते हुए भी छायावादीयुग के कवि हैं। उनके सम्बन्ध में कहे गये डॉ० प्रेमशंकर के अधोलिखित शब्द विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं—

'कवि 'प्रसाद' ने परम्परा का अनुकरण न करते हुए भी उसमें योग दिया। उन्होंने स्वयं प्राचीन का एक नवीन संस्करण ही प्रस्तुत किया। 'कामायनी' विश्व के महाकाव्यों में एक आगामी चरण है। 'आँसू' विरह काव्यों में 'मेघदूत' के समीप रखा जा सकता है। दीर्घ काव्य-परम्परा के होते हुए भी जिस समय कवि ने पदार्पण किया, उसके सम्मुख एक विचित्र समस्या थी। उसने महान् कलाकारों की भाँति अपने जीवन-पथ का निर्माण किया। 'प्रसाद' प्राचीन परिपाटी और स्वच्छन्दतावाद के संगम रूप में हिन्दी में प्रतिष्ठित हैं। युग के कवि-रूप में उन्होंने आसपास बिखरी हुई सामग्री का उपयोग किया। छायावाद की समस्त विभूति उनके काव्य में प्रस्फुटित हुई है।'

प्रश्न ३—'प्रसाद' जी के काव्य का क्रम-विकास स्पष्ट कीजिए।

अथवा

'प्रसाद' जी की काव्य-कृतियों का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर—'प्रसाद' जी ने जिस युग में साहित्य-क्षेत्र में पदार्पण किया, वह काल हिन्दी-साहित्य के इतिहास में 'द्विवेदी-युग' के नाम से प्रख्यात है। पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' के सम्पादन द्वारा हिन्दी में भाषा-विषयक एक नवीन क्रान्ति को जन्म दिया था। ब्रजभाषा-कविता का प्रबल शब्दों में विरोध किया जा रहा था। भाषा सम्बन्धी अनेक सुधारों एवं परिष्कारों का प्रयत्न स्वयं द्विवेदी जी तथा उनके मण्डल के अन्य कवि कर रहे थे। किन्तु फिर भी कवियों का एक समुदाय ऐसा था, जो अभी तक ब्रजभाषा की रीतिकालीन परम्पराओं के प्रभाव में ही काव्य-रचना करने में आनन्दानुभव करता था। ऐसे कवियों का सम्मेलन काशी में होता था और काशी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब तक खड़ी बोली का बोलबाला न था। 'प्रसाद' जी का हिन्दी-कविता से परिचय सर्व प्रथम ब्रज-अवधी के माध्यम से ही हुआ था। शैशव में ब्रजभाषा के भक्ति एवं रीतिकालीन कवियों की मधुर कविताएं ही उन्होंने पढ़ीं और याद की थीं। नौ वर्ष की अल्पायु में ही इन्होंने एक सवैया बनाकर अपने गुरु श्री मोहिनीलाल गुप्त 'रससिहा' जी को सुनाया था, जिसे सुनकर विस्मय-विमुग्ध होकर उन्होंने इनको 'महाकवि' होने का आशीर्वाद दिया था। सम्भवतः उनके गुरु का आशीर्वाद ही बाद में उनकी कृतियों में साकार हो उठा। उनका आरम्भिक काव्य-सृजन ब्रजभाषा में ही प्रस्फुटित है। तत्कालीन वातावरण में ब्रजभाषा की माधुरी कवि-जगत् को आत्मविभोर किये हुए थी। फलतः 'प्रसाद' जी के लिए ब्रजभाषा के माधुर्य एवं सारस्य को त्याग कर खड़ी बोली के नीरस एवं इतिवृत्तात्मक रूप को ग्रहण करना सम्भव नहीं था। इस प्रकार उनकी काव्य-साधना का प्रारम्भिक स्वर ब्रजभाषा में व्यक्त हुआ। यह बात दूसरी है कि उनकी प्रौढ़ काव्य-कृतियाँ विशुद्ध खड़ी बोली में ही लिखी गईं। संक्षेप में उनकी काव्य-कृतियों का विकास-क्रम की दृष्टि से मूल्यांकन इस प्रकार है—

१. **चित्राधार**—'चित्राधार' 'प्रसाद' जी का प्रथम कविता-संग्रह है, जिसमें उनकी प्रतिभा का परिचय मिलता है। यह संग्रह सं० १९७५ में प्रकाशित किया गया था। इसके दो संस्करण उपलब्ध होते हैं—१. खड़ी बोली और ब्रजभाषा दोनों से सम्बन्धित, २. केवल ब्रजभाषा से सम्बन्धित। इस रचना में भाव की दृष्टि से अनेक नवीन प्रयोग उपलब्ध होते हैं। द्विवेदी-युग की शुष्कता और रीतिकालीन मर्यादाहीन शृंगारिकता के बीच नैसर्गिक सौन्दर्य की एक क्षीण-रेखा इस संग्रह की कविताओं में मिल जाती है। संग्रह में आद्यन्त कवि का हृदय मुखरित है। स्थूलतः इस संग्रह की कविताओं को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है—१. आख्यानक कविताएं और २. स्फुट कविताएं। आख्यानक कविताओं में कवि की प्रबन्ध-शक्ति का अच्छा आभास मिल जाता है। स्फुट कविताओं में मुख्य रूप से प्रणय एवं भक्ति-भावना की व्यंजना की गई है। 'चित्राधार' में लगभग चौदह पद ऐसे हैं, जिनमें विनय, प्रेम, सगुणोपासना, दैन्य तथा करुणा आदि से सम्बद्ध भाव व्यक्त किये गये हैं। निम्नलिखित पदों में प्रियतम द्वारा परमात्मा की स्नेह-दृष्टि की कामना कितने मार्मिक शब्दों में की गयी है—

(क) **आज तो नीके नेह निहारो !**
पावस के घन तिमिर भार में बीती बात बिसारो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चमकि गयो जो चपला सम यह प्रियतम विरह तिहारो।
... ...
हरित करो यह मरुसम मो मन, देहु 'प्रसाद' तिहारो।

(ख) मधुप ज्यो कुंज देखि मडराये।
वैसेहि क्यों न होत मधुकर चरण-कमल चित लाये।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने 'चित्राधार' के सम्बन्ध में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं —

'श्री जयशंकर 'प्रसाद' के 'चित्राधार' में उनकी विशिष्ट प्रकार की दार्शनिक अभिरुचि के कारण प्रकृति-प्रेम एक विशिष्ट प्रकार से व्यक्त हुआ है। अँग्रेज कवि वर्ड्सवर्थ की भाँति प्रकृति के प्रति उनका निसर्ग-सिद्ध तादात्म्य नहीं दीख पड़ता। प्रत्येक पुष्प में उन्हें वह प्रीति नहीं, जो वर्ड्सवर्थ की थी। प्रत्येक पर्वत, प्रत्येक घाटी, उनकी आत्मीय नहीं। वह प्रत्येक पक्षी को प्यार नहीं करते।.....उसमें उनका प्रेम रमणीयता से है, प्रकृति से नहीं। वह सुन्दरता में रमणीयता देखते हैं, सर्वत्र नहीं। इस रमणीयता के सम्बन्ध में उनकी भावना रति की भी है और जिज्ञासा की भी रति उनका हृदय-पक्ष है और जिज्ञासा उनका मस्तिष्क-पक्ष।'

२. **प्रेम-पथिक**—इस काव्य में 'प्रसाद' जी की प्रतिभा का पूर्ण-विकास दृष्टिगत होता है। इस काव्य की सर्वप्रथम रचना ब्रजभाषा में हुई थी, किन्तु संवत् १९७० में इसके द्वितीय संस्करण को कवि ने खड़ी बोली में प्रस्तुत किया। प्रथम संस्करण की अपेक्षा द्वितीय संस्करण अधिक आकर्षक एवं नवीन बन पड़ा है। इस काव्य में प्रमुखतः तीन विषय व्यक्त हैं—१. प्रेम, २. योग और ३. प्रकृति। कवि प्रेम के रहस्य से अवगत होना चाहता है। इसके लिए वह एक प्रेम-कथा को आधार बनाता है, जो श्रीधर पाठक द्वारा अनूदित 'एकान्तवासी योगी' से साम्य रखती है। उसने पथिक के मुख से अपना कथ्य व्यक्त किया है। उसने प्रेम को अत्यन्त व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। उसके अनुसार क्षुद्र वासना का उबाल या त्वचा का स्पर्शमात्र प्रेम नहीं, वरन प्रेम तो जीवन की संजीवनी है, विश्व की मूल प्रेरणा है, आत्मा का रस है और साक्षात् ईश्वर है। प्रेम ही आत्मा को राग-द्वेष के बन्धनों से मुक्त कर सकता है। इस दृष्टि से निम्नलिखित पंक्तियाँ विशेष रूप से अवेक्षणीय हैं—

'पथिक ! प्रेम की राह अनोखी भूल-भूल कर चलना है,
धनी छाँह है जो ऊपर तो नीचे काँटे बिछे हुए,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम-यज्ञ में स्वार्थ और कामना हनन करना होगा,
... ...

इस पथ का उद्देश्य नहीं है श्रान्त भवन में टिक रहना,
किन्तु पहुँचना उस सीमा पर जिसके आगे राह नहीं।"

कलेवर की दृष्टि से लघु होते हुए भी यह काव्य अपनी विषय-वस्तु एवं शिल्प-विधान दोनों दृष्टियों से अत्यन्त सफल बन पड़ा है। इसके महत्व का अंकन करते हुए आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने कहा है—

'बाह्य प्रकृति की रमणीयता के साथ-प्रेम की रमणीयता की यह छोटी-सी आख्यायिका हिन्दी में एक नवीन भावधारा का आगमन सूचित करती है।'

कानन-कुसुम – 'कानन-कुसुम' 'प्रसाद' जी की खड़ी बोली में लिखित कविताओं का प्रथम कविता-संग्रह है। इस संग्रह में कवि की कलागत प्रौढ़ता के आभास के साथ-साथ भावगत सौन्दर्य भी पूर्णतः लक्षित होता है।

३. 'कानक-कुसुम' में दो प्रकार की कविताएँ हैं—विषय-प्रधान एवं भाव-प्रधान। कविताओं में वस्तु-स्थान-वर्णन और ऐतिहासिक-पौराणिक पात्रों या परिस्थितियों को लेकर लिखे गये चरित्रात्मक वर्णन या लघु आख्यान हैं तथा भावना-प्रधान कविताओं (Emotional-Poems) में मानसिक भावों की विवृत्ति (manifestation of mental thoughts) है। दोनों का अपना-अपना सौन्दर्य एवं महत्व है। भावना-प्रधान कविताओं में भावना की स्वाभाविकता, सरलता एवं गम्भीरता मन को द्रवित-प्रेरित करती है। प्रकृति और कल्पना से कवि ने बराबर सहायता ग्रहण की है। मूल रोमाण्टिक जीवन-दृष्टि के कारण कवि ने प्रमुखतः प्रकृति के कोमल पक्ष को ही अपनाया है।

इस संग्रह की भाषा पर्याप्त सशक्त एवं प्रवाहमयी है। वह सर्वत्र विषयानुरूपिणी है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में किया गया है। इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं ब्रजभाषा और उर्दू के शब्दों का भी व्यवहार किया गया है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, सन्देह आदि अलंकारों के कुशल प्रयोग द्वारा भाषा को सुसज्जित किया गया है। कुछ सुन्दर उपमाएँ द्रष्टव्य हैं—

(क) 'प्रेमी के दृग तारा से ये निर्निमेष हैं।'
(ख) 'सब सो रहे, जैसे अभागों के दुखद प्रारब्ध थे।'

४. **करुणालय**—यह 'प्रसाद' जी की एक अत्यन्त लघुकाय काव्य-रचना है, जिसका प्रकाशन संवत् १९६९ के आसपास हुआ था। यह एक दृश्य-काव्य है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मात्रिक छन्द वाली भिन्न तुकान्त कवितामें रचा गया 'गीतिनाट्य' कहलाता है। हिन्दी में 'प्रसाद' जी का यह एक अभिनव प्रयोग था, जिसका बाद में पर्याप्त अनुकरण भी किया गया। इसमें उन्होंने एक पौराणिक प्रसंग को लेकर भारतीय समाज के एक विकृत-जर्जर अंग की गन्दगी को निर्ममता-पूर्वक साफ कर स्वस्थ दृष्टि से जीवन की संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत की है। कथानक के प्रमुख वाहक पात्र महाराजा हरिश्चन्द्र, रोहित, वसिष्ठ एवं विश्वामित्र आदि हैं। संपूर्ण कथानक केवल पाँच छोटे-छोटे दृश्यों में विभक्त है किन्तु गौरव की बात यह है कि लेखक ने छोटे-से कथानक में नाटक के सभी तत्त्वों—चरित्र-चित्रण, संवाद, देशकाल का चित्रण, शैली व उद्देश्य का यथा-स्थान, सुन्दर व प्रभावशाली नियोजन कर दिया है। कथानक का विकास क्रमिक गति से होता है और वह पाठक के मन में आद्यन्त जिज्ञासा (Suspense) बनाये रखने में पर्याप्त समर्थ है। नाटकीय कार्य-व्यापार (Dramatic action) की दृष्टि से भी प्रस्तुत रचना बहुत गतिशील है। सत्य तो यह है कि इसमें काव्यत्व और नाटकत्व दोनों का समन्वित रूप मिलता है।

५. **महाराणा का महत्व**—यह एक बहुत छोटा ऐतिहासिक काव्य है, जिसका प्रकाशन संवत् १९७१ में किया था। यह काव्य काव्य-रूप (Form) की दृष्टि से लेखक द्वारा गीति-रूपक (Opera) की संज्ञा से अभिहित किया गया है। इसमें कवि ने मेवाड़ के परमप्रतापी महाराणा प्रताप का चरित्रांकन किया है। महाराणा ने अपने देश एवं जाति की मान-मर्यादा के लिए किन भीषण संकटों को झेला, किस प्रकार बन-बन की खाक छानी, इस पृष्ठभूमि में कवि का राष्ट्रप्रेम स्पष्ट रूप से मुखरित हुआ है। महाराणा की वीरता, ओज एवं देश-भक्ति की परिचायक निम्नलिखित पंक्तियां विशेष रूप से ध्यान देने योग्य हैं—

सच्चा साधक है, सपूत निज देश का,
मुक्त पवन में पला हुआ वह वीर है।
... ...
तिस पर भी उसके इस हृदय महत्व का,
कैसे मैं वर्णन कर सकता हूँ, प्रभो !

काव्य-विकास की दृष्टि से प्रस्तुत कृति में पर्याप्त प्रौढ़ता है। प्रकृति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रण के भी अनेक सुन्दर उदाहरण इस कृति में यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं। भाषा में ओज, गति एवं धारावाहिकता का तत्त्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान है।

६. **झरना** – 'झरना' काव्य का प्रकाशन संवत् १९७५ में हुआ था। यह काव्य छायावादी काव्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमें कवि यौवन के द्वार पर खड़ा है। जीवन के अनेक झंझावात उसके सामने हैं। वह एक ऐसी आधारभूमि पर आकर खड़ा हो गया है, जहाँ उसे वाह्य-जगत से काव्य-विषय चुनने की आवश्यकता नहीं पड़ती। उसकी व्यक्तिगत अनुभूति और मन की तरंगें ही बरबस फूट पड़ती हैं। यौवन का आवेश उसके साथ है। श्री रामनाथ 'सुमन' के शब्दों में – 'यह कवि की एक वयःसन्धि की रचना है। इसमें कैशोर की आशा और यौवनारम्भ के स्वप्नों की शिथिलता है। यह जीवन की एक गोधूलि की-सी अवस्था की रचना है, जब जीवन का क्षितिज काले मेघों से आछन्न है और यौवन में नींद की खुमारी है।'

कवि का कहना है कि प्रेम की उपलब्धि अत्यन्त कठिन है। उसे प्राप्त करने के लिए सुधा में गरल पीना पड़ता है—

सुधा में मिला दिया क्यों गरल,
पिलाया तुमने कैसा तरल,
माँगा होकर दीन कण्ठ सींचने के लिए,
निर्दय तुमने क्या दिया, सुना था तुम हो सुन्दर सरल।

इतनी वेदनानुभूति करने पर भी कवि को वेदना से प्रेम है। वह चाहता है कि उसका प्रियतम उसे चाहे न मिले, पर उसकी वेदना चिर नवीन बनी रहे—

तुम रहो शीतल हमें जलने दो,
तमाशा देखो हाथ मलने दो,
तुम्हें है शपथ हमारी।

इसके अतिरिक्त कवि अपने और प्रिय के बीच की प्राणों की दूरी भी समाप्त करना चाहता है। वह अनेक अनुनय-विनय से अपने प्रियतम से द्वार खोलने का आग्रह करता है। उसे अधिक कामना नहीं है, केवल पैरों से लिपट कर ही उसकी आकांक्षा की तृप्ति हो जायगी। वह कहता है—

धूल लगी है, पद काँटों से बिंधा हुआ, है दुःख अपार,
किसी तरह से भूला-भटका आ पहुँचा हूं तेरे द्वार।

... ...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैरों ही से लिपटा-लिपटा कर लूंगा निज पद निर्धार,
अब तो छोड़ नहीं सकता हूं पाकर प्राप्य तुम्हारा द्वार।
सु-प्रभात मेरा भी होवे, इस रजनी का दुःख अपार—
मिट जावे जो तुमको देखूँ, खोलो प्रियतम ! खोलो द्वार।

'प्रसाद' के अन्य काव्यों की भाँति इसमें भी प्राकृतिक उपादानों का चारु-चित्रण किया गया है। 'झरना' की भाषा प्रमुखतः खड़ी बोली हिन्दी है, किन्तु कहीं-कहीं ब्रजभाषा के शब्दों का भी आभास मिलता है।

७. **आँसू**—'आँसू' का प्रथम संस्करण संवत् १९८२ मे तथा द्वितीय संस्करण संवत् १९९० में प्रकाशित हुआ। द्वितीय संस्करण में कवि ने पर्याप्त परिवर्तन किये हैं। यह 'प्रसाद' जी का एक अत्यन्त लोकप्रिय, सुगढ़, आत्म-रस से परिलुप्त लघुकाय विरह-काव्य है। विरह के अन्तर्गत भी यह एक स्मृति-काव्य है। इसमें कवि जीवन के मृदुल एवं रसमय अतीत का स्मरण करता है, उसके अभाव में रोता है, पर रोकर जीवन का अन्त नहीं कर देता। इस अभाव को संसार के एक कठोर सत्य के रूप में स्वीकार करके जीवन से समझौता करता है। इस काव्य में अभाव का रोदन ही नहीं है, उस रोदन को जीत कर उसके ऊपर उठे बिना जीवन चल नहीं सकता, इसका भी अनुभव है और उस अनुभव के प्रकाश में चलने के लिए मन को सान्त्वना तथा आशा देने का प्रयास भी है। कवि के सम्पूर्ण काव्य में मानव-जीवन के उत्कर्ष की जो धारा है, वह 'आँसू' में धुलकर निखर गयी है और अत्यन्त स्पष्ट रूप में प्रकट हुई है। रामनाथ 'सुमन' के शब्दों में 'आँसू मानव-जीवन के प्रकर्ष का गान है।'

भाषा की माधुरी, भावों की मृदुलता, उक्ति की विचित्रता, सुन्दर उपमाओं की योजना तथा कल्पना की कोमलता 'आँसू' काव्य की अपनी विशेषताएं हैं। कुछ उत्कृष्ट उदाहरण अवेक्षणीय हैं —

भाषा की मृदुलता—

छिल-छिलकर छाले फोड़े,
मल-मलकर मृदुल चरण से।
घुल-घुलकर बह रह जाते,
आँसू-करुणा के कण से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपमा तथा कल्पना—

शशि मुख पर घूँघट डाले,
अंचल में दीप छिपाए।
जीवन की गोधूली में,
कौतूहल-से तुम आये।
... ...
मादकता-से आये वे,
संज्ञा से चले गये थे।
....
काली आँखों में कैसी,
यौवन के मद की लाली,
मानिक मदिरा से भर दी
किसने नीलम की प्याली !

विरह का तत्वज्ञान ...

छलना थी, तब भी मेरा
उसमें विश्वास घना था,
उस माया की छाया में
कुछ सच्चा स्वयं बना था।
... ...
चमकूंगा धूल-कणों में
सौरभ हो उड़ जाऊंगा।
पाऊंगा कहीं तुम्हें तो,
ग्रह-पथ में टकराऊंगा।

कवि की वेदना लौकिक है, इस पर किसी प्रकार की अलौकिकता अथवा प्रतीकात्मकता का आवरण कवि ने नहीं चढ़ाया है। कवि विरह और मिलन को जीवन के सामान्य क्रम में ग्रहण करता है। काव्य की अन्तिम पंक्तियों में वेदना-भार से दबे हुए कवि-हृदय को हम ऊपर उठता देखते हैं, उसकी करुणा का विस्तार हो जाता है। कवि इस निष्कर्ष पर पहुंचता है

मानव-जीवन वेदी पर
परिणय है विरह-मिलन का,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख-दुख दोनों नाचेंगे,
है खेल आँख का, मन का।

इस प्रकार 'आँसू' काव्य भावपक्ष एवं कलापक्ष, दोनों दृष्टियों से अत्यन्त सम्पन्न एवं समृद्ध काव्य-कृति है।

लहर—'लहर' 'प्रसाद' जी की स्फुट कविताओं का अत्यन्त रस-भीगा संग्रह है। 'आँसू' और 'झरना' में कवि की जो आत्माभिव्यक्ति (Self-expression) बरबस फूट पड़ी थी, वह 'लहर' के प्रगीतों में और भी अधिक निखर गई। 'लहर' में कवि एक चिन्तनशील कलाकार के रूप में सम्मुख आता है, जिसने अतीत की घटनाओं से प्रेरणा ग्रहण की है। 'लहर' के प्रगीतों की यह एक विशिष्टता है कि इनमें केवल भावोच्छ्वास ही नहीं, प्रणय के विभिन्न व्यापार ही नहीं, वरन् स्वस्थ जीवन-दर्शन की नियोजना भी है। व्यक्तिगत अनुभूति व्यापक जीवन-दर्शन की ओर उन्मुख हो गई है। 'लहर' का कवि यौवन का झंझावात और जीवन की विषमता देख चुका था। वह अपने व्यक्तिगत सुख-दुःख में डूब जाने का अधिकार छोड़ देता है। चारों ओर बिखरी हुई करुणा के शृंगार का प्रयत्न करता दिखाई दे रहा है। वह व्यक्ति की सीमित सीमाओं का अतिक्रमण कर समष्टि के असीम प्रदेश में प्रवेश करता है—

'मेरा अनुराग फैलने दो,
नभ के अभिनव कलरव में।'

'लहर' काव्य कवि की अन्तरतम भावना का प्रतीक है। 'आँसू' यदि 'प्रसाद' के जीवन की हलचल है, तो 'लहर' उसकी शांति। यह काव्य कवि की आन्तरिक दशा का प्रतीक है। "लहर' में कवि की प्रणय-भावना से सम्बन्धित अनेक सुन्दर भाव भरे पड़े हैं। इसमें औदार्य, आत्म-तोष, आशा, कामना, समर्पण, क्षोभ, विषाद, स्मृति, उत्कण्ठा, उपालम्भ, आत्म-विस्मृति आदि अनेक मानसिक स्थितियों या भावनाओं के बीच प्रेमी-हृदय की झाँकियाँ देखने को मिल सकती हैं। यथा—

१. अपलक जगती हो एक रात !
वक्षस्थल में जो छिपे हुए—
सोते हों हृदय अभाव लिए—
उनके सपनों का हो न प्रात !
(औदार्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. अरे कहीं देखा है तुमने मुझे प्यार करने वाले को ?
मेरी आँखों में आकर फिर आंसू बन ढरने वाले को ?
सूने नभ में आग जलाकर, यह सुवर्ण-सा हृदय गलाकर
जीवन-सन्ध्या को नहलाकर, रिक्त जलधि भरने वाले को।
(क्षोभ, दर्शनोत्कण्ठा)

.३ ले चल वहाँ भुलावा देकर, मेरे नाविक ! धीरे धीरे।
(आत्म-विस्मृति)

४. वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे ?
जब सावन-घन-सघन बरसते, इन आंखों की छाया भर थे।
(स्मृति)

प्रणय-गीतों के अतिरिक्त 'लहर' में कुछ ऐतिहासिक गीत भी उपलब्ध होते हैं। जैसे 'शेरसिंह का शस्त्र-समर्पण,' 'प्रलय की छाया' आदि। इसके अतिरिक्त दो गीत बौद्ध-दर्शन से सम्बद्ध हैं। 'अरी वरुणा की शान्त कछार' कविता में बौद्ध-धर्म के सिद्धान्तों का सुन्दर उद्घाटन हुआ है। समग्रतः 'लहर' छायावादी काव्यकी प्रायः समस्त प्रमुख विशेषताओं—प्रेम-सौन्दर्य-भावना, प्रकृति-चित्रण, कल्पना-लालित्य तथा रहस्यवादिता आदि—को लिए हुए है।

९. **कामायनी**—'कामायनी' 'प्रसाद' जी की अन्तिम कलाकृति है। इस महाकाव्य की सृष्टि करके उन्होंने साहित्य-जगत् में अमर पद प्राप्त किया है। 'लहर' में कवि ने जो मानवता की विजय-यात्रा आरम्भ की थी, वह 'कामायनी' में आकर पूर्ण हुई। श्री रामनाथ 'सुमन' के शब्दों में—"हिन्दी में 'प्रसाद'-जी के आगमन ने जिस नूतन यज्ञ का संदेश दिया था, 'कामायनी' उसकी पूर्णाहुति है। यह कवि के जीवन की भी पूर्णाहुति है, मानो इसके बाद कवि को कहने के लिए कुछ न रह गया था और उसके जीवन की साधना मानवता के इस पूर्ण-से चित्र को हमारे सामने रखने के साथ समाप्त हो गयी।"

'कामायनी' आधुनिक हिन्दी-साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है। इसमें आदि-मानव मनु की कथा के द्वारा मानव-मन के विकास का वर्णन है। काव्य का आरम्भ प्रलयकालीन वातावरण से होता है—

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर,
बैठ शिला की शीतल छाँह,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पुरुष, भीगे नयनों से,
देख रहा था प्रलय प्रवाह !
नीचे जल था, ऊपर हिम था,
एक तरल था, एक सघन;
एक तत्व की ही प्रधानता
कहो उसे जड़ या चेतन।

'कामायनी' में कथानक का व्यापक विस्तार नहीं है। तीन-चार घटनाओं के भीतर ही काव्य की कथावस्तु पल्लवित होकर समाप्त हो गयी है। पात्रों की भी भीड़ नहीं है। कथा और पात्र पौराणिक हैं, किन्तु उनका ग्रहण औपचारिक रूप पर ही कवि ने किया है; कवि का प्रमुख लक्ष्य युगानुरूप सन्देश प्रस्तुत करने की दिशा में रहा है। युगधर्म की ओर दृष्टि बनाए हुए कवि ने शाश्वत धर्म की रक्षा इस काव्य में की है। किसी एक युग-विशेष के मानव के संघर्ष, द्वन्द्व और बाह्य-आभ्यन्तर आन्दोलनों को व्यक्त न करके कवि ने युग-युग के पुरुषों के पुरुषार्थों को अभिव्यक्त करने की चेष्टा की है।

'कामायनी' का नायक मनु और नायिका श्रद्धा है। इसके अतिरिक्त अन्य पात्रों में इड़ा का चरित्र विशेष महत्वपूर्ण है। तीनों पात्र अपना ऐतिहासिक अस्तित्व रखते हुए, सांकेतिक अर्थ की भी अभिव्यक्ति करते हैं। सम्पूर्ण काव्य एक रूपक (Allegory) है और रूपक का जिस सफलता एवं कुशलता के साथ निर्वाह किया गया है, उसमें 'प्रसाद' जी के अपार प्रतिभा-वैभव का परिचय मिलता है। काव्य के अन्त में कवि ने अपने मूल प्रतिपाद्य 'आनन्दवाद' को भी इन शब्दों में व्यक्त किया है—

समरस थे जड़ या चेतन
सुन्दर साकार बना था।
मानवता एक विलसती
आनन्द अखण्ड घना था॥

इस प्रकार 'कामायनी' में समरसता जैसे उदात्त सिद्धान्त की स्थापना द्वारा प्रसाद ने युग-युग को सन्देश दिया है। भाव-गरिमा, चरित्र-गरिमा तथा शैली-गरिमा 'कामायनी' महाकाव्य की महत्वपूर्ण विशेषताएं हैं। इसके अतिरिक्त छायावादी काव्य का पूर्ण गौरव एवं निखार यदि किसी एक काव्य में पुंजीभूत मिलता है, तो वह है—'कामायनी'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न ४—'प्रसाद' जी की चिन्तनधारा पर एक सारगर्भित लेख लिखिए।

उत्तर—प्रत्येक कवि में एक विशेष मादकता रहती है, जो उसके हृदय के मधु से उत्पन्न होती है। उसके हृदय की हाला उफन-उफन कर काव्य-धारा में प्रवाहित होने लगती है और पहले वह उसे मस्त करती है और बाद में दूसरों (सहृदय पाठकों) में मादकता का सञ्चार करती है। यह बात 'प्रसाद' के कलाकार में भी अत्यन्त स्पष्ट रूप में मिलती है। किन्तु उनकी मादकता में एक विशेष गतिविधि है, संयम है, वह अकाण्ड ताण्डव नहीं है; उसमें गति और लय है। वह कवि हैं, उनमें कल्पना का वैभव है, भाव-सौष्ठव है, किन्तु भावना के साथ विचार का भी अक्षय-कोष है। उनकी कृतियों के आधार पर उनकी चिन्तन-धारा का अत्यन्त सही एवं सर्वाङ्गीण परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

'प्रसाद' जी में कवित्वशक्ति, दार्शनिकता, रहस्यमयता एवं सङ्गीतात्मकता सभी कुछ है। सर्वप्रथम हम उनके दार्शनिक विचारों को लेंगे। प्रसाद चूँकि मूलतः कवि हैं और कवि दर्शनशास्त्र के अन्तिम तत्त्वों की ओर जा नहीं सकता, कारण, कवि का सम्बन्ध सदैव जीवन से होता है। अतः, हम उसके (कवि के) दार्शनिक विचारों को भी जीवन के सम्बन्ध में ही देख सकते हैं। कवि जीवन का तिरस्कार कर ही नहीं सकता। किसी-न-किसी रूप में जीवन और जगत के क्रिया-कलाप एवं रीति-नीतियाँ उसकी कला को प्रभावित करती ही हैं। प्रसाद-काव्य में भी अनेक स्थलों पर जगत् एवं जीवन के सम्बन्ध में अनेक विचार व्यक्त हुए हैं। सृष्टि उस परम ब्रह्म का ही विराट शरीर है। यह वेदान्तियों की भाँति मिथ्या नहीं—'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'—अपितु 'सत्य, सतत, चिरसुन्दर' है। उन्होंने 'कामायनी' में स्पष्ट उद्घोषित किया है—

> "अपने सुख दुख से पुलकित,
> यह मूर्त्त विश्व सचराचर।
> चिति का विराट वपु मंगल,
> यह सत्य सतत चिर सुन्दर।"

इसी प्रकार—

> कर रही लीलामय आनन्द
> महाचिति सजग हुई सी व्यक्त।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व का उन्मीलन अभिराम
उसी में सब होते अनुरक्त।

उनके सृष्टि-सम्बन्धी विचारों पर शैव-दर्शन का अत्यधिक प्रभाव है। शैव-दर्शन में भी कश्मीर के प्रत्यभिज्ञा दर्शन का प्रभाव अधिक है। प्रत्यभिज्ञा-दर्शन के प्रसिद्ध आचार्य अभिनवगुप्त ने अपने 'तन्त्रालोक' में अकाट्य तर्कों द्वारा ब्रह्म के साथ-साथ सृष्टि की भी सत्यता सिद्ध की है और इस विश्व को उस परब्रह्म का 'आभास' बतलाया है। उन्होंने किसी भी अंश में जगत् के मिथ्यात्व को स्वीकार नहीं किया। कामायनीकार की निम्नलिखित पंक्तियों में भी इसी बात का परिचय मिलता है—

(क) नव मुकुट नीलमणि फलक अमल
ओ पारदर्शिका! चिर चंचल,
यह विश्व बना है परछाईं।

(ख) जिसे तुम समझे हो अभिशाप,
जगत् की ज्वालाओं का मूल।
ईश का वह रहस्य वरदान
कभी मत इसको जाओ भूल!

इसके अतिरिक्त, अनेक प्रगीतों के प्राकृतिक वर्णनोंमें उन्होंने मानव-भाव की व्यंजना की है। दूसरे शब्दों में, प्रकृति का मानवीकरण (Personification of nature) करने में उनकी कला विशेष रूप से निखरी है। 'लहर' के प्रगीत इस बात के प्रमाण हैं। 'लहर' में कहीं तो हिम-शैल बालिका कलवर संगीत सुनाती अतीत-युग की गाथा गाती हुई सागर से मिलने जाती है और अनन्त मिलन के उपलक्ष्य में फेनिल खील बिखराती है और कहीं उषा रूपी नागरी अम्बर रूपी पनघट में तारारूपी घट डुबाती है और लतिका मधुमुकुल नवलरस भर लाती है। चन्द्र, सूर्य और उषा, सब प्रेम की पुकार करते हैं। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

(क) हे सागर संङ्गम अरुण नील!
... ...
पिङ्गल किरणों सी मधु लेखा,
हिम-शैल बालिका को तूने कब देखा!
कलरव संगीत सुनाती,
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) बीती विभावरी जाग री।
अम्बर पनघट में डुबो रही—
तारा घट ऊषा नागरी।
खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अञ्चल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल रस गागरी।

उनके प्रियतम भी उनसे प्रकृति द्वारा ही आँख-मिचौनी का खेल खेलते हैं। प्रियतम इस प्रकार छिपकर आ रहे हैं कि वे चुपचाप आकर कवि की आँखें बन्द कर लें और वह उन्हें जान न सके।

निज अलकों के अन्धकार में
तुम कैसे छिप आओगे !
इतना सजग कुतूहल ! ठहरो,
यह न कभी बन पाओगे।
आह, चूम लूं जिन चरणों को
चाँप चाँप कर उन्हें नहीं—
दुख दो इतना, अरे अरुणिमा
ऊषा सी वह उधर बही।
वसुधा-चरण-चिह्न-सी बनकर
यहीं पड़ी रह जावेगी।
प्राची रज कुंकुम ले चाहे
अपना भाल सजावेगी।
देख न लूं, इतनी ही तो है इच्छा ?
लो सिर झुका हुआ।
कोमल किरन उंगलियों से
ढक दोगे यह दृग खुला हुआ।

भगवान् के अस्तित्व को मानते हुए वह इस बात की विवेचना नहीं करना चाहते कि वे कैसे हैं, और क्या हैं, किन्तु उनसे चिर-मिलन अवश्य चाहते हैं। उन्हें प्रेम में किसी प्रकार के परिचय आदि की अपेक्षा नहीं रहती। मध्ययुग में कबीर, दादू आदि सन्त-कवियों ने आत्मा-परमात्मा-मिलन को स्पष्ट करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय या तो सागर और तरंग का रूपक बाँधा है और या फिर 'जल में कुम्भ कुम्भ में जल है' की बात कही है, किन्तु 'प्रसाद' ने दोनों के मिलन को 'जलधि और क्षितिज का मिलन' कहकर अधिक सशक्त बना दिया है—

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ ?
इसमें क्या है धरा सुनो।
मानस जलधि रहे चिर चुम्बित—
मेरे क्षितिज ! उदार बनो —

'प्रसाद' जी की चिन्तनधारा का एक अन्य उल्लेखनीय गुण यह है कि वे अतीत के उपासक एवं भारतीय संस्कृति के भक्त हैं। भारतीय संस्कृति तो उनके सम्पूर्ण काव्य का प्राण है। भारत का उज्ज्वल अतीत उन्हें सदैव प्रिय एवं काम्य रहा है। उनके नाटकों तक में देश-भक्ति एवं राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना अत्यन्त मुखर है। 'स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य' का निम्न गीत—

हिमालय के आंगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हँस अभिनन्दन किया और पहनाया हीरक हार।
जगे हम, लगे जगाने विश्व लोक में फैला फिर आलोक।
व्योम-पुंज हुआ तब नष्ट, अखिल संसृति हो उठी अशोक।
... ...
जिएं तो सदा उसी के लिए यही अभिमान रहे, यह हर्ष।
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष ॥

तथा 'चन्द्रगुप्त' नाटक का प्रस्तुत गीत —

अरुण यह मधुमय देश हमारा।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।

इस तथ्य के अकाट्य प्रमाण हैं। इसके अतिरिक्त 'चन्द्रगुप्त' नाटक की निम्नलिखित पंक्तियों में प्रसुप्त भारतवासियों को किस प्रकार उद्बुद्ध करने का उद्घोष किया गया है—

हिमाद्रि तुङ्ग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती—
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती—
"अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है—बढ़े चलो, बढ़े चलो।"

'प्रसाद' जी बौद्ध-विचारधारा से भी बहुत प्रभावित हैं। उनके नाटकों एवं काव्यों में यत्र-तत्र बौद्धधर्म से सम्बद्ध विचार व्यक्त हुए हैं। 'लहर' में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बौद्ध-धर्म सम्बन्धी दो अत्यन्त सुन्दर गीत उपलब्ध हैं। दोनों गीतों में उन्होंने बौद्धधर्म के मुख्य तत्त्वों करुणा, अहिंसा आदि को अत्यन्त स्पष्ट रीति से व्यक्त किया है। 'अरी वरुणा की शान्त कछार' से आरम्भ होने वाले गीत में तो उन्होंने बौद्ध-धर्म का सार ही प्रस्तुत कर दिया है—

छोड़कर जीवन के अतिवाद,
मध्यपथ से लो सुगति सुधार।
दुःख का समुदय उसका नाश,
तुम्हारे कर्मों का व्यापार।
विश्व-मानवता का जयघोष,
यहीं पर हुआ जलदःस्वर-मन्द्र।
मिला था वह पावन आदेश,
आज भी साक्षी हैं रवि-चन्द्र।

इस प्रकार स्पष्ट है कि वह बौद्धधर्म की विश्वमानवता, करुणा एवं दुःखवाद से अत्यधिक प्रभावित हैं, किन्तु फिर भी वह उसके शून्यवाद को नहीं मानते। वह उसके शून्यवाद में उपनिषदों की 'नेति-नेति' का आभास पाते हैं। डा० गुलाबराय के शब्दों में—'वह ('प्रसाद') दुःखवाद और क्षणिकवाद दोनों को ही मानते हैं, किन्तु उतने पर ठहर नहीं जाते। वह क्षणिक के भीतर शाश्वत-सौन्दर्य के दर्शन करते हैं और विश्वात्मा की पुकार सुनते हैं। वह उसमें अपनी वीणा के स्वर को मिला देना चाहते हैं। इस परिवर्तन-शील विश्व में वह एक अटल सत्ता का परिचय पाते हैं।

छिप जाते हैं और निकलते
आकर्षण में खिंचे हुए;
तृण, वीरुध लहलहे हो रहे
किसके रस से सिंचे हुए ?
सिर नीचा कर किसकी सत्ता
सब करते स्वीकार यहाँ;
सदा मौन हो प्रवचन करते
जिसका, वह अस्तित्व कहां ?
हे अनन्त रमणीय, कौन तुम ?
यह मैं कैसे कह सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैसे हो ? क्या हो ? इसका तो
भार विचार न सह सकता।
हे विराट् ! हे विश्वदेव ! तुम
कुछ हो, ऐसा होता भान''—
मंद-गम्भीर-धीर-स्वर-सयुत
यही कर रहा सागर गान।

- कामायनी (आशा सर्ग)

'प्रसाद' जी दुःखवादी अवश्य हैं, क्योंकि दुःख के अस्तित्व को आशावाद में भुला नहीं सकते, किन्तु उनका दुःखवाद सुखवाद से विमुक्त नहीं है। संसार सुख-दुःखात्मक है। उसमें हर्ष और विषाद, संयोग और वियोग, लाभ और हानि का समन्वित रूप मिलता है। यद्यपि सुख की अवधि अपेक्षाकृत अल्प होती है, तथापि वह उपेक्षणीय नहीं है—

(क) दुःखकी पिछली रजनी बीच
विकसता सुख का नवल प्रभात;
एक परदा यह झीना नील
छिपाये है जिसमें सुख गात।
जिसे तुम समझे हो अभिशाप,
जगत की ज्वालाओं का मूल;
ईश का वह रहस्य वरदान,
कभी मत इसको जाओ भूल।
विषमता की पीड़ा से व्यस्त
हो रहा स्पन्दित विश्व महान्;
यही दुख-सुख-विकास का सत्य
यही भूमा का मधुमय दान।

—कामायनी (श्रद्धा सर्ग)

(ख) मानव-जीवन वेदी पर
परिणय है विरह-मिलन का।
दुःख-सुख दोनों नाचेंगे
है खेल आँख का मन का।

—आंसू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुतः सुख-दुःख ममत्व का खेल है। यदि मनुष्य अहंकार-भाव को मिटा दे तो उसके लिए न दुख रहता है और न सुख—

हो उदासीन दोनों से
दुख-सुख से मेल कराएँ।
ममता की हानि उठाकर
दो रुठे हुए मनाएँ।
—आँसू

'प्रसाद' जी का दुःखवाद अतृप्त वासना का दुःख नहीं है। सुख की अतिशयता स्वयं दुःख में परिणत हो जाती है। मिलन में विच्छेद लगा रहता है। जीवन में मरण की छाया का मिश्रण रहता है, इसलिए एक के हर्षोल्लास में दूसरे को सर्वथा भुला न देना चाहिए। जहाँ तक प्रेम-तत्व का प्रश्न है, उसमें प्रतिदान का अवकाश ही नहीं रहता। प्रेम के अभाव को समग्र संसार पुकार रहा है, किन्तु 'प्रसाद' कहते हैं कि उसका स्वभाव तो देना है, लेना नहीं। जो जितना अधिक देता है, वह उतना ही अधिक प्रेमी है। आत्म-समर्पण (Self-submission) की आधार-शिला पर ही प्रेम का प्रासाद अधिष्ठित है, अतः उसमें निराशा या असन्तोष के लिए कोई गुंजायश नहीं है—

पागल रे! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही हैं सब
आँसू के कन-कन से गिनकर
यह विश्व लिये है ऋण उधार,
तू क्यों फिर उठता है पुकार?—
मुझको न मिला रे कभी प्यार।
—लहर

'प्रसाद' जी ईश्वर के सम्बन्ध में अज्ञेयवादी नहीं हैं। उनके काव्य में पूर्ण आस्तिकतावाद की झलक है। वह राम, कृष्ण आदि अवतारी महापुरुषों के प्रति भी विशेष श्रद्धा रखते हैं। उनका अवतार-विषयक दृष्टिकोण अत्यन्त व्यापक है। 'स्कन्दगुप्त' नाटक में कमला के मुख से उन्होंने स्पष्ट कहलवाया है कि जो अपने कर्मों को ईश्वर का कर्म समझकर करता है, वही ईश्वर का अवतार है। उन्हें समाज में व्याप्त मिथ्याडम्बर एवं कुरीतियाँ अत्यन्त अप्रिय हैं। 'कंकाल' उपन्यास में उन्होंने धर्म के ढोंग और आडम्बर का स्पष्ट शब्दों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पर्दाफाश किया है। धर्म के क्षेत्र में कर्मकाण्ड को उन्होंने विशेष स्थान नहीं दिया। कर्म में हत्याकाण्ड अथवा बलि का तो उन्होंने घोर विरोध किया है। बलिदान के विरुद्ध उन्होंने बहुत जोर की आवाज उठायी है। 'स्कन्दगुप्त' और 'जनमेजय का नागयज्ञ' दोनों नाटकों में बलिदान का घोर विरोध किया गया है। 'कामायनी' में भी उन्होंने बलिदान के ऊपर ही श्रद्धा एवं मनु का मन मैला होता दिखाया है। इड़ा भी जन-संहार के विषय में कितना सुन्दर उपदेश देती है—

"क्यों इतना आतङ्क ठहर जा ओ गर्वीले
जीने दे सबको फिर तू भी सुख से जीले।"

'प्रसाद' जी के सामाजिक विचारों में उदारता का तत्व बहुत अधिक प्रतीत होता है। वर्ण-व्यवस्था को वे मानते हैं, किन्तु वे उसको दूसरों पर अत्याचार करने का साधन नहीं बनाना चाहते। स्त्रियों के अधिकारों के वह पूर्ण पक्षपाती हैं। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः' में वह पूर्ण विश्वास रखते हैं। 'ध्रुवस्वामिनी' में उन्होंने नारी-सत्व का अत्यन्त ओजपूर्ण प्रतिपादन किया है। पारिवारिक-जीवन में वे सबसे हिलमिल कर रहने और सम्मिलित परिवार प्रथा के पोषक हैं। 'अजातशत्रु' की निम्नलिखित पंक्तियों में कितने सुन्दर रूप में उन्होंने सुखी परिवार का आदर्श प्रस्तुत किया है—

बच्चे बच्चों से खेलें, हो स्नेह बढ़ा उनके मन में,
कुल लक्ष्मी हों मुदित, भरा हो मंगल उनके जीवन में।
बन्धु-वर्ग हों सम्मानित, हो सेवक सुखी प्रणत अनुचर,
शाँतिपूर्ण हो स्वामी का मन, तो स्पृहणीय न हो क्यों घर॥

'प्रसाद' जी के राजनीतिक विचारों का भी अपना गौरव है। महात्मा गांधी की भाँति वह भी राजनीति के क्षेत्र में आध्यात्मिकता का समावेश चाहते हैं। कुत्सित राजनीति (Dirty-politics) उन्हें सर्वथा अप्रिय एवं अग्राह्य है। 'जियो और जीने दो' (Live and let live) के समर्थक हैं, किन्तु मान-मर्यादा के साथ। मानहीन जीवन से तो वह मरण को ही श्रेयस्कर समझते हैं। वह मरण को तो भला समझते हैं, किन्तु संहार का विरोध करते हैं। उनकी 'अशोक की चिन्ता' कविता इस बात का स्पष्ट प्रमाण है। वह उस महत्वाकांक्षा के पक्षपाती नहीं, जिसकी आधार-शिला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संहार एवं पोषण पर टिकी हो। वह राजाओं के अबाधित अधिकार के भी समर्थक नहीं। इस विषय में इड़ा का निम्नोक्त कथन अवेक्षणीय है—

आह प्रजापति! यह न हुआ है कभी न होगा,
निर्बाधित अधिकार आज तक किसने भोगा।

—कामायनी

निष्कर्ष यह है कि 'प्रसाद'-काव्य में स्थल-स्थल पर अनेक अमूल्य विचार भरे पड़े हैं। भावों की उदात्तता एवं विचारों की गम्भीरता ने उनकी चिन्तन-धारा को अत्यन्त विराट् एवं व्यापक बना दिया है।

प्रश्न ५—रहस्यवाद क्या है? उसकी मूल प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालते हुए 'प्रसाद' जी के रहस्यवाद को स्पष्ट कीजिए।

अथवा

'प्रसाद'-काव्य से उदाहरण देते हुए रहस्यवाद की मूल प्रवृत्तियों एवं तत्वों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—अपनी अन्तःस्फुरित अपरोक्ष अनुभूति द्वारा सत्य, परम-तत्व अथवा ईश्वर का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करने की प्रवृत्ति रहस्यवाद है। यह प्रवृत्ति मनुष्य की प्रकृति का एक अपरिहार्य अंग रही है और रहस्यानुभूति (Mystic-feeling) सम्भवतः मनुष्य की श्रेष्ठतम एवं उदात्ततम अनुभूति है। इसकी अभिव्यक्ति सभ्यता के प्रायः सभी स्तरों, देशों और कालों में होती रही है। रहस्यवाद उतना ही पुरातन है जितनी कि स्वयं मानवता। रहस्य-वाद और रहस्यवादी किसी जाति, धर्म अथवा देश-विशेष में सीमित नहीं रहे हैं। उनका विस्तार सागर की भाँति सम्पूर्ण विश्व-साहित्य में व्याप्त है। रहस्यवाद की एक ऐसी परिभाषा देना अत्यन्त कठिन है, जो 'दो और दो चार' की भाँति सर्वमान्य हो, फिर भी जिज्ञासु मन को आश्वस्त करने के लिए प्राच्य और पाश्चात्य विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से 'रहस्यवाद' को यथासम्भव परिभाषा की डोर में बाँधने का प्रयास किया है। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

१. 'चिन्तन के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, भावना के क्षेत्र में वही रहस्य-वाद है।'
—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

२. 'रहस्यवाद जीवात्मा की उस अन्तर्हित प्रवृत्ति का प्रकाशन है, जिसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह दिव्य और अलौकिक शक्ति से अपना शान्त और निश्छल सम्बन्ध जोड़ना चाहती है और यह सम्बन्ध यहाँ तक बढ़ जाता है कि दोनों में कुछ अन्तर ही नहीं रह जाता।" —डॉ० रामकुमार वर्मा

३. "रहस्यवाद हृदय की वह दिव्य अनुभूति है जिसके भावावेश में प्राणी अपनी ससीम और पार्थिव स्थिति से उस असीम एवं स्वर्गिक महान् अस्तित्व के साथ एकात्मकता का अनुभव करने लगता है।" —गंगाप्रसाद पाण्डेय

४. "अपरोक्ष अनुभूति, समरसता तथा प्राकृतिक सौन्दर्य के द्वारा 'अहं' का 'इदम्' से समन्वय कर देना रहस्यवाद है।" —जयशंकर प्रसाद

५. 'Mysticism indeed implies the abolition of individualitics.' अर्थात् व्यक्तित्व का विलयन ही रहस्यवाद है।

—Mysticism : Underhill

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि आत्मा और परमात्मा का सीधा सम्बन्ध जब काव्यमयी भाषा में व्यक्त होता है तो उसे साहित्य में 'रहस्यवाद' के नाम से पुकारा जाता है। दूसरे शब्दों में, सभी विद्वान् दृश्य-संसृति में व्याप्त उस अज्ञात व अगोचर सत्ता से अपना रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करने को ही 'रहस्यवाद' की संज्ञा से अभिहित करते हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल रहस्यवाद या रहस्यानुभूति का आविर्भाव यूरोप से मानते हैं। उनका मत है कि अरब से सूफी-काव्य के माध्यम से भारत में रहस्यवाद आया। किन्तु 'प्रसाद' जी इसका विरोध करते हैं। उन्होंने रहस्यानुभूति को वैदिक काल से ही विचार-पद्धति के रूप में स्वीकार किया है। वस्तुस्थिति भी यही है। रहस्यवाद ऋग्वेद से लेकर उपनिषदों, आगमों आदि में होता हुआ आधुनिक युग में आया। विद्वानों ने रहस्यवाद की विभिन्न स्थितियों का उल्लेख किया है। डॉ० प्रेमनारायण ने रहस्यवाद की पाँच स्थितियाँ मानी हैं—

१. प्रभु के प्रति जिज्ञासा, कुतूहल अथवा विस्मय की भावना।

२. प्रभु का महत्व और उसकी अनिर्वचनीयता।

३. प्रभु के दर्शन का प्रयत्न।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. प्रभु के प्रति विभिन्न सम्बन्धों की उद्भावना।

५. प्रभु से एकाकारिता।

कुमारी अंडरहिल (Underhill) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Mysticism' में ईसाई सन्तों के रहस्यवाद की छह अवस्थाएँ गिनाई हैं—

१. जाग्रति की अवस्था (Awakening of the soul)

२. आत्म-शुद्धि की अवस्था (Purification)

३. आत्मप्रकाश की अवस्था (Illumination)

४. आत्मान्धकार की अवस्था (Dark night of the soul)

५. अन्तर्मुखी प्रवृति की अवस्था (Introspection)

६. मिलन की अवस्था (Vision)

जाग्रति की अवस्था में आत्मा परमात्मा के विषय में विस्मयोत्पादक बातें सुनकर सचेत हो जाती है। आत्मशुद्धि की अवस्था में आत्मा अपनी ससीमता और अपूर्णता का ज्ञान प्राप्त करती है तथा योगादि की प्रक्रियाओं द्वारा नियन्त्रण करती है। आत्म-प्रकाश की स्थिति में आत्मा एक विचारावस्था में होती है तथा उसमें हर्षातिरेक होता है। अन्धकारमयी अवस्था में आत्मा अनेक सांसारिक विघ्नों का सामना करती है तथा परमात्मा के वियोग की दुःखानुभूति करती है। अन्तर्मुखी प्रवृत्ति की अवस्था में आत्मा अन्तर्मुख होकर परमात्मा से मिलने को तत्पर हो जाती है तथा मिलन की स्थिति में आत्मा और परमात्मा एक रूप हो जाते हैं, उनमें किसी प्रकार का पार्थक्य नहीं रहता।

'प्रसाद' की रहस्य-भावना का आधार आनन्द एवं अद्वैतवादी दर्शन हैं। इसके कई रूप साहित्य में विकसित हुए हैं। डॉ० रामरतन भटनागर के अनुसार वे रूप इस प्रकार हैं—

१. शैवों का अद्वैत और उनका सामरस्य सिद्धान्त।

२. उपनिषदों का ज्ञानमूलक अद्वैतवाद।

३. वैष्णवों का माधुर्य और प्रेम-आश्रित रहस्यवाद।

४. अद्वैतमूलक भक्ति पर आश्रित रहस्यवाद।

५. योगनिष्ठ रहस्यवाद।

६. प्राकृतिक रहस्यवाद।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर रहस्यवादी काव्य की कुछ ऐसी सामान्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवस्थाएं स्पष्ट होती हैं जो सामान्यतः सभी रहस्यवादी कविताओं के मूल में कार्य करती हैं। ये अवस्थाएँ निम्नलिखित हैं—

१. विश्वव्यापी अनन्त शक्ति के प्रति जिज्ञासा की भावना।
२. अनन्त शक्ति का महत्व-प्रदर्शन।
३. दर्शन या मिलनार्थ प्रयत्न।
४. भौतिक विघ्न एवं वेदना की विवृत्ति।
५. उस अनन्त एवं अगोचर सत्ता का आभास।
६. संसार का वास्तविक ज्ञान या अपरोक्ष अनुभूति।
७. अनन्त शक्ति से एकाकारिता अथवा चिरमिलन।

अब हम प्रसाद-काव्य के आधार पर उपर्युक्त अवस्थाओं का अनुसन्धान करेंगे। 'प्रसाद'-काव्य में यत्र-तत्र रहस्यवादी अवस्थाओं का वर्णन मिलता है। 'कामायनी' में तो रहस्यवादी-तत्त्वों की भरमार है। इसके अतिरिक्त 'आँसू', 'झरना' और 'लहर' के अनेक प्रगीतों में भी रहस्यवादी संकेत मिलते हैं।

१. विश्व-व्यापी अनन्त शक्ति के प्रति जिज्ञासा—'कामायनी' के 'आशा' सर्ग में कवि 'प्रसाद' ने मनु के माध्यम से विश्व- व्यापी अनन्त शक्ति के प्रति जिज्ञासा व्यक्त की है। कवि उस 'विराट्' की रहस्यमयी सृष्टि सेविस्मय-वमुग्ध होकर पुकार उठता है—

"महानील इस परम व्योम में,
अंतरिक्ष में ज्योतिर्मान,
ग्रह, नक्षत्र और विद्युत्कण
किसका करते-से संधान ?"
... ...
"हे अनंत रमणीय! कौन तुम ?
यह मैं कैसे कह सकता।
कैसे हो ? क्या हो ? इसका तो
भार विचार न सह सकता।
हे विराट् ! हे विश्वदेव ! तुम
कुछ हो ऐसा होता भान"—
मंद-गम्भीर-धीर स्वर संयुत
यही कर रहा सागर गान।

२. अनन्त शक्ति का महत्व प्रदर्शन—कवि 'प्रसाद को सृष्टि के कण-कण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में उस अनन्त शक्ति का महत्व परिलक्षित होता है। सरिता के प्रवाह में, पुष्प की महक में, चन्द्र की ज्योत्स्नामें तथा सूर्य की ऊष्मा में एकमात्र उसी अनन्त शक्ति का निवास है।

३. **मिलनार्थ प्रयत्न**—रहस्यवादी कवि उस अनन्त सत्ता के अपार वैभव को देखकर उससे मिलने का प्रयत्न करता है। कबीर, जायसी, महादेवी वर्मा, डॉ० रामकुमार वर्मा आदि सभी रहस्यवादी कवियों में उस अनन्त एवं अगोचर सत्ता से मिलने की तीव्र इच्छा मिलती है। वे उस ईश्वर से मिलन हेतु प्रत्येक सम्भव प्रयत्न करते हैं। 'प्रसाद' की 'कामायनी' में भी उस अनन्त सौन्दर्य-मण्डित शक्तिसे मिलने की आतुरता विद्यमान है। कवि की आत्मा उस असीम सत्ता का साक्षात्कार करने का प्रयत्न करती है। उसके सामने अन्य सौन्दर्य भी आता है, जो उसकी लक्ष्य-पूर्ति में बाधा उपस्थित करता है। किन्तु, कवि मनु के शब्दों में कह उठता है—

तो फिर शान्ति मिलेगी मुझको जहां, खोजता जाऊँगा।

४. **भौतिक विघ्न एवं वेदना की विवृत्ति**—साधक को उस अगोचर से साक्षात्कार करने के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सांसारिक सुख एवं आकर्षण उसे अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। फलतः वह अपने लक्ष्य-पथ से विचलित हो जाता है। वहसंसार की भूल-भुलैया में पड़कर सत्य-पथ से च्युत हो जाता है। वह मिथ्यादम्भ की भावना से प्रेरित होकर उस अगोचर सत्ता के महात्म्य को भूल बैठता है। 'कामायनी' में मनु, श्रद्धा एवं इड़ा के माध्यम से कवि ने इसी सत्य को अभिव्यक्ति दी है। मनु पहले तो श्रद्धा के रूप-सौन्दर्य से प्रभावित होकर उसके प्रति आत्म-समर्पण कर देते हैं—

कहा मनु ने "तुम्हें देखा अतिथि ! कितनी बार,
किन्तु इतने तो न थे तुम दबे छवि के भार !
पूर्व-जन्म कहूँ कि था स्पृहणीय मधुर अतीत
गूंजते जब मदिर घन में वासना के गीत।
... ...
आज ले लो चेतना का यह समर्पण दान
विश्व रानी ! सुन्दरी ! नारी जगत की मान।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर उसके पीले मुख एवं आलस्यपूर्ण शरीर को देखकर अपनी काम-पिपासा की तृप्ति चाहते हैं—

मनु ने देखा जब श्रद्धा का
वह सहज खेद से भरा रूप।
अपनी इच्छा का दृढ़ विरोध
जिसमें वे भाव नहीं अनूप।
वे कुछ भी बोले नहीं; रहे
चुपचाप देखते साधिकार।
श्रद्धा कुछ-कुछ मुस्करा उठी
ज्यों जान गई उनका विचार।

एक अन्य स्थान पर भी मनु कहते हैं—

तुच्छ नहीं है अपना सुख भी
श्रद्धे! वह भी कुछ है;
दो दिन के इस जीवन का तो
वही चरम सब कुछ है।

इसके उपरान्त ईर्ष्या-भावना से प्रेरित होकर श्रद्धा का त्याग करके मनु का इड़ा की ओर बढ़ना ही विघ्न है। इड़ा पर एकाधिकार करने की इच्छा उन्हें संकट-ग्रस्त कर देती है। बाद में माया का आवरण हट जाने पर वेदनानुभव करते हैं।

५. **उस अनन्त एवं अगोचर सत्ता का आभास**—जब साधक संसार के माया-जाल से मुक्त हो जाता है, राग-द्वेष की भावना से रहित हो जाता है, तब उसके हृदय में ज्ञान-ज्योति का प्रसार होता है। फलतः उसे उस अनन्त एवं अगोचर सत्ता का कुछ-कुछ आभास होने लगता हैं। 'कामायनी' के 'दर्शन' सर्ग में प्रसाद ने इसी स्थिति को दर्शाया है। आत्म-चिंतन-लीन मनु को नटराज के दर्शन होते हैं—

देखा मनु ने नर्त्तित नटेश,
हत-चेत पुकार उठे विशेष;
"यह क्या! श्रद्धे! बस तू ले चल,
जन चरणों तक, दे निज सम्बल;
सब पाप-पुण्य जिसमें जल-जल,
पावन बन जाते हैं निर्मल;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिटते असत्य से ज्ञान-लेश
समरस, अखण्ड, आनन्द वेश।"

६. **चिर-मिलन**—यथार्थ स्थिति का ज्ञान हो जाने पर साधक को समस्त सांसारिक आकर्षण मिथ्या एवं निस्सार प्रतीत होने लगते हैं। वह एक ऐसी भाव-भूमि पर पहुंच जाता है, जहाँ उसे 'अपने' और 'पराये' में कोई भेद नहीं प्रतीत होता। इसी स्थिति को 'प्रसाद' ने 'समरसता' अथवा 'सामरस्य' कहा है। इस स्थिति में पहुंचने पर 'प्रसाद' के अनुसार इच्छा, ज्ञान और क्रिया का समन्वय हो जाता है। रहस्यवादी साधक को 'अनहदनाद' सुनाई पड़ने लगता है और उसकी आत्मा-परमात्मा के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेती है, दोनों में किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रह जाता। 'रहस्य' सर्ग में 'प्रसाद' कहते हैं—

स्वप्न, स्वाप, जागरण भस्म हो—
इच्छा, क्रिया, ज्ञान मिल लय थे;
दिव्य अनाहत पर निनाद में
श्रद्धायुत मनु बस तन्मय थे !

'लहर' की निम्न पंक्तियों में भी 'प्रसाद' ने आत्मा और परमात्मा की एकाकार स्थिति की ओर इंगित किया है—

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ ?
इसमें क्या है धरा, सुनो।
मानस जलधि रहे चिर चुम्बित—
मेरे क्षितिज ! उदार बनो।

'प्रसाद' के रहस्यवाद के सम्बन्ध में अन्तिम निष्कर्ष देने से पूर्व स्पर्जन नामक पाश्चात्य समीक्षक द्वारा बतायी गई रहस्यवाद की विभिन्न कोटियों के आधार पर भी उनके रहस्यवाद की परख कर लेना युक्तिसंगत रहेगा। स्पर्जन ने विषयवस्तु की दृष्टि से रहस्यवाद को निम्नलिखित वर्गों में वर्गीकृत किया है—

१. प्रेमवादी रहस्यवादी।
२. सौन्दर्यवादी रहस्यवादी।
३. प्रकृतिवादी रहस्यवादी।
४. दार्शनिक रहस्यवादी।
५. भक्त और धार्मिक रहस्यवादी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहस्यवाद के उपर्युक्त प्रायः समस्त प्रकार 'प्रसाद' के सम्पूर्ण प्रगीत-काव्य एवं 'कामायनी' में यत्र-तत्र उपलब्ध हैं। इनमें से कुछ का सोदाहरण परिचय इस प्रकार है—

१. **प्रेमवादी रहस्यवादी** — प्रेमवादी रहस्य-प्रगीतों में प्रेम को जीवन की रहस्यात्मकता का सुलझाव समझा जाता है। 'प्रसाद' के प्रगीतों में इस वर्ग में निम्न गीत रखे जा सकते हैं —

शून्य गगन में खोजता जैसे चन्द्र निराश मधुर मिलन कुंज में।

२. **सौन्दर्यवादी रहस्यवादी** — 'प्रसाद' काव्य में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जिनमें कवि ने उस अनन्त सत्ता के असीम सौन्दर्य से प्रेरित होकर गीत-रचना की है। सौन्दर्य के प्रति मानव का स्वाभाविक आकर्षण है। सृष्टि का कण-कण सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट होता है। इसीलिए अनेक विद्वानों ने सौन्दर्य-तत्व का गुणगान किया है। हीगेल यदि सौन्दर्य को आध्यात्मिकता का भावात्मक प्रकाशन (Beauty is the spiritual making itself known sensuusly) कहते हैं तो शैफ्टस्बरी (Shaftsbury) ईश्वर और सौन्दर्य में कोई अन्तर ही नहीं मानते (Beauty and God are one and the same thing।) इस दृष्टि से 'चन्द्रगुप्त' का निम्नलिखित गीत 'प्रसाद' जी की सौन्दर्य-भावना का व्यंजक है -

तुम कनक किरण के अन्तराल में
लुक छिप कर चलते हो क्यों ?

नत मस्तक गर्व वहन करते
यौवन के घन, रस-कन ढरते ?

हे लाज भरे सौन्दर्य !
बता दो मौन बने रहते हो क्यों ?

उपर्युक्त पंक्तियों में नारी-सुलभ लज्जा का अत्यन्त सुन्दर चित्रण हुआ है। यह 'प्रसाद' जी का सौन्दर्यवादी रहस्यवादी गीत है।

३. **प्रकृतिवादी रहस्यवादी** — 'लहर' का निम्नलिखित गीत इस वर्ग में रखा जा सकता है। कारण, यहाँ कवि ने सागर तथा सरिता को क्रमशः परमात्मा एवं आत्मा के रूप में देखा है —

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हे सागर सङ्गम अरुण नील !
पिङ्गल किरणों सी मधु-लेखा,
हिम-शैल बालिका को तूने कब देखा !
कलरव संगीत सुनाती,
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।

४. **दार्शनिक रहस्यवादी**— स्पर्जन के अनुसार दार्शनिक रहस्यवादी गीत वे हैं, जिनमें कवि अपनी धारणा की अभिव्यक्ति इस ढंग से करे कि वह बुद्धि और भावना दोनों को समान रूप से प्रभावित करे। 'प्रसाद' जी के दार्शनिक रहस्यवादी प्रगीत इसी प्रकार की छाप सहृदय पाठक पर छोड़ जाते हैं। उन्होंने भावात्मक ढंग से अपने दार्शनिक तत्वों को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। 'कामायनी' के 'रहस्य', 'दर्शन' आदि सर्गों में दार्शनिक रहस्यवाद से सम्बद्ध अनेक स्थल मिलते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक स्फुट प्रगीतों में भी कवि ने संसार, जीवन, सुख-दुःख, कर्म, प्रेम, करुणा आदि विषयों पर अपने विचार व्यक्त किये हैं।

संसार तो उनकी दृष्टि में नश्वर एवं अचिरस्थायी है। इसमें सूर्य, चन्द्र, तारागण सभी कुछ चंचल हैं। अणु-परमाणु, सुख-दुःख सभी अस्थिर हैं। जीवन भी क्षणिक एवं नश्वर है—

"जलता है यह जीवन पतङ्ग
जीवन कितना ? अति लघु क्षण।"

प्रेम के आविर्भाव तथा उसके महत्व का दिग्दर्शन कराते हुए वह कहते हैं कि आशा-निराशा सुख-दुःख में विह्वल वसुधा के अंचल पर कण-कण के रूप में बिखरा हुआ यह मानव-जीवन भी क्या है ?

"वसुधा के अंचल पर
यह क्या कन-कन सा गया बिखर ?
लालसा निराशा में ढलमल
वेदना और सुख में विह्वल
यह क्या है रे मानव जीवन ?"

किन्तु—

"मिलते चलते जब दो कन
आकर्षण-मय चुम्बन बन,
दल के नस-नस में बह जाती—
लघु-लघु धारा सुन्दर।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यह प्रेम की सरसता 'प्रसाद' जी के अनुसार करुणा की स्थिति पर ही सम्भव है। तभी तो वे कहते हैं—

"गिरने दे नयनों से उज्ज्वल
आंसू के कन मनहर
वसुधा के अचल पर।"

वस्तुतः 'प्रसाद' जी के प्रेम-दर्शन में केवल उत्सर्ग अथवा आत्म-समर्पण (Self-Submission) को ही स्थान मिला है। प्रेम तो केवल दिया जाता है—उसमें प्रतिदान की भावना नहीं होती—

पागल रे वह मिलता है कब ?
उसको तो देते ही हैं सब।
आंसू के कन-कन से गिनकर
यह विश्व लिए है ऋण उधार,
तू क्यों फिर उठता है पुकार ?—
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

—लहर

५. भक्तिवादी (धर्मवादी) रहस्यवादी - रहस्यवाद के इस वर्ग से सम्बद्ध स्थलों का 'प्रसाद'-काव्य में अभाव है, किन्तु उनका भक्तिवादी स्वर आस्तिकता से अवश्य पूर्ण है।

समग्र रूप से 'प्रसाद'-काव्य रहस्यवादी भावनाओं की दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न एवं समृद्ध है। आधुनिक हिन्दी-काव्य की छायावादी-धारा के तो 'प्रसाद' प्रवर्तक हैं ही, साथ ही रहस्यवादी कवियों में भी उनका स्थान अत्यन्त उच्चकोटि का है। रहस्यवाद के एक-से-एक सुन्दर नमूने उनके काव्य में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। शुक्ल जी ने रहस्यवाद के दो प्रकारों का उल्लेख किया है—(१) साधनात्मक रहस्यवाद एवं (२) भावनात्मक रहस्यवाद। पहले प्रकार के अन्तर्गत योग के अप्राकृत एवं जटिल आसन, कर्मकाण्ड, तप और कायाकष्ट आदि का समावेश रहता है, जबकि दूसरे प्रकार में भक्त और साधक में अगाध विश्वास तथा आत्म-समर्पण की प्रबल भावना रहती है। जहाँ तक 'प्रसाद' का सम्बन्ध है, निस्संदेह उनका रहस्यवाद दूसरे (भावनात्मक) प्रकार का है, जिसमें कोरी जिज्ञासा न होकर 'शिव' और 'सुन्दर' भी आ मिले हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न ६—'प्रसाद' जी के प्रकृति-चित्रण पर एक सारगर्भित निबन्ध लिखिए।

अथवा

प्रकृति-चित्रण के विभिन्न रूपों का उल्लेख करते हुए 'प्रसाद' जी के प्रकृति-चित्रण का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।

उत्तर—प्रकृति और मानव का सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीन एवं अखण्ड है। प्रकृति मानव को उसके शैशवकाल से ही पालती है। प्रकृति के क्रिया-कलाप उसकी आनन्द-पिपासा को शान्त करते रहे हैं। सूर्योदय एवं सूर्यास्त के दृश्य, नीरव प्रशान्त रजनी की मधुरिमा; चन्द्र की ज्योत्स्ना, पुष्प का मधुर हास, कोकिल की कल-काकली एवं वसन्त की मादक बहार किसके हृदय को आकृष्ट नहीं करती ! ईश्वर रचित समस्त प्राणी प्राकृतिक सौन्दर्य से हर्षान्वित होते हैं। मानव तो फिर ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति ही है। अतः उसका प्राकृतिक सौन्दर्य से अभिभूत होकर, उस पर मुग्ध होना तथा हर्ष-लाभ करना स्वतः सिद्ध है।

मानव और प्रकृति के घनिष्ट सम्बन्ध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य और कला में युग-युगान्तरों से होती चली आयी है। वैदिक साहित्य में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जहाँ विभिन्न मन्त्रों के स्पष्टीकरण के लिए प्राकृतिक उपादानों का आश्रय ग्रहण किया गया है। तदुपरान्त 'शिशुपालवध', 'रघुवंश' तथा 'किरातार्जुनीय' जैसे महाकाव्यों में भी प्रकृति के अनेक भव्य चित्र उतारे गये हैं। जहाँ तक हिन्दी-साहित्य का सम्बन्ध है, प्रकृति के विषय में विभिन्न युगों में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण रहे हैं। हिन्दी के आधुनिक-काल में विशेषतः छायावादी काव्य में प्रकृति का चित्रण अपने भव्यतम रूप में हुआ। इसके पूर्व हिन्दी में उसे कभी भी न तो यह गौरव एवं महात्म्य प्राप्त हुआ और न उसमें इतनी सजीवता ही आ सकी। प्रकृति-चित्रण की इस बहुलता के कारण वस्तुतः इस काव्य को प्रकृति-काव्य कहना अधिक उचित होगा। इन कवियों ने प्रकृति को मनुष्य की ही भान्ति बाह्य सौन्दर्य के साथ आन्तरिक भावों को भी सौन्दर्य से युक्त चित्रित किया। इस प्रकार वह निर्जीव न रह कर यथार्थ अर्थों में मानव की सजीव संगिनी बन गई है।

प्रारम्भिक कविताओं में प्रकृति के प्रति 'प्रसाद' के दो दृष्टिकोण दृष्टिगत होते हैं, एक तो प्रेम का और दूसरा जिज्ञासा का। एक का सम्बन्ध हृदय से है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे का मस्तिष्क से। प्रेम की दृष्टि से वह प्रकृति के सुन्दर चित्र प्रस्तुत करते हैं और जिज्ञासा में उसके सौन्दर्य में कौन छिपा है, आदि प्रश्न करते हैं। उनके आरम्भिक काल के प्रकृति-चित्रों में वर्णन का प्राधान्य और सजीवता की कमी है। पर आगे बढ़ने पर ज्यों-ज्यों प्रकृति का सजीव रूप उनके मानस में निखरता गया, वह उसके रूप को भी सजीव बनाते गये। 'कानन कुसुम' तक आते-आते वे प्रकृति और मानव को एक रूप में देखने लगते हैं। उनके लिए दोनों सजीव हैं, दोनों हँसते-मुस्कराते हैं और दोनों के पीछे कोई विराट् सत्ता है। प्रकृति को कहीं-कहीं ब्रह्म की सहचरी के रूप में भी चित्रित किया गया है। 'कानन कुसुम' के बाद 'प्रेम-पथिक', 'करुणालय' तथा 'महाराणा का महत्व' आदि तक पहुंचते-पहुंचते उनका प्रकृति-चित्रण पर्याप्त सुन्दर होने लगा, परन्तु उसका सर्वोत्तम रूप 'झरना,' 'लहर' और 'कामायनी' में ही दृष्टिगत होता है।

'प्रसाद' 'पंत' की भाँति मूलतः प्रकृति के कवि नहीं हैं। उनकी प्रकृति मानव के लिए है, इसीलिए 'पंत' की भाँति प्रकृति के स्वतन्त्र चित्र उनमें अधिक नहीं हैं। साथ ही वर्ड्सवर्थ की भान्ति प्रकृति का प्रत्येक कण उन्हें प्रिय नहीं है। केवल उसका सुन्दर रूप ही उन्हें आकर्षित करता है। आख्यानक कविताओं में वह प्रकृति-चित्रण प्रायः नहीं भूलते। प्रकृति का सर्वाधिक प्रयोग उन्होंने इसी रूप में किया है। यों अन्य प्रचलित रूपों का भी उनमें अभाव नहीं कहा जा सकता।

'प्रसाद'-काव्य में प्रकृति को प्रमुखतः निम्नांकित रूपों में चित्रित किया गया है—

१. **आलम्बन रूप में**—जहाँ कवि स्वतन्त्र रूप से प्रकृति का चित्रण केवल प्रकृति वर्णन के उद्देश्य से हो कर रहा हो, वह आलम्बन रूप कहलाता है। इस रूप के अन्तर्गत प्रकृति का संश्लिष्ट चित्रण बिम्ब-ग्रहण के रूप में होता है। 'प्रसाद' में ऐसे चित्र हैं, पर बहुत अधिक नहीं। 'लहर', 'झरना' तथा 'कानन-कुसुम' की प्रकृति-विषयक कुछ कविताएँ ऐसी ही हैं। यथा—

किरण तुम क्यों बिखरी हो आज,
रंगी हो तुम किसके अनुराग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्ण-सरसिज किंजल्क-समान
उड़ाती हो परमाणु-पराग।
झरना ('किरण')

'कामायनी' के 'आशा' सर्ग में भी प्रकृति का स्वतन्त्र रूप में चित्रण किया गया है —

उषा सुनहले तीर बरसती
जय-लक्ष्मी-सी उदित हुई।
उधर पराजित काल-रात्रि भी
जल में अन्तर्निहित हुई।
... ...
स्वर्ण शालियों की कलमें थीं
दूर दूर तक फैल रहीं;
... ...
अचल हिमालय का शोभन तम
लता-कलित शुचि सानु-शरीर।

इस प्रकार 'प्रसाद' ने प्रकृति चित्रण के साथ-साथ प्रसंग-गुम्फन द्वारा कथा-विकास और मनोभाव का अंकन कर प्रकृति को एक विकसित रूप में खड़ा कर दिया है, जिसमें जीवन की गति है तथा हृदय व मनोभावों की उदात्त ऊर्मियाँ हैं।

२. **उद्दीपन रूप में**—उद्दीपन-रूप में प्रकृति आनन्द के समय मानव के आनन्द को द्विगुणित करती हुई तथा दुःख के समय उसके दुःख को उद्दीप्त करती हुई दिखाई पड़ती है। ये दोनों रूप काव्य में प्राचीन काल से ही मिलते हैं। 'प्रसाद'-काव्य में भी इन रूपों के सुन्दर उदाहरण उपलब्ध होते हैं। 'कामायनी' के 'वासना' सर्ग में मिलन के उद्दीपन-रूप में प्रकृति का बड़ा ही मादक चित्र है—

विभव मतवाली प्रकृति का आवरण वह नील—
शिथिल है, जिस पर बिखरता प्रचुर मंगल-खील;
राशि-राशि नखत-कुसुम की अर्चना अश्रांत—
बिखरती है तामरस-सुन्दर-चरण के प्रांत।
मनु निरखने लगे ज्यों-ज्यों यामिनी का रूप,
वह अनंत प्रगाढ़ छाया फैलती अपरूप;
बरसता था मदिर कण-सा स्वच्छ सतत अनंत,
मिलन का संगीत होने लगा था श्रीमंत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे प्रकार का चित्र श्रद्धा के दुःख से अभिभूत प्रकृति का है—

सन्ध्या नीलसरोसह में जो श्याम पराग बिखरते थे,
काल घाटियों के अंचल को वे धीरे से भरते थे।
तृण-गुल्मों से रोमाँचित नग सुनते उसकी दुःख गाथा,
श्रद्धा की सूनी सांसों से मिलकर जो स्वर भरते थे।

'लहर' में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं, जिनमें प्रकृति का उद्दीपन-रूप में चित्रण हुआ है। विरह-सम्बन्धी निम्नलिखित प्रगीत में प्रकृति का उद्दीपक रूप ही सामने आता है—

'मधुर माधवी सन्ध्या में,
जब रागारुण रवि होता अस्त।"

आज भी जब नक्षत्रों से प्रकाश की रश्मियाँ पृथ्वी पर अठखेलियाँ करती हैं, तब कवि को मिलन की वह विगत रात्रि स्मरण हो आती है।

३. **प्रतीक रूप में**—प्रकृति चित्रण के इस प्रकार में कवि अपने भावों को स्पष्ट रूप में न बताकर उन्हें प्रतीकों के माध्यम से व्यंजित करता है। 'प्रसाद' काव्य में प्रतीकात्मकता का अत्यधिक समावेश हुआ है। उन्होंने अधिकांश प्रतीकों का चयन प्रकृति-जगत् से किया है। 'लहर' कविता में 'लहर', 'आनन्द की भाव-लहर' का प्रतीक है। इसी प्रकार प्रेमी के लिए 'मधुप' 'प्रिया' के लिए 'मुकुल', प्रफुल्लता या आनन्द के लिए 'उषा' या 'प्रभात', विषाद के लिए 'पतझड़', मानसिक व्याकुलता के लिए 'झंझा' आदि का प्रयोग भी प्रसाद ने किया है। 'आँसू' काव्य की निम्नलिखित पंक्तियाँ इस दृष्टि से विशेष महत्व-पूर्ण बन पड़ी हैं—

झंझा झकोर-गर्जन था,
बिजली की नीरद-माला।
पाकर इस शून्य हृदय को,
सब ने आ डेरा डाला।

इसके अतिरिक्त, 'प्रलय की छाया' कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में भी प्रकृति-चित्रण के प्रतीकात्मक रूप का अत्यन्त सुन्दर नमूना मिलता है—

"पीते मकरन्द थे—
मेरे इस अधखिले आनन-सरोज का।
कितना सोहाग था, कैसा अनुराग था ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिली स्वर्ण-मल्लिका की सुरभित बल्लरी-सी
गुर्जर के थाले में मरन्द वर्षा करती मैं।"

४. **उपमान रूप में**—जब मूल विषय को स्पष्ट करने के लिए कवि प्रकृति के उपादानों से उनका सादृश्य या वैषम्य प्रदर्शित करे वहाँ प्रकृति-चित्रण का उपमान-रूप होता है। ऐसे स्थलों पर कवि प्रकृति का प्रयोग प्रभाव-साम्य के लिए करता है। 'लहर' की 'प्रलय की छाया' प्रगीत की नायिका कमला का सम्पूर्ण रूप-सौन्दर्य-चित्रण ऐसे ही प्रभाव-साम्य के उपकरणों की योजना से पूर्ण है—

नूपुरों की झनकार घुली मिली जाती थी
चरण-अलक्तक की लाली से।
जैसे अन्तरिक्ष की अरुणिमा
पी रही दिगन्त व्यापी सन्ध्या-संगीत को।
कितनी मादकता थी ?

इसी प्रकार 'कामायनी' की निम्नांकित पंक्तियों में भी कवि ने श्रद्धा के रूप-सौन्दर्य का चित्रण करते समय प्रकृति को उपमान-रूप में चित्रित किया है—

नील परिधान बीच सुकुमार,
खिल रहा मृदुल अधखिला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघ-वन बीच गुलाबी रंग।

५. **मानवीकरण-रूप में**—जहाँ प्रकृति को सजीव रूप में उपस्थित करते हुए उसे मानवी रूप (Personified form) प्रदान कर दिया जाय, वहाँ प्रकृति-चित्रण मानवीकरण रूप में होता है। छायावादी काव्य में प्रकृति-चित्रण का प्रस्तुत रूप प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। प्रायः सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति पर मानवीय भावों का आरोपण किया है। महाकवि 'निराला' संध्या का वर्णन करते हैं और उसे एक अपूर्व सुन्दरी के रूप में देखते हैं। 'प्रसाद' काव्य में भी ऐसे अनेक स्थल हैं, जहाँ प्रकृति पर मानवीय भावों का आरोपण किया गया है। 'प्रसाद' ने उसे रोते-गाते, हँसते-खेलते सभी रूपों में प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ 'लहर' के निम्नलिखित प्रगीत में कवि ने 'उषा' को पनिहारिन के रूप में चित्रित किया है। उस पर भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारीत्व का आरोपण कर कवि ने उसे अपूर्व सौन्दर्यमयी चेतनशीला के रूप में प्रस्तुत किया है—

बीती विभावरी जाग री !
अम्बर पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा नागरी ।

इसी प्रकार निम्नांकित पंक्तियों में कवि ने प्रकृति पर रतिश्रांता नायिका की भावनाओं का अत्यन्त सुन्दर आरोपण किया है।

आँखों से अलख जगाने को,
यह आज भैरवी आई है।
ऊषा-सी आँखों में कितनी,
मादकता भरी ललाई है।
कहता दिगंत से मलय-पवन,
प्राची की लाज भरी चितवन—
है रात घूम आई मधुवन,
यह आलस की अँगराई है।

प्रकृति पर मानवीय भावनाओं का आरोप उसे चेतनशील एवं सौदर्य-मण्डित बना देता है। प्रकृति का हमारे समक्ष नवीन परिधानों से अंगड़ाई लेना हमारे हृदय की जलन को अपनी मृदुल मुस्कान से शान्त करना आदि तत्व ऐसे हैं, जो हमें आगे बढ़ने को प्रेरित करते हैं। छायावादी काव्य की यह विशेषता उसकी अपनी निधि है।

६. **रहस्यात्मक रूप में**—प्रकृति-चित्रण के इस रूप में उसकी स्वतन्त्र सत्ता क न मानकर किसी अनन्त रहस्यमयी शक्ति की अभिव्यक्ति के साधन-रूप में चित्रित किया जाता है। 'लहर' के 'हे सागर संगम अरुण नील' प्रगीत में प्रकृति-चित्रण का यही रूप दृष्टिगत होता है। इन पंक्तियों में—

'पिङ्गल किरणों सी मधु लेखा,
हिम-शैल बालिका को तूने कब देखा।
कलरव संगीत सुनाती,
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।
आगमन अनंत मिलन बनकर—
बिखराता फेनिल तरल खील।
हे सागर सङ्गम अरुण नील !'

पर्याप्त रहस्यात्मकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी प्रकार 'कामायनी' के 'आशा' सर्ग की निम्नलिखित पंक्तियों में भी प्रकृति का रहस्यात्मक रूप में चित्रण किया गया है —

महानील इस परम व्योम में,
अन्तरिक्ष में ज्योतिर्मान,
ग्रह, नक्षत्र और विद्युत्कण
किसका करते-से संधान ?
छिप जाते हैं और निकलते
आकर्षण में खिंचे हुए,
तृण, वीरुध लहलहे हो रहे
किसके रस से सिंचे हुए ?

७. **उपदेशात्मक रूप में**—प्रकृति-चित्रण के रूप में कवि प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से पाठक को उपदेश अथवा सन्देश देता है। उपदेशात्मक रूप में प्रकृति-चित्रण करना आधुनिक विचारधारा की दृष्टि से सौन्दर्य को मलिन करना है। यदि उपदेश प्रत्यक्ष रूप से न आकर, प्राकृतिक तत्वों में अन्तर्निहित होकर आते हैं, तभी वे स्वाभाविक हो सकते हैं, अन्यथा नहीं। 'प्रसाद' में प्रकृति-चित्रण का यह रूप प्रमुखतः उपलब्ध नहीं होता, किन्तु उसका सर्वथा अभाव नहीं है। 'कामायनी' में प्रलय-वर्णन हमारे समक्ष एक अमिट सन्देश छोड़ता है। देवताओं के विलास की अति से रुष्ट होकर प्रकृति ने अपना विध्वंसकारी रूप उपस्थित किया है। इड़ा के साथ बलात्कार करने में जहाँ मनु के हृदय में प्रचण्ड आँधी की भाँति काम-वासना जागृत होती है, वहाँ प्रकृति उसके विरुद्ध हो जाती है। इस दृष्टि से निम्नलिखित उदाहरण अवेक्षणीय है—

जीवन तेरा क्षुद्र अंश है
व्यक्त नील घन-माला में,
सौदामिनी-सन्धि-सा सुन्दर
क्षण भर रहा उजाला में।

८. **पृष्ठभूमि या पूर्व-पीठिका के रूप में**—इस रूप में प्रकृति कहीं अनुकूल बनकर आती है और कहीं प्रतिकूल बनकर। आख्यान-कविताओं में 'प्रसाद' ने अपने कविता-काल के आरम्भ से ही प्रकृति का पृष्ठभूमि-रूप में प्रयोग किया है। 'चित्रकूट', 'प्रेम-पथिक', 'करुणालय' तथा 'कामायनी' आदि सर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्यों में इस प्रकार के चित्र उपलब्ध होते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'प्रसाद'-काव्य में प्रकृति-चित्रण के प्रायः सभी प्रमुख रूपों का अत्यन्त सुन्दर रूप में निर्वाह हुआ है। कवि ने प्रमुखतः आलम्बन, उद्दीपन, उपमान तथा मानवीकरण रूप में ही प्रकृति-चित्रण किया है, किन्तु उसके अन्य रूपों का भी सर्वथा तिरस्कार नहीं किया। कवि प्रमुखतः प्रकृति के सुन्दर एवं मधुर-कोमल रूप का ही पुजारी है, किन्तु प्रकृति के भीषण चित्र भी यत्र-तत्र उपलब्ध हो जाते हैं। 'कामायनी' का आरम्भ प्रकृति की क्रोड़ से होता है तथा पर्यवसान प्रकृति की भूमिका में, पर प्रारम्भ में प्रकृति का रौद्र एवं भीषण रूप सामने आता है और अन्त में प्रकृति अपनी शांतिदायिनी छाया में विश्राम देती हुई अपनी महिमा को चरितार्थ करती है। अन्ततः आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी के शब्दों में यही कहना है—'वे मानवीय इंगितों पर प्रकृति को साज सजाकर नाच नचा देते हैं।'

प्रश्न ७—'लहर' के आधार पर 'प्रसाद' जी के जीवन-दर्शन को स्पष्ट कीजिये।

अथवा

'लहर' में 'प्रसाद' जी का व्यक्तित्व' विषय पर एक लेख लिखिये।

उत्तर—'आँसू' यदि 'प्रसाद' के जीवन की हलचल है, तो 'लहर' उसकी शान्ति। 'आँसू' के उपरांत कवि 'प्रसाद' के काव्य में आशा का प्रबल स्वर सुनाई पड़ता है। ऐसा नहीं कि 'आँसू' के बाद सभी दुःखों और निराशाओं का सर्वथा अन्त हो गया हो। वैसा सम्भव भी न था और वह होता तो कवि, कवि न होकर तत्वज्ञानी हो गया होता। दुःख भी हैं और निराशाएं भी, किन्तु अब उन दुःखों और निराशाओं में कवि स्वयं को भुला नहीं देता।

जो आकर सदा के लिए लौट गया है, उस बचपन और यौवन की स्मृतियाँ कभी-कभी आती हैं, उनसे फिर एक बार खेल खेलने की इच्छा होती है। वह (कवि) अपने जीवन के कगारों पर खड़ा होकर इस लौट जाने वाली लहर को पुकारता है—

तू भूल न री, पंकज-बन में,
जीवन के इस सूनेपन में,
ओ प्यार पुलक से भरी ढुलक !
आ चूम पुलिन के विरस अधर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यौवन की मादकता का स्वर कवि के जीवन में कुछ इस प्रकार छा गया है कि वह सब कुछ जानकर और अनुभव करके भी उसे भुला नहीं पाता। वह शैशव की चंचलता, यौवन की खुमारी और वार्द्धक्य की गम्भीरता में अपने को प्रकट करता है। इस बहुभावमय जीवन का एक अच्छा प्रतिबिम्ब 'लहर' में मिलता है। इसमें विलास की स्मृतियाँ हैं, दो दिन प्रेम की गोद में सुख से बिता देने की मधुर आकांक्षा है, रूप एवं वैभव के चित्र हैं, जागरण की पुकार है, नियन्त्रण की प्रवृत्ति है और आनन्द का उल्लास है। इसमें खोना और पाना, विरह और मिलन, भोग और त्याग सभी कुछ हैं। इन सब के बीच कवि का स्वानन्दी जीवन-दर्शन सर्वत्र उपस्थित है। उसने कभी अपने आदर्शवाद में अपने प्रत्यक्षवाद को नहीं डूबने दिया, अपितु आदर्शवाद के छींटों से, स्वप्न की खुमारियों से जीवन के प्रत्यक्षवाद को जीवित एवं पुष्ट किया है।

'लहर' में रूप के अनेक चित्र हैं, विलास और वैभव के अनेक भाव हैं। हसरत और लालसा का भाव भी यत्र-तत्र मिलता है, किन्तु कहीं भी वासना की नग्नता अथवा अश्लीलता का आभास नहीं है। सर्वत्र रूप पर आवरण है और वासना पर नियन्त्रण। लालसा एवं हसरत का एक चित्र अवेक्षणीय है—

चिर तृषित कंठ से तृप्त-विधुर
वह कौन अकिञ्चन अति आतुर
\+ + +
धीरे से वह उठता पुकार—
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

प्रेम में असफलता का अनुभव उसकी अपूर्णता एवं वासना-मिश्रित रूप का द्योतक है। जहाँ अधिकार की इच्छा है, वहाँ वासना है और वहीं असफलता का तीव्र दंश भी है। जहाँ आत्म-समर्पण (self-submission) का भाव जितना प्रबल है, वहाँ प्रेम उतना ही शुद्ध एवं सात्विक है। शुद्ध प्रेम आत्मसमर्पण-प्रधान होता है, उसमें किसी प्रकार के प्रतिदान की भावना नहीं रहती।

कवि को अपना मधुमय अतीत पूर्णतः नहीं भूला। वह रह-रहकर उन रसभरे दिनों का स्मरण करता है—

आह रे, वह अधीर यौवन !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतीत की मधुर स्मृतियाँ उसके हृदय में अपार वेदना एवं कसक भर देती हैं। वह आज भी उन दिनों की पुनरावृत्ति चाहता है।

'लहर' के अधिकांश प्रगीत प्रणय-प्रधान हैं। कवि का प्रणय-काल अतीत के गर्भ में है, किन्तु प्रेम की मधुर घड़ियों की मादकता अब भी शेष है। वह विगत जीवन के लिए बार-बार ललचाता है। अतीत के इस आग्रह के मूल में कवि के वर्तमान-कालीन जीवन की नीरसता कार्य कर रही है। यही कारण है कि वह प्रिय को उपालम्भ भी देता है—

निधरक तूने ठुकराया तब
मेरी टूटी मृदु प्याली को।

कवि के मानस-पटल पर एक के बाद एक विगत चित्र उपस्थित होता जाता है। जब विगत यौवन को याद करता है, तो उसका हृदय करुण-क्रन्दन करने लगता है। अतः, वह अपने सुनहले जीवन पर आँसू की चार बूंदें टपका देता है, जिससे कागज कुछ इस प्रकार आर्द्र हो जाता है—

तुम्हारी आँखों का बचपन!
स्निग्ध संकेतों में सुकुमार,
बिछल, चल थक जाता तब हार,
छिड़कता अपना गीलापन,
उसी रस में तिरता जीवन।

कवि अतीत के मधुर क्षणों को भूलना चाहकर भी नहीं भुला पाता। वस्तुतः कोमल कुसुमों की रात में, चन्द्रमा की मधुर ज्योत्स्ना में, इठलाते भरे-पूरे यौवन वाली प्रिया के साथ बिताये दिनों को भुला पाना सम्भव भी तो नहीं। तभी तो वह पुकार उठता है—

वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे?
जब सावन घन-सघन बरसते—
इन आँखों की छाया भर थे।

उसका हृदय विरह-व्यथित अवश्य है, किन्तु फिर भी वह निराश एवं हतोत्साहित न होकर आशान्वित होता है और एकान्त में नये स्वर्ग का निर्माण करता हुआ मिलता है—

जवा कुसुम-सी उषा खिलेगी
मेरी लघु प्राची में,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँसी भरे उस अरुण अधर का
राग रँगेगा दिन को ।।

कवि का ध्यान केवल अतीत के मधुर क्षणों ही में केन्द्रित हो, ऐसी बात नही है । वह वर्तमान को भी नहीं भूलता और यही कारण है कि वह अपने जीवन में नवीन प्रभात लाना चाहता है । प्रभात नयी आशा एवं स्फूर्ति का प्रतीक है—

अब जागो जीवन के प्रभात !
वसुधा पर ओस बने बिखरे
हिमकन आँसू जो क्षोभ भरे
ऊषा बटोरती अरुण गात !

कवि आरम्भ से ही प्रेम-पथ का पथिक था और वहाँ पहुंचना चाहता था, जिसके आगे कोई राह न हो । 'लहर' में आकर उसकी प्रेम-भावना अपने गन्तव्य पर पहुंच गयी है । अब उसके प्रेम में वासना की तो बात ही क्या, प्रतिदान की भावना का भी लोप हो गया है । उसका विश्वास है कि प्रेम तो दिया जाता है, लिया नहीं जाता । जहाँ प्रतिदान की भावना प्रबल होगी, वहाँ कुछ और हो सकता है, पर प्रेम नहीं —

पागल रे ! वह मिलता है कब,
उसको तो देते ही हैं सब ।
आंसू के कन कन से गिनकर
यह विश्व लिए है ऋण उधार,
तू क्यों फिर उठता है पुकार ?—
मुझको न मिला रे कभी प्यार ।

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने विश्व-प्रेम के सम्बन्ध में अप्रतिम सन्देश दिया है । यदि सब प्यार देने ही लगें, किसी में लेने की अथवा पाने की भावना न हो, तो विश्व पर स्वर्ग लौटने लगे, सर्वत्र आनन्द एवं शान्ति की वर्षा होने लगे ।

जहाँ तक आत्मपरक-गीतों का सम्बन्ध है, सर्वप्रथम पाठक का ध्यान इस आत्मकथा की ओर आकृष्ट होता है—

मधुप गुनगुनाकर कहे जाता कौन कहानी यह अपनी ।
मुरझाकर गिर रही पत्तियाँ देखो कितनी आज घनी ।

\+ \+ \+

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिला कहाँ वह सुख जिसका मैं स्वप्न देखकर जाग गया ?
आलिङ्गन में आते-आते मुसक्याकर जो भाग गया ।

इस आत्म-कथा में कवि ने अपनी एक विगत घटना का उल्लेख किया है। इससे यह भी स्पष्ट है कि उसकी स्मृति कवि आजीवन संजोए रहा और वह उसकी जीवन-यात्रा की पाथेय और काव्य-रचना की मूल प्रेरणास्रोत बनी रही। डॉ० भोलानाथ तिवारी के शब्दों में—'मुझे लगता है कि आँसू का सम्बन्ध भी इसी से हैं।····· अधिक सम्भव है कि 'आँसू' का आलम्बन इस आत्मकथा का 'आलिंगन में आते-आते मुसक्याकर जो भाग गया' ही हो।' विभिन्न संकेत-सूत्रों में कवि ने इस बात का भी उल्लेख किया है कि 'अभी आत्म-कथा कहने का समय नहीं आया है। उसके भोलेपन की बराबर हँसी उड़ाई गई, किन्तु वह तटस्थ रहा, उसने किसी की प्रवंचना नहीं की—यही सत्-साहित्यकार की सबसे बड़ी विशेषता है।

आत्मपरक गीतों में एक अन्य गीत है—

निज अलकों के अन्धकार में तुम कैसे छिप आओगे ?
इतना सजग कुतूहल ! ठहरो, यह न कभी बन पाओगे ।

प्रियतम अब अलकों के अन्धकार में नहीं छिप सकता, प्रेमी ने उसे प्राणों में बसा लिया है। कवि ने जिस प्रिय-प्रियतम-सम्बन्ध की चर्चा की है, वह 'सत्य' एवं 'शिव' से समन्वित है। अब तक प्रियतम केवल इसी कारण आँख-मिचौनी खेलता रहा, क्योंकि प्रेमी ने अपने अस्तित्व को विलग रखा था। आज कवि ने इस रहस्य का ज्ञान पा लिया है कि उसका प्रिय उसके अन्तस् में ही बन्दी है। तभी तो वह प्रेम के क्षेत्र में किसी प्रकार के परिचय की अपेक्षा नहीं करता—

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ ?
इसमें है क्या धरा, सुनो।
मानस-जलधि रहे चिर चुम्बित—
मेरे क्षितिज ! उदार बनो।

इन पंक्तियों में कवि प्रेम का उदात्तीकरण (Sublimation of love) करता दीखता है। अब उसके प्रेम में अधिक व्यापकता एवं उदारता आ गयी है। कभी वह प्रियतम की आँखों के भोलेपन पर रीझ उठा था और उसके साथ अल्हड़ खेल खेला करता था, किन्तु आज वह खेल समाप्त हो चुका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज उसने सारल्य को ही अपना धन मान लिया है। वह प्रियतम को अपने नेत्रों की पुत्तलिका में बसा लेना चाहता है—

मेरी आँखों की पुतली में तू बनकर प्राण समा जा रे!

जिस प्रियतम ने उसे निराशा एवं पीड़ा दी, आज वही उसे जीवन-गीत सुनाये, यही प्रणयी की कामना है। संसार भी स्तम्भित रह जाय उस पुन-मिलन को देखकर।

खिंच जाय अधर पर वह रेखा—
जिसमें अंकित हो मधु लेखा,
जिसको यह विश्व करे देखा,
वह स्मित का चित्र बना जा रे।

अब वह अपने प्रियतम को केवल अपने बाहुपाश में जकड़ कर नहीं रखना चाहता। वह प्रार्थना करता है कि—

जीवन धन! इस जले जगत् को वृन्दावन बन जाने दो।'

प्रणयी शशि-सी सुन्दर रूप-विभा नहीं देखना चाहता, वह नभ के अभिनव कलरव में अपना अनुराग फैला देने की आकांक्षा रखता है—

मेरा अनुराग फैलने दो,
नभ के अभिनव कलरव में।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि 'आँसू' के कवि से जो आशा थी, वह 'लहर' में पूरी हुई है। कवि अपनी यात्रा और साधना में आगे बढ़ा है। उसका क्षितिज पहले से विस्तृत है। उसका प्रेम प्रशस्त है। उसका सौन्दर्य-वर्णन निर्दोष है। उसका जीवन-दर्शन व्यापक है। उसने जीवन का मर्म समझा और उसे अंगीकार किया है। श्री रामनाथ 'सुमन' के निम्नोद्धृत शब्द इस विषय में विशेषतः उल्लेखनीय हैं—

'काव्य जीवन को चिर-आनन्द का जो संदेश देता है, उसे हम इसमें अधिक स्पष्ट रूप में देखते हैं। वासना का दंश टूट गया है और प्रेम यौवन की कुंज-गली से निकल कर जीवन के राजमार्ग पर आ गया है और उसने आशा और प्रकाश के साथ अपनी मानवता की विजय-यात्रा आरम्भ कर-दी है।'

प्रश्न ८—'लहर' में व्यक्त कवि की प्रेम-सौन्दर्य-भावना का स्पष्टीकरण कीजिए।

उत्तर—प्रेम अव्यक्त-अचिन्त्य निर्गुण ब्रह्म की आदि स्फुरण सृष्टि की मूल प्रेरणा और जगत् की प्रथम संचालक शक्ति है। कीरी से कुंजर तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितने भी जीव हैं, सब उसकी उत्ताल हिल्लोल के प्रवाह में प्रवाहित हो रहे हैं। इतना ही नहीं, जड़-जगत् के पदार्थ भी प्रेम की मोहिनी के वशीभूत हो, रस और आनन्द के महोत्सव में सम्मिलित हो रहे हैं। मानव-प्राणी में भी प्रेम की यह भावना आदिकाल से ही उसके हृदय की धड़कन और रक्त की लालिमा बनकर जीवित है। जहाँ और सब लोग उसका अनुभव करके ही मौन हो जाते हैं, वहाँ कवि अपने उस अनुभव को छन्दोबद्ध करके हल्का होता है और सन्तोष-लाभ करता है। जीवन की भाँति साहित्य की भी मूल प्रेरणा प्रेम ही है। संसार के साहित्य का बृहदांश प्रेम से ही निर्मित है। प्रेमानुभव के दो पक्ष हैं—संयोग और वियोग। साहित्य में संयोग की अपेक्षा वियोग-शृंगार की अभिव्यक्ति अधिक हुई है। एकनिष्ठ और विश्वासपूर्ण प्रेम में विरह की व्यथा और व्याकुलता अपने चरमोत्कर्ष में कवि को आत्मा के प्रदेश में उड़ा ले जाती है।

प्रेम के साथ ही सौन्दर्य का प्रश्न भी जुड़ा है। सौन्दर्य का मुख्य गुण है—आकर्षण। आकर्षण-विकर्षण की क्रिया-प्रतिक्रिया अणु-परमाणु में प्रत्येक क्षण चल रही है। कब कौन-सा अणु किस अणु को आकृष्ट कर ले, कुछ पता नहीं। इतनी व्यापक सृष्टि में एक हृदय वास्तव में एक ही बार सच्चे आकर्षण की प्रेरणा से किसी दूसरे हृदय की ओर खिंचता है। दो परमाणुओं की भाँति दो हृदय यदि अपनी चुम्बकीय शक्ति से परस्पर खिंच गये, मिल गये और एक हो गये तो ठीक है, अन्यथा सौन्दर्य का आकर्षण और प्रेम की तृष्णा लिए, व्यक्ति क्षुब्ध हो जाता है।

सौन्दर्य का आकर्षण मन में प्रेम-ज्वाला सुलगा देता है। पर, यह सदा रूप का ही पर्याय नहीं होता। रूप बाहरी होता है, जब कि सौन्दर्य भीतरी। प्राय 'सूक्ष्म' में सौन्दर्य निहित होता है, 'स्थूल' में नहीं।

प्रेम और सौन्दर्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। 'प्रेम' का विषय स्थूलतः साहित्य के स्थायी भाव 'रति' पर आधारित 'शृंगाररस' से सम्बन्धित है और 'सौन्दर्य' शृंगाररस के आलम्बन का गुण-धर्म है। प्रेम के अन्तर्गत दाम्पत्य, भक्ति, पूज्य पुरुष अथवा गुरुविषयक प्रेम, राष्ट्र-प्रेम, प्रकृति-प्रेम आदि सब कुछ समाविष्ट हो जाता है। पर साहित्य की रूढ़ि तथा जीवन के अनुभव के आधार पर प्रणय अथवा दाम्पत्य-प्रेम ही प्रेम का केन्द्रीय विषय ठहरता है।

सौन्दर्य का क्षेत्र भी कम व्यापक नहीं है। जो कुछ भी आत्मा के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वरणीय एवं आकर्षक है, वह सुन्दर है। 'सौन्दर्य' शब्द मानव-शरीर तक ही सीमित नहीं, उसके अनेक रूप हैं। प्रमुख रूप तीन हैं– १. आन्तरिक सौन्दर्य अथवा शील, २. प्राकृतिक सौन्दर्य और ३. कलागत सौन्दर्य। शील तथा प्राकृतिक सौन्दर्य तो स्पष्ट ही है। कला का सौन्दर्य कला-कृतियों के अनुशीलन से तथा कल्पना की सहायता से मानसिक नेत्रों को प्रत्यक्षतः हो सकता है।

जहाँ तक 'प्रसाद'-काव्य का सम्बन्ध है, उसकी आधार-शिला ही प्रेम-सौन्दर्य जैसे तत्वों पर अधिष्ठित है। 'प्रसाद' के प्रेम-निरूपण को देखकर उनकी अनुभूति की तीव्रता, हृदय की विदग्धता, भाव-विचार की उदात्तता, कल्पना की रमणीयता और शैली की प्रौढ़ता एवं मौलिकता से प्रभावित हुए बिना कोई रह नहीं सकता। कविता ही क्या, उनके समस्त काव्य में 'प्रेम' मुख्य विषय रहा है। वस्तुतः 'प्रसाद' सच्चे रसवादी, जीवनवादी, आनन्दवादी, और प्रकृतिवादी कलाकार हैं। उनकी साधना मधुर साधना है, जिसमें एक उचित सीमा तक ऐन्द्रिक सुखों की स्वीकृति है। वह सरस-मधुर, रसभीगे, सुन्दर एवं कल्याणकारी, संक्षेप में हरे-भरे सत्य के आकांक्षी हैं।

सम्पूर्ण 'लहर' में मादकता एवं माधुरी का वातावरण व्याप्त है। माधुर्य-पूर्ण वातावरण कवि की सौन्दर्य-भावना का ही परिणाम है। सुन्दर और मधुर का परस्पर सम्बन्ध है। यह माधुर्य विषयगत है। 'लहर' के प्रगीतों की वस्तु या विषय मधुर है। विषय की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों को निम्न-लिखित वर्गों में रखा जा सकता है—

१. प्रेमानुभूति-सम्बन्धी प्रगीत।
२. प्रकृति के रमणीय और मनोरम चित्रण सम्बन्धी प्रगीत।
३. जीवन-दृष्टि सम्बन्धी प्रगीत (जिसमें कवि का दार्शनिक चिन्तन प्रकट हुआ है।)
४. कथा प्रसंगों पर आधृत, मुक्तछन्दों में लिखित इतिहास-सम्बन्धी लम्बे-लम्बे प्रगीत।

'लहर' के अधिकांश प्रगीतों का सम्बन्ध प्रेम-सौन्दर्य-भावना के साथ है। प्रेमानुभूति का तत्व अन्तिम तीन-चार गीतों को छोड़कर प्रायः अन्य सभी गीतों में अत्यन्त प्रचुरता से मिलता है। प्रेम के सुखमय और दुःखमय दोनों रूप 'लहर' में लक्षित होते हैं। कहीं कवि प्रिय के रूप का चित्रण करता है, कहीं रूप के मधुर प्रभाव का और कहीं वह प्रकृति को भी सुन्दर रूप में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित करता है। निम्नोद्धृत पंक्तियों में कवि ने स्वयं को एक प्रेम-भिखारी के रूप में चित्रित किया है—

उस दिन जब जीवन के पथ में,
छिन्न पात्र ले कम्पित कर में,
मधु-भिक्षा की रटन अधर में,
इस अनजाने निकट नगर में,
आ पहुँचा था एक अकिञ्चन।

इसी गीत में कुछ आगे चलकर कवि ने प्रेम के आलम्बन का असाधारण प्रभाव भी दर्शाया है—

फूलों ने पंखुरियाँ खोलीं,
आँखें करने लगीं ठिठोली,
हृदयों ने न सम्हाली झोली,
लुटने लगे विकल पागल मन।

उसे प्रतिदान में प्रिय से इतना अधिक प्रेम-रस मिला कि कवि के आश्चर्य की कोई सीमा ही न रही। कवि को ऐसा प्रतीत हो रहा मानो चारों ओर माधुर्य एवं मांगल्य की वर्षा हो रही हो—

मधुमंगल की वर्षा होती,
काँटों ने भी पहना मोती,
जिसे बटोर रही थी रोती—
आशा, समझ मिला अपना धन।

वस्तुतः 'प्रसाद' का कवि सर्वत्र सौन्दर्य-प्रेरित रहा है। यही कारण है कि उसने अपने प्रेम के आलम्बन को मधुर बनाया है और उसके स्वरूप को निर्मित करने में सौन्दर्य-तत्व का आश्रय लिया है, शक्ति और शील का नहीं। कवि अपने प्रिय का स्वरूप चित्रित करते हुए कहता है—

जिसके अरुण कपोलों की मतवाली सुन्दर छाया में।
अनुरागिनी उषा लेती थी निज सुहाग मधुमाया में॥

कवि को अपने प्रिय का साक्षात्कार यद्यपि कुछ क्षणों के लिए ही हुआ था, तथापि वे कुछ क्षण कवि के लिए असाधारण महत्व रखते हैं। अतीत के मधुर दिनों की स्मृति आज भी उसके मानस-पटल पर अत्यन्त स्पष्ट है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथा—

वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे,
जब सावन-घन-सघन बरसते—
इन आँखों की छाया भर के !
... ...
मेरी जीवन-स्मृति के जिसमें—
खिल उठते वे रूप मधुर थे।

इसी प्रकार, निम्न पंक्तियों में कवि अपने प्रिय की शैशवकालीन क्रीड़ाओं का स्मरण करता है, जब प्रिय के नेत्रों में एक आकर्षक भोलापन छाया था।

तुम्हारी आँखों का बचपन !
खेलता था जब अल्हड़ खेल,
अजिर के उर में भरा कुलेल,
हारता था, हँस-हँस कर मन
आह रे, वह व्यतीत जीवन !

अपार सौन्दर्यमय प्रेमी के प्रभाव का वर्णन भी अत्यन्त मार्मिक बन पड़ा है--

स्निग्ध संकेतों में सुकुमार,
बिछल, चल थक जाता तब हार,
छिड़कता अपना गीलापन,
उसी रस में तिरता जीवन ।

'उसी रस में तिरता जीवन' में उस मधुमय का प्रभाव कितना तीव्र है।

'लहर' के कुछ ऐतिहासिक गीतों को छोड़कर प्रायः सभी गीत सौन्दर्य की अतृप्ति से निर्मित है । कवि में सर्वत्र सौन्दर्य की भूख बनी हुई है। यथा—

उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊं मधुर चाँदनी रातों की ।
अरे खिलखिलाकर हँसते होने वाली उन बातों की।

प्रिय के अपार सौन्दर्य का प्रभाव कवि के आन्तरिक कलाकार को जगा देता है। कवि का प्रेमी लावण्यमय होने के साथ-साथ रसमय भी है, जिसका प्रभाव असाधारण है—

'काली आँखों का अन्धकार
जब हो जाता है वार-पार,
मद पिये अचेतन कलाकार
उन्मीलित करता क्षितिज पार—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह चित्र ! रंग का ले बहार
जिसमें है केवल प्यार प्यार !

'लहर' के कवि की लालसाएं अतृप्त हैं और यह अतृप्ति की सघनता ही सौन्दर्य का रूपान्तरित रूप है। कहीं तो यह सौन्दर्य-लालसा व्यंग्यात्मक शैली में व्यक्त हुई है और कहीं सर्वथा अभिधात्मक शैली में—

चिर तृषित कंठ से तृप्त-विधुर
वह कौन अकिंचन अति आतुर
... ...
धीरे से वह उठता पुकार –
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

वेदना, अभिलाषा, उपालम्भ, उन्मुक्त ढंग से यौवन-महिमा, अभावों और अतृप्तियों का गान, अतीत के मधुमय क्षणों का गान आदि सभी 'लहर' में यत्र-तत्र वर्तमान हैं। अभिलाषा की अभिव्यक्ति अनेक प्रगीतों में हुई है। यथा—

मेरी आँखों की पुतली में
तू बनकर प्राण समा जा रे।

उपालम्भ द्वारा प्रेम की अतृप्त अनुभूति का करुणापूर्ण वर्णन भी अत्यन्त मार्मिक बन पड़ा है—

निधरक तूने ठुकराया तब,
मेरी टूटी मृदु प्याली को।
उसके सूखे अधर मांगते,
तेरे चरणों की लाली को।

उपर्युक्त समस्त उद्धरणों से कवि की सुकुमार, मधुर एवं प्रेममयी भावनाओं का ही परिचय मिलता है। समस्त प्रगीतों में मधुमयता और रसमयता का संचार है। सम्भवतः इसीलिए डा० विश्वनाथ प्रसाद ने कहा है कि 'प्रसाद' ने अपने काव्य में 'मधुरतम' का चित्रण किया है। 'लहर' में यह रोमांस 'प्रसाद' की सूक्ष्म और सुरुचिपूर्ण प्रेम-भावना के रूप में प्रकट हुआ है। यौवनागमन के कारण उनकी नायिका के मालती-कुंज में प्रेम की मादक कामनाएं खिल उठती हैं। वह अपने सौन्दर्य पर मुग्ध होकर स्वयं ही पागल होने लगती है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे उस यौवन के मालती-मुकुल में।
रन्ध्र खोजती थीं, रजनी की नीली किरणें
उसे उकसाने को—हँसाने को।
पागल हुई मैं अपनी ही मृदुगन्ध से—
कस्तूरी मृग जैसी। —प्रलय की छाया

प्रकृति में मानवीय भावना का आरोपण करते समय भी कवि प्रेम-सौन्दर्य-भावना से प्रेरित रहा है। प्रकृति-चित्रण का कितना मनोरम एवं रमणीय रूप निम्नलिखित पंक्तियों में दृष्टिगत होता है—

बीती विभावरी जाग री।
अम्बर-पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा नागरी।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अञ्चल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल-रस-गागरी।

इस प्रकार कवि ने 'लहर' में प्रकृति के विभिन्न दृश्यों (उषावेला, प्रभात, नीरव-प्रशान्त-रजनी, वन-प्रदेश, पर्वतमाल्य आदि) का अत्यन्त चारु-चित्रण किया है। प्राकृतिक दृश्यों के चित्रांकन के मूल में भी कवि की प्रेम एवं सौन्दर्य-विषयक पिपासा कार्य कर रही है। 'लहर' में 'प्रेम' और 'सौन्दर्य' से सम्बद्ध इतने अधिक तत्व उपलब्ध होते हैं कि यदि उन सब को एक स्थान पर एकत्र कर लिया जाय तो एक भरा-पूरा तथा व्यवस्थित प्रेम-दर्शन (Philosophy of love) और सौन्दर्य-शास्त्र (Aesthetics) तैयार हो सकता है। निश्चय ही 'प्रसाद'-काव्य में प्रेम-सौन्दर्य-भावना को बहुत उच्च स्थान पर अधिष्ठित किया गया है 'प्रसाद' के कलाकार का यही तो गौरव है।

प्रश्न ९—छायावादी काव्य की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परख कीजिए।

अथवा

'लहर' में छायावादी तत्व' पर एक निबन्ध लिखिए।

उत्तर—'लहर' में छायावादी तत्वों का सन्धान करने से पूर्व छायावादी काव्य के स्वरूप का परिचय प्राप्त करना संगत होगा। छायावादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक हिन्दी-काव्य की सर्वप्रमुख काव्यधारा है, जिसका पूर्ण उत्कर्ष दो महायुद्धों के मध्य की अवधि में रहा। इस काव्य-धारा के नाम के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी कहना कठिन है। कारण, 'छाया' शब्द का छायावादी काव्य के स्वरूप एवं लक्षणों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। अनेक विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से इस काव्य का स्वरूप स्पष्ट करने का प्रयास किया है। उन सब का यहाँ उल्लेख करना न तो सम्भव है और न ही युक्ति-संगत। अतः कुछ प्रमुख मन्तव्यों को ही यहाँ उद्धृत किया जायगा—

१. 'छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, जहाँ उसका सम्बन्ध काव्य-वस्तु से होता है अर्थात् जहाँ कवि उस अनन्त और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन मानकर अत्यन्त चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है। छायावाद का दूसरा प्रयोग काव्य-शैली या पद्धति-विशेष के व्यापक अर्थ में है।' —आचार्य शुक्ल

२. 'परमात्मा की छाया आत्मा में पड़ने लगती है और आत्मा की छाया परमात्मा में। यही छायावाद है।' —डा० रामकुमार वर्मा

३. 'छायावाद एक विशाल सांस्कृतिक चेतना का परिणाम था, यद्यपि उसमें नवीन शिक्षा के परिणाम होने के चिह्न स्पष्ट हैं तथापि वह केवल पाश्चात्य प्रभाव नहीं था, कवियों की भीतरी व्याकुलता ने ही नवीन भाषा-शैली में अपने को अभिव्यक्त किया है।' —डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी

४. 'छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है।..... छायावाद एक विशेष प्रकार की भावपद्धति है, जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है। जिस प्रकार भक्ति-काव्य जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण था और रीति-काव्य एक दूसरे प्रकार का, उसी प्रकार छायावाद भी एक विशेष प्रकार का भावात्मक दृष्टिकोण है।' —डा० नगेन्द्र

५. 'छाया भारतीय दृष्टि से अनुभूति और अभिव्यक्ति की भंगिमा पर अधिक निर्भर करती है। ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौन्दर्य, प्रकृति-विधान के साथ स्वानुभूति की विवृति छायावाद की विशेषताएं हैं।' —प्रसाद

उपर्युक्त मन्तव्यों से स्पष्ट है कि छायावादी काव्य में प्रमुखतः प्रेम-सौन्दर्य-भावना, प्रकृति का मानवीकरण, वेदना एवं निराशा की विवृति, रहस्यवादिता, लाक्षणिकता, संगीतात्मकता आत्मनिष्ठता एवं प्रतीकात्मकता आदि तत्व पाये जाते हैं। अब हम 'लहर' के प्रगीतों के आधार पर छायावादी काव्य के प्रमुख-तत्वों का सन्धान करेंगे।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. **प्रेम-सौन्दर्य-भावना**—'लहर' के अधिकांश प्रगीतों में प्रेम-सौन्दर्य-भावना का सुन्दर प्रकटीकरण हुआ है। कवि सर्वत्र प्रेम-सौन्दर्य-प्रेरित है। प्रेम के सुखमय एवं दुःखमय दोनों रूप 'लहर' में उपलब्ध होते हैं। कहीं कवि अतीत के मधुमय क्षणों का स्मरण करता है, तो कहीं प्रेम में प्रवंचित होने की बात कहता है। कहीं यौवन की अधीरता का चित्रण करता है, तो कहीं प्रिय के प्रति उपालम्भ व्यक्त करता है। यथा—

(क) आह रे वह अधीर यौवन।
अधर में वह अधरों की प्यास,
नयन में दर्शन का विश्वास,
... ...
बिखर भर देते अखिल भुवन,
वही पागल अधीर यौवन!

(ख) निधरक तूने ठुकराया तब,
मेरी टूटी मृदु प्याली को।
उसके सूखे अधर माँगते,
तेरे चरणों की लाली को।

वस्तुतः 'लहर' के कवि की लालसाएं अतृप्त हैं और यह अतृप्ति की सघनता ही सौन्दर्य का रूपान्तरित रूप है। कहीं तो यह सौन्दर्य-लालसा व्यंग्यात्मक शैली में प्रकट हुई है और कहीं सर्वथा अभिधात्मक शैली में। यथा—

(क) वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे?
जब सावन-घन सघन बरसते—
इन आँखों की छाया भर थे।
+ + +
मेरी जीवन-स्मृति के जिसमें
खिल उठते वे रूप मधुर थे।

(ख) धीरे से वह उठता पुकार
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

इसके अतिरिक्त 'लहर' में कुछ स्थलों पर कवि ने प्रेम का उदात्तीकरण (Sublimation of Love) किया है। वह ससीम से असीम की ओर तथा व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर हुआ है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेरा अनुराग फैलने दो
नभ के अभिनव कलरव में।'

उसे प्रेम के क्षेत्र में 'मैं' और 'तू' के परिचय व्यर्थ एवं अरुचिकर प्रतीत होते हैं—

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ ?
इसमें क्या है धरा, सुनो।
मानस-जलधि रहे चिर चुम्बित—
मेरे क्षितिज ! उदार बनो।

इस प्रकार प्रेम-सौन्दर्य-भावना की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीत छायावादी काव्य के सुन्दर निदर्शन हैं।

२. **प्रकृति-चित्रण**—छायावादी कवि प्रकृति के अनेक भव्य चित्रों का चारु-चित्रण करता है वह प्रकृति पर मानवीय भावनाओं का आरोपण करता है। यह प्रवृत्ति 'प्रसाद,' 'पंत', 'निराला' एवं महादेवी वर्मा आदि छायावाद के समस्त प्रमुख कवियों में दृष्टिगोचर होती है। 'लहर' में भी ऐसे अनेक प्रगीत हैं, जिनमें कवि ने प्रकृति के नाना भव्य चित्र प्रस्तुत किये हैं। प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से उसका निम्न प्रगीत कितना मनोहारी बन पड़ा है—

उठ उठ री लघु लोल लहर
करुणा की नव अँगराई-सी,
मलयानिल की परछाई-सी
इस सूखे तट पर छिटक छहर।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित पंक्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जिनमें कवि ने प्रभातकालीन ऊषा का भारतीय रमणी के रूप में अत्यन्त सफल चित्रांकन किया है। ऊषा आकाश में उदित होती है, मानो वह पनघट पर जल भरने आती हो—

बीती विभावरी जाग री !
अम्बर-घट में डुबो रही—
तारा-पनघट ऊषा नागरी।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अञ्चल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल रस-गागरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. **वेदना एवं निराशा की विवृत्ति** – 'प्रसाद' 'पंत' महादेवी वर्मा आदि छायावादी कवियों ने अपने काव्यों में प्रेमजन्य वेदना एवं निराशाका प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से चित्रण किया है। 'प्रसाद' के 'आँसू', 'झरना,' एवं 'लहर' के अनेक प्रगीतों में प्रेम-वेदना एवं निराशा की अत्यन्त सुन्दर विवृति हुई है। 'आँसू' काव्य की निम्नोद्धृत पंक्तियाँ इस दृष्टि से अवलोकनीय हैं—

झंझा झकोर गर्जन था,
बिजली थी नीरद माला।
पाकर इस शून्य हृदय को,
सबने आ डेरा डाला।

'लहर' के निम्नलिखित प्रगीत में भी कवि अपने अतीत के मधुमय दिनों का स्मरण करते हुए अपनी मनोव्यथा का अत्यन्त सटीक शब्दों में बखान कर रहा है—

उस दिन जब जीवन के पथ में,
छिन्न पात्र ले कम्पित कर में,
मधु-भिक्षा की रटन अधर में,
इस अनजाने निकट नगर में,
आ पहुँचा था एक अकिञ्चन।

'छिन्न-पात्र' कवि का भग्नहृदय (Broken heart) ही है, कुछ और नहीं।

अन्यत्र भी कवि ने प्रेमजन्य निराशा एवं अतृप्त भावना का चित्रण किया है—

चिर-तृषित कण्ठ से तृप्त-विधुर
वह कौन अकिंचन अति आतुर
+ + +
पागल रे ! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही हैं सब
... ...
तू क्यों फिर उठता है पुकार ? —
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

४. **आत्मनिष्ठता**—छायावादी काव्य की एक प्रमुख विशेषता है—आत्मनिष्ठता, जिसके अनुसार वह अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है बाह्य-पदार्थों का वर्णन-विश्लेषण उसकी दृष्टि में उतना महत्व नहीं रखता, जितना कि आन्तरिक अनुभूतियों का। दूसरे शब्दों में 'अहं' भावना (Egoism) छायावादी कवि की मुख्य विशेषता है। 'प्रसाद' का 'आँसू' तथा 'पंत' जी का 'उच्छ्वास' काव्य व्यक्तिवादी अभिव्यक्ति के सुन्दर निदर्शन हैं। जहाँ तक 'लहर' के प्रगीतों का सम्बन्ध है, उसमें भी कवि के व्यक्तिगत सुख-दुःखों का अत्यन्त स्पष्ट व्यक्तीकरण हुआ है। कुछ उदाहरण अवेक्षणीय हैं—

(क) उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊँ मधुर चाँदनी रातों की।
अरे खिलखिलाकर हँसते होने वाली उन बातों की।
मिला कहाँ वह सुख जिसका मैं स्वप्न देखकर जाग गया?
आलिङ्गन में आते-आते मुसक्या कर जो भाग गया।

(ख) धीरे से वह उठता पुकार,
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

'प्रलय की छाया' में कवि की 'अहं' भावना नायिका कमला की उक्तियों के माध्यम से व्यक्त हुई है। जब सौन्दर्य की देवी कमला 'रूप रानी गुजरात की' के देश पर सुलतान ने आक्रमण किया, उस समय भी उसका अहं (Ego) समाप्त नहीं हुआ और वह—

'सोचती थी—
पद्मिनी जली थी स्वयं किन्तु मैं जलाऊँगी—
वह दावानल ज्वाला
जिसमें सुलतान जले।
देखे तो प्रचण्ड रूप-ज्वाला-सी धधकती
मुझको सजीव वह अपने विरुद्ध।'

इस प्रकार स्पष्ट है कि कहीं कवि ने प्रत्यक्ष रूप से आत्माभिव्यक्ति की है और कहीं पात्र-विशेष के माध्यम से। दोनों ही स्थितियों में 'अहं' भावना (Egoism) अत्यन्त मुखर है।

५. **रहस्यवादिता**—छायावादी काव्य में रहस्यभावना का भी सुन्दर समावेश हुआ है। 'प्रसाद,' 'पंत' महादेवी वर्मा और 'निराला' सभी छायावादी कवि किसी-न-किसी रूप में रहस्यवादी भी हैं। 'कामायनी,' 'लहर', 'आँसू' और 'झरना' में अनेक स्थलों पर 'प्रसाद' जी ने रहस्यवादी भावनाएं व्यक्त की हैं। उदाहरणार्थ 'कामायनी' की निम्नोद्धृत पंक्तियों में रहस्यवादी भावना अत्यन्त मुखर है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महानील इस परम व्योम में,
अंतरिक्ष में ज्योतिर्मान,
ग्रह, नक्षत्र और विद्युत्कण
किसका करते-से संधान ?
... ...
हे अनन्त रमणीय ! कौन तुम ?
यह मैं कैसे कह सकता।
कैसे हो ? क्या हो ? इसका तो
भार विचार न सह सकता।
हे विराट् ! हे विश्वदेव ! तुम
कुछ हो, ऐसा होता भान—
मंद-गंभीर-धीर-स्वर-संयुत
यही कर रहा सागर गान।

'लहर' के प्रगीतों में भी कवि की भावनाएं रहस्यवादी पुट लिए हैं। कवि ने मूलतः अपनी और प्रिय की बात कहकर आत्मा एवं परमात्मा के मिलनेच्छा को ही स्पष्ट किया है। कवि आत्मा और परमात्मा में पूर्ण अभिन्नता मानता है। उसे 'मैं' और 'तू' के भेदमूलक प्रश्न सर्वथा व्यर्थ प्रतीत होते हैं। इसीलिए वह कह उठता है—

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ ?
इस में है क्या धरा, सुनो।
मानस-जलधि रहे चिर चुम्बित—
मेरे क्षितिज ! उदार बनो।

इसके अतिरिक्त 'हे सागर सङ्गम अरुण नील' प्रगीत भी रहस्यवादिता का सुन्दर उदाहरण है, जहाँ कवि ने सागर तथा सरिता को क्रमशः ब्रह्म एवं जीव रूप में चित्रित किया है।

६. **लाक्षणिकता**—लाक्षणिकता छायावादी काव्य की अन्यतम विशेषता है। लाक्षणिकता का सम्बन्ध लक्षणा शब्द-शक्ति से है जहाँ मुख्यार्थ के बाधित होने पर मुख्यार्थ से सम्बद्ध किसी अन्य अर्थ का बोध होता है। छायावादी काव्य में लक्षणा के एक-से-एक सुन्दर उदाहरण देखने को मिलते हैं। कारण, छायावादी कवियों की सूक्ष्म भावानुभूति लाक्षणिक प्रयोगों द्वारा ही अभिव्यक्ति पा सकती थी। 'लहर' के प्रगीत भी इस दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध हैं। कवि ने अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यक्ति करते समय यत्र-तत्र लाक्षणिकता का आंचल ग्रहण किया है। कुछ उदाहरण अवेक्षणीय हैं —

(क) सुनकर क्या तुम भला करोगे—
मेरी भोली आत्मकथा ?

अभी समय भी नहीं—
थकी सोई है मेरी मौन व्यथा ।

(ख) मधुमंगल की वर्षा होती,
काँटों ने भी पहना मोती,
जिसे बटोर रही थी रोती-
आशा, समझ मिला अपना धन।

(ग) जैसे अन्तरिक्ष की अरुणिमा
पी रही दिगंतव्यापी सन्ध्या-संगीत को।

उपर्युक्त उद्धरणों में रेखांकित शब्द तथा काँटों का मोती पहनना, आशा का रोते हुए उन्हें बटोरना तथा अरुणिमा का सन्ध्या-संगीत पीना—आदि प्रयोग लाक्षणिक हैं, जिनमें कल्पना का विनियोग निहित है। इसी प्रकार 'करुणा की नव अंगराई-सी', 'मलयानिल की परछाईं-सी' उपमाओं में भी लाक्षणिक-सौन्दर्य विद्यमान है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'लहर' के प्रगीत लाक्षणिकता की कसौटी पर भी अत्यन्त सफल रहे हैं।

७. **प्रतीकात्मकता**—प्रतीकात्मकता छायावादी काव्य की एक अन्य विशेषता है। वैसे तो प्रतीकों का प्रयोग प्राचीन काल से कवि करते चले आ रहे हैं, किन्तु प्रतीकों का जितना अधिक प्रयोग 'प्रसाद', 'पंत', 'निराला' और महादेवी वर्मा आदि छायावादी कवियों ने किया है, उतना सम्भवतः अन्य कवियों ने नहीं किया। कुछ विद्वान तो छायावादी काव्य को प्रतीक बहुलता के कारण 'प्रतीक वाद' (Symbolism) तक की संज्ञा से अभिहित करना चाहते हैं। जहाँ तक 'लहर' का सम्बन्ध है, छायावादी काव्य की उत्कृष्ट कृति होने के कारण उसमें प्रतीकात्मकता का तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। कवि ने 'लहर' के अधिकांश प्रतीकों का चयन प्रकृति-जगत से किया है। उदाहरणतः 'मधु' शब्द सर्वत्र प्रेम या प्रणय का प्रतीक बनकर आया है। इसी प्रकार प्रेमी के लिए 'मधुप' प्रिया के लिए 'मुकुल,' प्रफुल्लता या आनन्द के लिए 'उषा' या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रभात,' 'विषाद' के लिए 'पतझड़' आदि का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण अवलोकनीय हैं—

१. छिन्न पात्र ल कम्पित कर में,
मधु-भिक्षा की रटन अधर में,

२. मधुप गुनगुनाकर कह जाता—
कौन कहानी अपनी।

३. उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर।

उपर्युक्त उद्धरणों में रेखांकित शब्द क्रमशः 'भग्न-हृदय,' 'प्रेम-भिक्षा,' 'प्रेमी' तथा 'आनन्द की भाव-लहर' के प्रतीक-रूप में प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार 'सूना नभ' यदि हृदय की व्यापकता का प्रतीक बनकर आया है, तो 'सागर' हृदय की गहराई और विशालता का। यथा—

सूने नभ में आग लगाकर
यह स्वर्ण-सा हृदय गलाकर
... ...
रिक्त जलधि भरने वाले ?

प्रकृति-जगत् के अतिरिक्त 'लहर' में 'प्रसाद' ने कुछ प्रतीक हाला-जगत् से भी चुने हैं। मधुबाला, मधुशाला, टूटा प्याला आदि प्रयोग ऐसे ही हैं। 'टूटा प्याला' कवि का 'टूटा-फूटा' हृदय ही है।

८. **संगीतात्मकता**--छायावादी कवि केवल साहित्यिक ही नहीं, वरन संगीत का भी कुशल ज्ञाता है। छायावाद का काव्य छन्द और संगीत दोनों दृष्टियों से उच्च-कोटि का है। इस काव्य में गीति-काव्य के प्रायः सभी तत्व-संक्षिप्तता, गेयता, आत्माभिव्यंजना, भाषा की मसृणता--आदि उपलब्ध होते हैं। 'प्रसाद' जी की 'लहर' भी गीतिकाव्य का सुन्दर उदाहरण है। 'लहर' के प्रायः समस्त गीतों में संगीतात्मकता का तत्व, प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। 'उठ-उठ री लघु-लघु लोल, लहर' गीत इस दृष्टि से कितना कोमल-मधुर है। भाषा की मसृणता इस गीत की विशेषता है। संगीतात्मकता का जितना सुन्दर रूप 'लहर' के निम्नोद्धृत प्रगीत में लक्षित होता है, उतना कदाचित् अन्य प्रगीतों में नहीं—

बीती विभावरी जाग री !
अम्बर-पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा नागरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल रस-गागरी ।

भाषा की मसृणता, शब्दों की सजीवता एवं चित्रमयता आदि अन्य विशेताओं ने इसकी संगीतात्मकता को चार चाँद लगा दिये हैं ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'कामायनी,' 'आँसू,' 'झरना' आदि अन्य काव्यों की भाँति 'प्रसाद' की 'लहर' भी छायावादी काव्य की समस्त विशेषताओं को लिए हुए है । वह आत्माभिव्यंजना, लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता, प्रकृति-चित्रण, प्रेम-सौन्दर्य-भावना आदि सभी दृष्टियों से छायावादी काव्य की अत्यन्त प्रौढ़ एवं अनूठी रचना सिद्ध होती है। उसके भाव एवं भाषा दोनों ही मधुर, कोमल एवं हृदयग्राही हैं ।

प्रश्न १०—'लहर' के आधार पर 'प्रसाद' की काव्य भाषा की आलोचना कीजिए ।

उत्तर—भाषा भावाभिव्यक्ति का साधन है । भाषा द्वारा ही कवि अपने भावों को सहृदयों तक संप्रेषित करता है । भाषा की सफलता इसी में है कि वह व्यर्थ के आडम्बरों से रहित हो, भावानुरूपिणी हो तथा स्पष्ट हो । कवि के भाव अनुकल भाषा पाकर अधिक रमणीय एवं आकर्षक बन जाते हैं । अतः स्पष्ट है कि भाषा और काव्य का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है । जहाँ तक 'लहर' की भाषा का प्रश्न है, हमें छायावादी काव्य की भाषा के प्रमुख तत्वों से अवगत होना होगा । छायावादी काव्य की भाषा वैसे तो अनेक विशेषताएं लिए है किन्तु उसकी प्रमुख विशेषताएं अथवा तत्त्व अधोलिखित हैं···

१. भाषा की मसृणता ।
२. भाषा की लाक्षणिकता ।
३. भाषा की प्रतीकात्मकता ।
४. भाषा की चित्रमयता ।
५. भाषा की संगीतात्मकता ।
६. भाषा की आलंकारिकता ।
७. शब्दों की मधुर योजना एवं उनकी अन्तरात्मा की पहचान ।
८. भाषा-विषयक प्राचीन बन्धनों की उपेक्षा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब हम 'लहर' के प्रगीतों में प्रयुक्त भाषा की छायावादी काव्य-भाषा की उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर समीक्षा प्रस्तुत करेंगे।

१. **भाषा की मसृणता**—प्रायः सभी छायावादी कवियों ने भाषा की मसृणता एवं कोमलता पर विशेष ध्यान दिया है। जहाँ तक 'प्रसाद' का सम्बन्ध है, उनकी भाषा 'पंत' और महादेवी की भाँति अत्यन्त मसृण है। उनकी भाषा में कोमलता का गुण सर्वत्र विद्यमान है। कामायनी में अवश्य ही कुछ स्थलों पर कठिन शब्दों के बाहुल्य के कारण भाषा की कोमलता खण्डित हो गई है, किन्तु, सामान्यतः उनकी भाषा मसृणता की वैभव-राशि से मण्डित है। 'आँसू,' 'झरना' और 'लहर' के प्रगीत इस तथ्य के प्रमाण हैं। 'लहर के 'बीती विभावरी जाग री' प्रगीत की निम्नोद्धृत पंक्तियाँ इस दृष्टि से विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं—

खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अञ्चल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई--
मधु मुकुल नवल रस गागरी।

इन पंक्तियों में प्रयुक्त सभी शब्द अत्यन्त कोमल, मधुर एवं कर्णप्रिय हैं। इसी प्रकार अधोलिखित पंक्तियाँ भी विशेषतः सुन्दर बन पड़ी हैं—

उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर
करुणा की नव अंगराई-सी,
मलयानिल की परछाई-सी,
इस सूखे तट पर छिटक छहर।

भाषा की लाक्षणिकता—लाक्षणिकता छायावादी काव्य की महत्वपूर्ण विशेषता है। लाक्षणिकता का सम्बन्ध लक्षणा शब्द शक्ति से है, जहाँ मुख्यार्थ के बाधित होने पर मुख्यार्थ से सम्बद्ध किसी अन्य अर्थ का बोध होता है। छायावादी काव्य में लक्षणा के एक-से-एक सुन्दर उदाहरण देखने को मिलते हैं। कारण, छायावादी कवियों की सूक्ष्म भावानुभूति लाक्षणिक प्रयोगों द्वारा ही अभिव्यक्ति पा सकती थी। 'लहर' के प्रगीतों की भाषा भी लाक्षणिक प्रयोगों की दृष्टि से विशेष सम्पन्न एवं समृद्ध हैं। कवि ने अपने हृदय के सूक्ष्म उद्गारों को अभिव्यक्त करते समय यत्र-तत्र लाक्षणिकता का ही आँचल ग्रहण किया है। कुछ उत्कृष्ट उदाहरण अवेक्षणीय हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क) सुन कर क्या तुम भला करोगे···मेरी भोली आत्म कथा ?
अभी समय भी नहीं—थकी सोई है मेरी मौन व्यथा।

(ख) मधुमंगल की वर्षा होती,
काँटों ने भी पहना मोती,
जिसे बटोर रही थी रोती
आशा, समझ मिला अपना धन।

(ग) जैसे आन्तरिक्ष की अरुणिमा
पी रही दिगंतव्यापी सन्ध्या-संगीत को।

(घ) सो रहा है पंचनद
आज उसी शोक में।

उपर्युक्त उद्धरणों में रेखांकित शब्द तथा काँटों का मोती पहनना, आशा का रोते हुए उन्हें बटोरना, अरुणिमा का सन्ध्या-संगीत पीना और पंचनद का सोना—आदि प्रयोग लाक्षणिक हैं, जिनमें कल्पना का विनियोग निहित है। इसी प्रकार 'करुणा की नव अंगराई-सी' 'मलयानिल की परछाईं सी' आदि उपमाओं में भी लाक्षणिक सौन्दर्य विद्यमान है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि लाक्षणिकता की दृष्टि से 'लहर' की काव्य-भाषा अत्यन्त सम्पन्न है।

३. **भाषा की प्रतीकात्मकता**—छायावादी काव्य में प्रयुक्त भाषा अधिकाँशतः प्रतीकात्मक होती है, 'लहर' की काव्य-भाषा भी इस विशेषता से वंचित नहीं है। कवि ने 'लहर' के अधिकांश प्रतीकों का चयन प्रकृति-जगत् से किया है। उदाहरणतः 'मधु' शब्द सर्वत्र प्रेम या प्रणय का प्रतीक बनकर आया है। इसी प्रकार प्रेमी के लिए 'मधुप', प्रिया के लिए 'उषा' या 'प्रभात' 'विषाद' के लिए 'पतझड़' आदि का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं···

१. छिन्न पात्र ले कम्पित कर में,
मधु-भिक्षा की रटन अधर में,

२. मधुप गुनगुनाकर कह जाता
कौन कहानी यह अपनी।

३. उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपर्युक्त उद्धरणों में रेखांकित शब्द क्रमशः भग्न-हृदय, प्रेम-भिक्षा, प्रेम तथा आनन्द की भाव-लहर के प्रतीक रूप में प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार 'सूना-नभ' यदि हृदय की व्यापकता का प्रतीक बनकर आया है तो 'सागर' हृदय की गहराई और विशालता का। यथा —

सूने नभ में आग लगाकर
यह स्वर्ण-सा हृदय गलाकर
... ...
रिक्त जलधि भरने वाले ?

प्रकृति-जगत् के अतिरिक्त 'लहर' की भाषा में प्रयुक्त कतिपय प्रतीकों का चयन कवि ने हाला-जगत् से भी किया है। मधुबाला, मधुशाला, टूटा प्याला आदि प्रयोग ऐसे ही हैं। टूटा प्याला कवि का टूटा-फूटा हृदय ही है।

इस प्रकार प्रतीकात्मकता के समावेश से 'लहर' के प्रगीतों की भाषा में एक ओर चारुता आ गयी है, तो दूसरी ओर प्रभावपूर्णता।

४. **भाषा की चित्रमयता**—छायावादी काव्य-भाषा की एक अनुपम विशेषता है—उसकी चित्रमयता। चित्रात्मक भाषा के कारण छायावादी काव्य का हिन्दी वाङ्मय में अपना स्वतन्त्र अस्तित्व एवं वैशिष्ठ्य है। 'लहर' में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जिन्हें पढ़ते ही पाठक के समक्ष एक चित्र-सा उभर आता है। वस्तुतः चित्रात्मक भाषा द्वारा ही काव्य में बिम्बग्राहिता का गुण आता है। 'प्रसाद' इस कला में परम विदग्ध हैं। प्रसाद की निम्नलिखित पंक्तियों में भाषा की चित्रात्मकता की सहज छटा देखी जा सकती है—

(क) बीती विभावरी जाग री।
अम्बर-पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा नागरी।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अञ्चल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मकुल नवल रस-गागरी।

(ख) उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर
+ + +
उठ-उठ गिर-गिर फिर-फिर आती,
नर्तित पद-चिह्न बना जाती,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिकता की रेखायें उभार—
भर जाती अपनी तरल-सिहर।

उपर्युक्त दोनों उदाहरणों में शब्दों का विन्यास इतने कुशल ढंग से किया गया है कि प्रभातकालीन वेला तथा सागर की लहर का साक्षात् चित्र हमारी आँखों के समक्ष उपस्थित हो जाता है। यही तो भाषा की चित्रमयता है।

५. **भाषा की संगीतात्मकता**—छायावादी कवि केवल साहित्यिक ही नहीं, संगीत का भी कुशल ज्ञाता है। अतः, उसकी काव्य-भाषा में संगीतात्मकता का तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। 'लहर' के प्रगीतों की भाषा में भी संगीत-तत्त्व वर्तमान है। कारण, कवि को नाद, लय और छन्द तीनों का उचित ज्ञान है। कुछ उत्कृष्ट उदाहरण इस प्रकार हैं—

(क) मेरी आँखों की पुतली में
तू बनकर प्रान समा जा रे।
जिससे कन कन में स्पंदन हो,
मन में मलयानिल चन्दन हो,
करुणा का नव अभिनंदन हो—
वह जीवन गीत सुना जा रे।

(ख) बीती विभावरी जाग री।
अम्बर-पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा-नागरी।

६. **भाषा की आलंकारिकता**—भाषा को सुसज्जित एवं प्रभावपूर्ण बनाने के लिए छायावादी कवियों ने यत्र-तत्र यथावश्यकता सुन्दर अलंकारों का प्रयोग किया है। 'लहर' का कवि भी भाषागत आलंकारिकता को भूल न सका। फलतः उसकी काव्य-भाषा में यत्र-तत्र अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग मिलता है। अनुप्रास और उपमा का निम्नलिखित उदाहरण अवेक्षणीय है—

उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर!
करुणा की नव अँगराई सी,
मलयानिल की परछाईं-सी,
इस सूखे तट पर छिटक छहर।

७. **शब्दों की मधुर योजना एवं उनकी अन्तरात्मा की पहचान**—छायावादी कवि ने प्रत्येक शब्द की प्रकृति और तज्जन्य ध्वनि को पहचानने और परखने का प्रयास किया है पन्त जी तो अपनी इस प्रकृति के लिए हिन्दी-जगत् में प्रसिद्ध हैं ही, 'प्रसाद' भी इस दृष्टि से विशेष प्रसिद्ध रहे हैं। उन्हें भी शब्दों की अन्तरात्मा की सूक्ष्म पहचान है। जहाँ जो शब्द 'फिट' बैठता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, वहाँ उसी का प्रयोग किया गया है। 'लहर' की काव्य-भाषा में ऐसे अनेक प्रयोग मिलते हैं। यथा—

उठ-उठ गिर-गिर फिर-फिर आती,
नर्तित पद-चिन्ह बना जाती।
+ + +
आ चूम पुलिन के विरस अधर।

उपर्युक्त उद्धरण में प्रयुक्त 'विरस' शब्द अत्यन्त सार्थक एवं सटीक है। कवि 'नीरस' शब्द का प्रयोग भी कर सकता था, किन्तु जो अर्थ वह 'विरस' से व्यंजित करना चाहता है, वह 'नीरस' शब्द से व्यंजित न हो पाता। 'प्रसाद' जी की शब्द-शिल्प तथा शब्द-चयन कला का ज्ञान निम्नोद्धृत पंक्तियों में और भी मुखर है—

सिहर भरे निज शिथिल मृदुल
अंचल को अधरों से पकड़ो।
बेला बीत चली है चंचल
बाहु-लता से आ जकड़ो।

८. **भाष-विषयक प्राचीन बन्धनों की उपेक्षा**—छायावादी कवि ने भावों और भाषा दोनों क्षेत्रों में परम्परागत बन्धनों का तिरस्कार किया है। भाषा-क्षेत्र में उन्होंने नव-नव प्रयोग किये हैं। निःसन्देह द्विवेदीयुग में भाषा में परिष्कार और संस्कार का कार्य सम्पन्न हुआ, किन्तु उसमें सौन्दर्य एवं सौकुमार्य की सृष्टि छायावादी काव्य में ही हुई। भावोंके अनुरूप ही 'प्रसाद' पन्त आदि छायावादी कवियों ने लिंग, वचन आदि को स्वीकार किया। 'लहर' की काव्य भाषा में भी भाषा विषयक प्राचीन बन्धनों की उपेक्षा की गई है। उसमें 'प्रसाद' ने यथावश्यकता शब्दों के लिंग, वचन आदि में परिवर्तन कर दिया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'लहर' के आधार पर 'प्रसाद' की काव्य-भाषा अत्यन्त समृद्ध एवं परिष्कृत सिद्ध होती है। उसमें एक अनुपम जादू है जो बलात् पाठक की चित्तवृत्तियों को आकृष्ट कर लेता है। मसृणता, लाक्षणिकता, संगीतात्मकता, चित्रात्मकता एवं मधुरता 'प्रसाद' की काव्य-भाषा की अपनी विशेषताएँ हैं जो उन्हें अन्य कवियों की काव्य-भाषा से बहुत अंशों में पृथक् कर देती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न ११—गीति-काव्य की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परीक्षा कीजिए।

अथवा

'प्रगीत-काव्य और 'लहर' विषय पर लेख लिखिए।

उत्तर—गीत भावना का वरदान है, विश्व-हृदय का राग एवं वसुन्धरा का सौन्दर्य है, मानव के सुख-दुःख, आशा-निराशा तथा प्रेममें संयोगकी साधना का प्रतीक है। गीत मानव के मन की वह आकुल-व्याकुल सीमा है, जहाँ समष्टि का व्यष्टि में तथा व्यष्टि का समष्टि में समाहार हो जाता है। गीत में भाव और स्वरों का संगठित रूप होता है। मानव के उच्चारण-प्रयत्न का सर्व प्रथम स्फुरण गीत है। क्रौंच-वेदना से आहत करुणार्द्र ऋषि के गीले स्वर ने सम्भवतः प्रथम बार गीत-काव्य का स्वर-संधान किया—

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत् क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

निस्सन्देह, गीति-काव्य के उद्गम में करुणरस ही प्रधान रूप से सहायक है। कारण, सुखमयी अनुभूति की अपेक्षा दुःखपूर्ण भाव हमारे मर्मस्थल को अधिक स्पर्श करते हैं। अंग्रेज कवि शैले (Shelley) ने उचित ही कहा है—

'Our sweetest songs are those which tell us of saddest thought.' (अर्थात् शोकाकुल अवस्था के सूचक गीत ही मधुरतम होते हैं।)

इसके अतिरिक्त, पाश्चात्य आलोचकों के अनुसार गीतिकाव्य वेदना का स्फोट है। कविवर पन्त के शब्दों में, गीति-काव्य का प्रस्फुटन उस समय होता है जब कवि का हृदय दुःख-भार से आक्रान्त हो जाता है—

वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान।
उमड़ कर आँखों से चुपचाप,
बही होगी कविता अनजान॥

इस प्रकार गीत हृदय-वीणा की वह राग-ध्वनि है, जो वेदना की थाप से झंकृत हो उठती है।

गीतिकाव्य की विवेचना करते हुए अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार के विचार व्यक्त किये हैं। कुछ प्रमुख मन्तव्य इस प्रकार हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. 'वस्तुतः गीति-काव्य को ही कविता कहा जा सकता है। किसी कृति विशेष में काव्यात्मकता जितनी अधिक होती है, वह उसी अनुपात में गीतात्मक होती है। नाटक जितना ही काव्यात्मक होगा, वह उतना ही गीतात्मक होगा।'—डॉ० चार्ल्स मिल्स।

२. 'गीति-काव्य का कवि जगत् के सारे तत्त्वों को अपने में समाहित करता है, अपने वैयक्तिक भावों के प्रभाव से पूर्णतः आत्मसात् करता है और इस आत्मपरकता को सुरक्षित रखने वाली शैली में अभिव्यक्त करता है।'—हीगल

३. 'गीतिकाव्य की आत्मा है भाव, जो किसी प्रेरणा के भाव से दबकर एक साथ गीति में फूट निकलता है। स्वभाव से ही उसमें हार्दिकता का तत्व वर्तमान रहता है। उसमें एक प्रकार की एकसूत्रता तथा सुसंगठित एकता होती है, जो समस्त कविता को अन्वित किये रहती है। वह एक सरल, क्षणिक एवं तीव्र मनोवेग का परिणाम होती है।'—डॉ० नगेन्द्र

४. साधारणतः गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूति का वह शब्द-रूप है, जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके।'--महादेवी वर्मा

यदि उपर्युक्त मन्तव्यों का विश्लेषण किया जाय तो गीति-काव्य के कुछ प्रमुख तत्त्व स्पष्ट होंगे, जो इस प्रकार हैं—१. संगीतात्मकता, २. आत्माभिव्यंजना, ३. रागात्मक अनुभूति अथवा भाव-प्रवणता, ४. सौन्दर्यमयी कल्पना, ५. वेदना तत्त्व ६. संक्षिप्तता एवं ७. कोमलकान्त पदावली। इनमें से भी प्रथम तीन तत्त्व तो गीतिकाव्य के प्राण ही हैं, जहाँ तक 'प्रसाद' जी की 'लहर' का सम्बन्ध है, उसमें प्रथम तीन तत्त्व तो मिलते ही हैं, अन्य तत्त्वों में से भी अधिकांशतः मिल जाते हैं। वस्तुतः 'प्रसाद' आधुनिक-युग के सर्वाङ्गपूर्ण कलाकार हैं। उनकी मौलिक प्रतिभा से हिन्दी-साहित्य का अङ्ग-अङ्ग समुन्नत हुआ। वह नाटकों में पूर्णतया नाटककार है, कहानियों में कुशल कहानीकार, उपन्यासों में उपन्यासकार और काव्य में महाकवि एवं गीतिकाव्य में भावुक संवेदनशील गायक। उनकी कल्पना प्रकृति के अन्तःकरण में मिलकर अनुभूति की गहरी छाया पड़ते ही हृदय से स्वाभाविक स्रोत में वह निकलती है। उनके गीत मानव-हृदय की रह-रह कर उठती हुई प्रकृत भावनाओं के स्वाभाविक चित्र हैं, जिनमें कभी सुख है, कभी दुःख है, कभी आशा है, कभी निराशा। वे अन्तःकरण के उच्छ्वास हैं और युग की प्रतिध्वनि के साकार चित्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ड्सवर्थ की काव्य-परिभाषा 'Poetry is the spontaneous over flow of powerful emotions.' जितनी सफलता से 'प्रसाद' के गीतकाव्य पर चरितार्थ होती है, उतनी सम्भवतः अन्य कवियों के काव्यों पर नहीं। निम्नलिखित पंक्तियों में गीतिकाव्य की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परख की जायगी।

१. **संगीतात्मकता**—संगीतात्मकता गीतिकाव्य का प्राण है, संगीतात्मकता का तत्व छायावादी काव्य के प्रायः समस्त कवियों में प्रचुर मात्रा में मिलता है। महादेवी वर्मा और जयशंकर 'प्रसाद' का काव्य इस दृष्टि से सर्वाधिक समृद्ध है। महादेवी वर्मा ने प्रगीत-काव्य की परिभाषा करते हुए उसमें स्वर-साधना पर अत्यधिक बल दिया है अतः, उनके प्रगीतोंमें स्वर-साधना का सुन्दर रूप दृष्टिगत होता है। दूसरी ओर 'प्रसाद' का प्रगीत-काव्य भी स्वर-साधना का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है। नाद, लय और छन्द तीनों दृष्टियों से उनका प्रगीत-काव्य अत्यन्त सफल सिद्ध हुआ है। 'लहर' के अधिकांश प्रगीतों में नाद, लय और छन्द का अत्यन्त चारु एवं स्वाभाविक प्रयोग मिलता है। यही कारण है कि पाठक 'लहर' के प्रगीतों की मधुर स्वर-लहरी में आत्म-विभोर हो जाता है। उसके हृदय की तन्त्रियाँ संगीत-लहरी की मधुरिमा से झंकृत हो उठती हैं। कुछ उत्कृष्ट उदाहरण इस प्रकार हैं—

(क) बीती विभावरी जाग री
अम्बर-पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा नागरी।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो, यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल रस गागरी।

(ख) उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर !
करुणा की नव अंगराई-सी,
मलयानिल की परछाईं-सी,
इस सूखे तट पर छिटक छहर।

(ग) मेरी आंखों की पुतली में
तू बन कर प्रान समा जा रे !
जिससे कन-कन में स्पंदन हो,
मन में मलयानिल चंदन हो,
करुणा का नव अभिनंदन हो—
वह जीवन गीत सुना जा रे !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपर्युक्त उदाहरणों में नाद, लय और छन्द की मधुर छाप सहृदय अनायास मुग्ध कर देती है। सहृदय पाठक कवि के यौवन की मस्ती इठलाती, बलखाती मधुर संगीत-लहरी के वशीभूत होकर आत्मास्वाद अनुभूति करने लगता है। उपर्युक्त प्रथम उदाहरण में कवि ने मधुर व विन्यास द्वारा प्रभातकालीन उषा का, भारतीय रमणी के रूप में कित सुन्दर चित्रांकन किया है। शब्द-शब्द में, पंक्ति-पंक्ति में संगीत मानो साका हो उठा है। अन्य उदाहरणों में भी ध्वन्यात्मकता का तत्त्व प्रचुर मात्रा वर्तमान है। इस प्रकार संगीतात्मकता अथवा गेयता की दृष्टि से 'लहर' प्रगीत अत्यन्त सफल एवं समृद्ध हैं।

२. **आत्माभिव्यंजना**— आत्माभिव्यंजना गीति-काव्यका दूसरा प्रमुख त है। आत्माभिव्यंजना के प्राधान्य के कारण ही गीतिकाव्य और प्रबन्ध-का के मध्य भेदक रेखा खींची जाती है। प्रगीतकार प्रगीत में वैयक्तिक ह विषाद व्यक्त करता है। उसकी दृष्टि मुख्यतः आत्मकेन्द्रित रहती है। प्रगी में अपने व्यक्तित्व का उचित रीति से समावेश करने में ही प्रगीतक की सफलता है। आधुनिक कवियों के गीत इस दृष्टि से अत्यन्त सफल र हैं। नीरज, नरेन्द्र शर्मा, बच्चन आदि के प्रगीतों में आत्माभिव्यक्ति क तत्व अत्यन्त मुखर है। बच्चन का यह गीत इस दृष्टि से उल्लेखनीय है—

'आज मुझ से दूर दुनिया।
है चिता की राख कर में,
माँगती सिन्दूर दुनिया।'

इन पंक्तियों में कवि की वेदना साकार हो उठी है। 'प्रसाद,' 'पंत महादेवी वर्मा आदि छायावादी कवियों के प्रगीतोंमें भी आत्माभिव्यक्ति का तत्व मिलता है, किन्तु उसका रूप अत्यन्त प्रच्छन्न है। महादेवी वर्मा के ऐसे अनेक प्रगीत हैं, जिनमें उन्होंने रहस्यवादिता का आवरण चढ़ा दिया है। यही बा अन्य छायावादी कवियों में मिलती है, किन्तु 'प्रसाद' के प्रगीतों का यह गौर है कि उनमें रहस्यवादी तत्त्व होने पर भी वैयक्तिक हर्षोल्लास एवं वेदन मुखर है। 'लहर' के प्रगीत इस दृष्टि से प्रायः सफल रहे हैं। उन पर महादे वर्मा की गीत-विषयक प्रस्तुत परिभाषा 'साधारणत गीत व्यक्तिगत सी में तीव्र सुख—दुखात्मक अनुभूति का वह शब्द रूप है, जो अपनी ध्वन्यात्मक में गेय हो सके' पूर्णतः चरितार्थ होती है। 'लहर' का कवि कहीं अतीत मधुमय दिनों का स्मरण करता है, तो कहीं प्रेम में ठुकराये जाने की ब कहता है। कहीं जीवन की नश्वरता की ओर संकेत करता है, तो कहीं यौ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की मादकता की ओर। कुछ उदाहरण अवेक्षणीय हैं—

(क) वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे ?
जब सावन-घन सघन बरसते—
इन आँखों की छाया भर थे !
... ...
चित्र खींचती थी जब चपला
नील मेघ-पट पर वह विरला,
मेरी जीवन-स्मृति के जिसमें—
खिल उठते वे रूप मधुर थे।

(ख) निधरक तूने ठुकराया तब
मेरी टूटी मृदु प्याली को,
उसके सूखे अधर माँगते
तेरे चरणों की लाली को।

कुछ गीतों में तो अनुभूति-द्रवित कवि ने अत्यन्त प्रत्यक्ष आत्माभिव्यक्ति की है। उसमें किसी प्रकार की प्रच्छन्नता अथवा गोपनीयता नहीं है। यथा—

(क) अरे कहीं देखा है तुमने
मुझे प्यार करने वाले को ?
मेरी आँखों में आकर फिर
आँसू बन ढरने वाले को ?

(ख) चिर तृषित कंठ से तृप्त-विधुर
वह कौन अकिञ्चन अति आतुर
... ...
धीरे से वह उठता पुकार—
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

३. रागात्मक अनुभूति अथवा भाव-प्रवणता—रागात्मक अनुभूति अथवा भाव-प्रवणता (Spontaneity) गीतिकाव्य का प्राणभूत तत्व है। प्रगीत-काव्य की सृष्टि ही अन्तर्ज्वाला से हुई है। कवि के आकुल प्राण जब इस अन्तर्ज्वाला से दग्ध होने लगते हैं, तभी गीत का प्रस्फुटन होता है, उसकी अन्तर्वेदना वाणी का सम्बल लेकर फूट पड़ती है। अन्तर्ज्वाला की यह प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न कवियों में भिन्न-भिन्न प्रकार से होती है। वर्ड्सवर्थ में यह ज्वाला शान्त और गम्भीर है, बायरन में तीव्र है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैले में पहले थोड़ी और बाद में भड़कने वाली है। जहाँ तक 'प्रसाद' का सम्बन्ध है। उनके प्रगीतों में भावावेगों की सरिता उमड़ रही है। 'लहर' में ऐसे अनेक प्रगीत हैं जिनमें कवि 'प्रसाद' की रागात्मक अनुभूति का अत्यन्त सुष्ठु रूप देखने को मिलता है। भावान्विति (Unity of emotion) तथा त्वरा (Tempo) दोनों का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया गया है जिनकी महत्ता प्रगीत के लिए असदिग्ध है। कहीं अतीत की मधुर घड़ियों का चिन्तन एवं स्मरण किया गया है तो कहीं प्रिय को अपने नेत्रों की पुत्तलिका में समा जाने की अभ्यर्थना की गयी है। कवि की भावनाओं का सहज उच्छलन ही गीत का रूप धारण कर लेता है। यथा—

खेलता था जब अल्लड़ खेल,
अजिर के उर में भरा कुलेल,
हारता था, हँस-हँस कर मन,
आह रे, वह व्यतीत जीवन !

४. **सौन्दर्यमयी कल्पना**—कल्पना सम्पूर्ण साहित्य की मूल प्राणदायिनी शक्ति है। साहित्य अथवा काव्य की भूमि मानव-कल्पना की भूमि है। 'जहाँ रवि की पहुंच नहीं, वहाँ कवि की पहुंच' कल्पना द्वारा ही होती है। विज्ञान में जो बुद्धि है, दर्शन में जो दृष्टि है वेदान्त में जो माया है, काव्य में वही कल्पना है। अतः प्रगीतकार के लिए कल्पना का आंचल ग्रहण करना स्वाभाविक ही है। जहाँ तक 'लहर' के प्रगीतों का सम्बन्ध है, उनमें यत्र-तत्र सौन्दर्यमयी कल्पना के अनेक भव्य चित्र देखनेको मिलते हैं। 'ले चल मुझे भुलावा देकर' प्रगीत कल्पना-सौन्दर्य का सुन्दर उदाहरण है। कवि की दृष्टि में यह संसार तुच्छ है, जहाँ चारों ओर छलछद्मता, कपट, प्रवंचना, अविश्वास एवं स्वार्थ का राज्य है। सरल-हृदय कवि इस संसार से दूर जाना चाहता है। वह अपने नाविक से प्रार्थना करता है कि तू मुझे यहाँ से कहीं दूर किसी ऐसे प्रदेश में ले चल, जहाँ अमरत्व हो और जहाँ मैं बैठकर इस संसार में चलने वाले सुख-दुःख के चलचित्र को देख सकूं। कवि की कल्पना में एक श्रेष्ठ संसार का चित्र है। उसकी उदार एवं विशाल आत्मा के लिए यह स्थान रहने के लिए उपयुक्त नहीं—

ले चल मुझे भुलावा देकर,
मेरे नाविक धीरे धीरे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस निर्जन में सागर-लहरी
अम्बर के कानों में गहरी—
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे।

कवि ने अपनी ललित कल्पना के माध्यम से मिलन की आतुरता का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया है। कवि ने 'हे सागर सङ्गम अरुण नील' नामक प्रगीत में सागर के हृदय को मधुर उमंगों से पूर्ण चित्रित किया है। वह किसी से मिलने के लिए आतुर है, इसका अनुमान उसके हृदय-गर्भ में उठती हुई उत्ताल-तरंगों से कर सकते हैं।

'हे सागर सङ्गम अरुण नील' इन शब्दों में कवि ने प्रकृति की बड़ी सुन्दर झाँकी तैयार कर दी है। दूर क्षितिज पर सागर और आकाश मिल रहे हैं। उसी समय ऊषा का आगमन हुआ। ऊषाकाल की लालिमा और नीले सागर तथा नीले आकाश का नीलवर्ण दोनों के मिलने से विचित्र शोभा उत्पन्न हो रही है। कवि प्रकृति की इस शोभा को 'प्रेयसी' के रूप में कल्पित करता है। 'सागर' को कवि ने इस 'क्षितिजांगना' का प्रेमी कहा है। आगे चलकर कवि कहता है—

पिङ्गल किरणों सी मधु-लेखा,
हिम-शैल बालिका को तूने कब देखा!
कलरव संगीत सुनाती,
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।

कवि ने सागर की इस प्रेयसी को 'हिम-शैल-बालिका' के रूप में चित्रित किया है।

इसी प्रकार 'लहर' में अनेक अन्य स्थल हैं, जिनमें कवि की कल्पना की उड़ान (Flight of Imagination) देखी जा सकती है। कहीं कवि प्रकृति के सौन्दर्य में इस कल्पना-वैभव का परिचय देता है, तो कहीं अपनी प्रेयसी के सुकुमार अंगों की छवि अंकित करने में। 'बीती विभावरी जाग री' प्रगीत इस दृष्टि से विशेष चारु बन पड़ा है—

बीती विभावरी जाग री।
अम्बर-पनघट में डुबो रही—
तारा-घट ऊषा-नागरी।

कितना सुन्दर चित्र खींचा गया है यहाँ अस्त होती हुई निशा का। उषा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कल्पना कवि ने एक भारतीय रमणी के रूप में की है, जो प्रभातकालीन वेला में पनघट पर घड़ों में जल भरने जाती है। उषा आकाश में उदित होती है, मानो वह पनघट पर जल भरने आती है।

इस प्रकार 'लहर' में ऐसे कितने ही सुन्दर प्रगीत विद्यमान हैं जिनमें कवि की सौन्दर्यमयी कल्पना के दर्शन सहज ही में हो सकते हैं।

५. कोमलकान्त पदावली—प्रगीत काव्य का एक आवश्यक गुण है—कोमलकाँत पदावली। सूरदास, मीरा, रसखान आदि कृष्णभक्त कवियों के पद इस दृष्टि से अत्यन्त सफल रहे हैं। आधुनिक काल की छायावादी काव्य-धारा में, विशेषतः प्रगीतों में कोमलकान्त पदावली का प्रयोग किया गया है। पंत के गीत इस दृष्टि से सर्वाधिक सफल कहे जा सकते हैं। 'प्रसाद' और महादेवी में अधिकांशतः कोमलकांत पदावली का ही प्रयोग किया गया है, किन्तु कहीं-कहीं संस्कृत पदावली के रजत पाश के कारण भाषा में काठिन्य उपस्थित हो गया है। 'निराला' के गीतों में संस्कृत पदावली का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। सामान्यतः 'लहर' के प्रगीत कोमल-कांत-पदावली के सुन्दर निदर्शन कहे जा सकते हैं। यथा—

खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई—
मधु मुकुल नवल रस-गागरी।

अथवा —

उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर

उपर्युक्त पंक्तियों में वर्णों का मधुर विन्यास द्रष्टव्य है। प्रसाद गुण की आभा सर्वत्र छिटकी हुई है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि 'लहर' के प्रगीत प्रगीत-काव्य के प्रायः सभी तत्वों को अन्तर्भूत किये हुए हैं। वे संगीतात्मकता, भाव-प्रवणता, आत्माभिव्यंजना, संक्षिप्तता आदि सभी गुणों को संजोए हैं। उनमें एक ओर कवि के हृदय की वेदना साकार हो उठी है तो दूसरी ओर मधुर स्वर-लहरी फूट पड़ी है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण 'लहर' के प्रगीत हिन्दी-साहित्य की अक्षयनिधि हैं।

प्रश्न १२—'लहर' के काव्य-सौन्दर्य का स्पष्टीकरण कीजिए।

उत्तर—काव्य के प्रमुखतः दो पक्ष होते हैं—भावपक्ष एवं कलापक्ष। भावपक्ष के अन्तर्गत प्रमुखतः विषयवस्तु, भाव, विचार आदि का विवेचन किया जाता है और कलापक्ष के अन्तर्गत प्रमुखतः भाषा, अलंकार, छन्द, गुण आदि काव्योपकरणों का। किसी भी कृति के काव्य-सौन्दर्य की परीक्षा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए इन दोनों पक्षों का अवलम्बन लेना पड़ता है। जहाँ तक 'लहर' का सम्बन्ध है, वह भावपक्ष एवं कलापक्ष दोनों दृष्टियों से छायावादी काव्य की प्रौढ़ एवं परिनिष्ठित कृति सिद्ध होती है। प्रस्तुत लेख में 'लहर' के काव्य-सौन्दर्य का स्पष्टीकरण किया जायगा।

'झरना' की भाँति 'लहर' में भी 'प्रसाद' में नव-नव छन्द के प्रयोग का उत्साह लक्षित होता है। 'झरना' में संस्कृत वृत्तों का भी प्रयोग था, किन्तु 'लहर' में ऐसा दृष्टिगत नहीं होता। हाँ, मुक्त छन्दों का प्रयोग अवश्य हुआ है जिनमें पंक्तियाँ भावावेग के अनुसार ही छोटी-बड़ी होती हैं और अन्त्यानुप्रास भी नहीं रहते। पर इससे छन्दोबद्ध कविता की युग-युगान्त श्रेष्ठता को किसी प्रकार की आँच नहीं आती।

लाक्षणिकता छायावादी काव्य की मुख्य विशेषता है। शब्दों के लाक्षणिक प्रयोग में कल्पना का सौन्दर्य निहित रहता है। 'लहर' में भी ऐसे अनेक प्रयोग मिलते हैं। यथा—

(क) मधु मंगल की वर्षा होती,
काँटों ने भी पहना मोती
जिसे बटोर रही थी रोती—
आशा, समझ मिला अपना धन।

(ख) जैसे अन्तरिक्ष की अरुणिमा
पी रही दिगन्तव्यापी सन्ध्या-संगीत को।

काँटों का मोती पहनना, आशा का रोते हुए उन्हें बटोरना तथा अरुणिमा का सान्ध्य-संगीत पीना आदि प्रयोग लाक्षणिक हैं, जिनमें कल्पना का विनियोग निहित है। सुन्दर कल्पना के बल पर ही लाक्षणिक मूर्त्त विधान सम्भव हो सकते हैं। कुछ अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं—

करुणा की नव अंगराई-सी,
मलयानिल की परछाईं-सी,
इस सूखे तट पर छिटक छहर।

'करुणा की नव अंगराई-सी,' 'मलयानिल की परछाईं-सी' इन सुन्दर उपमाओं में भी लाक्षणिक सौन्दर्य एवं रमणीय कल्पना के दर्शन होते हैं। उपर्युक्त उदाहरणों में कल्पना की सूक्ष्मता है। जीवन की आनन्द-लहर के लिए ऐसे सूक्ष्म उपमानों का विधान वास्तव में भावुकता तथा कल्पनाशीलता की पराकाष्ठा है।

'आँसू' आदि अन्य कृतियों की भाँति 'लहर' में भी सूफी-प्रभाव यत्र-तत्र लक्षित होता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निधरक तूने ठुकराया तब
मेरी टूटी मृदु प्याली को,
उसके सूखे अधर माँगते
तेरे चरणों की लाली को।

कहीं-कहीं अभिव्यक्ति में रूखी गद्यात्मकता भी दृष्टिगत होती है। काव्य-शैली पर 'झरना' एवं 'आँसू' की भाँति अनेक साहित्यिकों की काव्य-शैलियों का प्रभाव है। 'बीती विभावरी जाग री' नामक सुन्दर गीत की कल्पना माघ के 'शिशुपालवध' काव्य के सूर्योदय-वर्णन की याद दिलाती है।

इसके अतिरिक्त 'उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर' तथा 'खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा' में ध्वन्यात्मकता का तत्व प्रचुर मात्रा में है। प्रथम उदाहरण में लघु मात्राओं के प्रयोग के कारण लहरों के लहराने का चित्र ही मूर्त्त हो उठा है। गीतिकाव्य की दृष्टि से भी 'लहर' अनिन्द्य है। गीति-काव्य के प्रायः सभी तत्वों—संगीतात्मकता, संक्षिप्तता, भावात्मकता, कोमलकान्त पदावली का इसमें सुन्दर समन्वय हुआ है।

कवि ने कोमलता एवं माधुर्य की योजना के हेतु मूर्त्त वस्तुओं की उपमा के लिए अमूर्त्त एवं अमूर्त्त के लिए मूर्त्त उपमानों का सुन्दर प्रयोग किया है। कवि ने ऐसा करते समय इस बात का पूर्ण ध्यान रखा है कि कोई भी गीत परुष एवं असुन्दर न होने पाये। भाषा की चित्रात्मकता के भी 'लहर' में अनेक सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। 'बीती विभावरी जाग री' इस दृष्टि से विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह गीत सांग रूपक अलंकार का भी सुन्दर निदर्शन है। कवि ने यौवन के विलासमय चित्र का बड़ी ही व्यंग्यात्मक एवं सांकेतिक भाषा में चित्र खींच डाला है। विरह-विदग्ध, परित्यक्ता एवं अभुक्त नायिका का यह चित्र बड़ा ही भव्य बन पड़ा है।

'प्रलय की छाया' कविता का प्रवाह, रसमयता, भावपूर्णता एवं अलंकार-सज्जा सब एक-से-एक बढ़कर हैं। ध्वनि, रस, अलंकार, भाव और शब्द-सौष्ठव का इसमें बड़ा ही सुन्दर संयोग हुआ है। इसमें रूप और यौवन के बड़े ही मादक चित्र हैं और साथ ही विलास एवं वैभव का अद्भुत वर्णन है। यथा—

मेरे उस यौवन के मालती-मुकुल में
रंध्र खोजती थीं, रजनी की नीली किरणें
उसे उकसाने को—हँसाने को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागल हुई मैं अपनी ही मृदु गन्ध से—
कस्तूरी मृग जैसी।

इसमें गुजरात की रानी कमला के उत्थान-पतन की, महत्वाकांक्षा और निराशा की उसी के द्वारा कही जाने वाली कथा है। इसमें कहीं नारी-हृदय का गर्व, कहीं प्रतिशोध की भावना, कहीं उसकी दुर्बलता और कहीं तेजस्विता के सजीव चित्र भरे पड़े हैं। वास्तव में कमला का रूप-वर्णन अत्यन्त हृदय-ग्राही है। इस क्षेत्र में 'प्रसाद' की शक्ति अनन्त है, रवीन्द्र अपनी 'उर्वशी' में भी यह वैभव नहीं दिखा सके।

कवि ने 'लहर' के प्रगीतों में अपनी नायिका के शारीरिक सौन्दर्य एवं मानसिक-सौन्दर्य के भी कुछ विशिष्ट संकेत दिये हैं। यथा —

शशि-सी वह सुन्दर रूप विभा
चाहे न मुझे दिखलाना।
उसकी निर्मल शीतल छाया
हिमकन को बिखरा जाना।

किन्तु, 'प्रसाद' रूप-सौन्दर्य-चित्रण अथवा शृंगार-रस-चित्रण तक ही पहुंच नहीं रखते थे। उन्होंने वीर रस का भी अत्यन्त कौशलपूर्वक निर्वाह किया है। 'शेरसिंह का शस्त्र-समर्पण' सिखों के इतिहास की मर्मस्पर्शी घटना है। उस बिन्दु पर आत्म-सम्मान, वीरता और आत्मत्याग कैसे मिलाये गये हैं यह इस काव्य में देखते ही बनता है—

'ले लो यह शस्त्र है
गौरव ग्रहण करने का रहा कर में—
अब तो न लेश मात्र।
लालसिंह ! जीवित कलुष पञ्चनद का
देख, दिये देता है
सिंहों का समूह नख दन्त आज अपना।'

एक अन्य बात जो इस विषय में उल्लेखनीय है—वह यह है कि 'लहर' के गीतों में विशेषकर सुकुमार भावनाओं की ही अभिव्यक्ति हुई है। फलतः उसमें माधुर्यगुण की ही अधिकता है जिसके कारण सहृदय का अन्तःकरण द्रवीभूत हुए बिना नहीं रहता। इसके अतिरिक्त 'प्रसाद' एक कुशल शब्द-शिल्पी थे, अतः स्वभावतः उन्होंने साभिप्राय और व्यंजक शब्दों का ही प्रयोग किया है। साथ ही 'लाल पीला होता था दिगंत निज क्षोभ से' जैसी सरल

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मुहावरेदार भाषा के उदाहरण भी उनकी 'लहर' में दृष्टिगोचर होते हैं। विरोध चमत्कार का सौन्दर्य भी दर्शनीय है—

'किन्तु दुर्भाग्य पीछा करने में आगे था।'

प्रणय का भिखारी आज जब पुनः अपने द्वार पर लौट आया है, प्रणयी उस अतीन्द्रिय मधुवन को देखकर स्वयं आश्चर्यचकित था—

छिन्न पात्र था भर आता—
वह रस बरबस था न समाता,
स्वयं चकित-सा समझ न पाता
कहाँ छिपा था, ऐसा मधुवन।

कवि एक कुशल शब्द-शिल्पी की भाँति सुन्दर सांकेतिक भाषा में मुदुल रूपकों के द्वारा अपनी करुण गाथा कह जाता है। इन छाया-संकेतों में उसे सफलता प्राप्त हुई है। वह अपने भग्नहृदय को सान्त्वना देते हुए कहता है—

पागल रे ! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही हैं सब
+ + +
तू क्यों फिर उठता पुकार ?—
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

कवि की धारणा है कि प्रेम में तो आत्म-समर्पण ही करना पड़ता है, उसमें किसी प्रकार के प्रतिदान की भावना नहीं होनी चाहिए। जो जितना अधिक देता है, वह उतना अधिक प्रेमी है।

'लहर' के प्रगीतों की एक विशेषता यह भी है कि इनमें कवि को यह भली भांति विदित हो गया है कि मेरा प्रेमी मुझ से दूर नहीं है। वह तो मेरे भीतर समाया हुआ है। वह निरन्तर अनुभव करने लगा है कि 'मैं' और 'तू' की भेद-बुद्धि व्यर्थ है और वह पुकार उठता है—

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ
इसमें है क्या धरा सुनो ॥
मानस जलधि रहे चिर-चुम्बित
मेरे क्षितिज ! उदार बनो।

प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से भी 'लहर' के प्रगीत विशेषतः समृद्ध हैं। 'बीती विभावरी जाग री' प्रगीत में प्रभातकालीन वेला का अत्यन्त मधुर एवं हृदय-ग्राही चित्रण किया है। 'मधुर माधवी सन्ध्या में' तथा 'हे सागर सङ्गम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरुण नील' प्रगीत भी प्रकृति-चित्रण के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। कोमल कुसुमों की मधुर रात' में एक रात का अत्यन्त सुन्दर चित्र है, पर उसमें मानव-भावनाएं प्रधान हो उठी हैं। कहीं कलियाँ चुपचाप बात कर रही हैं तो कहीं नक्षत्र हँस रहे हैं।

'लहर' में रहस्यवादी संकेतों का भी यत्र-तत्र समावेश मिलता है। आचार्य शुक्ल तथा अन्य आलोचक भी 'हे सागर संगम अरुण नील,' 'निज अलकों के अन्धकार में .....,' 'मेरी आँखों की पुतली में, बनकर प्राण समा जा रे' आदि प्रगीतों को रहस्यवादी मानते हैं। किन्तु वास्तव में इन प्रगीतों में लौकिकता और आध्यात्मिकता दोनों की ही सुन्दर झाँकी देखने को मिलती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'लहर' में भाव-पक्ष और कला-पक्ष का सुन्दर समन्वय हुआ है। 'लहर' के सभी गीत अत्यन्त सफल हैं। भाषा संगीतात्मक, मधुर एवं प्रवाहमयी है। भाव कोमल, मधुर एवं हृदयस्पर्शी हैं। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि अलंकारों ने भाव एवं भाषा दोनों को अधिक चारु एवं प्रभावपूर्ण बना दिया है। अधिकांश प्रगीत आशा से परिपूर्ण तथा मानव-कल्याण-कामना से ओत-प्रोत हैं। तल्लीनता, रस-परिपाक, भाषा-सौन्दर्य, अलंकार-सज्जा, ध्वन्यात्मकता आदि विशेषताओं ने 'लहर' के काव्य-सौन्दर्य को चरमोत्कर्ष पर पहुँचा दिया है।

प्रश्न १२—प्रतीकात्मकता की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की परीक्षा कीजिए।

अथवा

'लहर' में प्रतीक-विधान' विषय पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए।

उत्तर—'लहर' में प्रतीकात्मकता का सन्धान करने से पूर्व प्रतीक-विधान के स्वरूप एवं लक्ष्य को जान लेना संगत प्रतीक होता है। अन्य अनेक शैलियों की भाँति प्रतीक-शैली भी एक ऐसी शैली है, जिससे काव्य में चारुता एवं भव्यता आ जाती है। कवि इस शैली का प्रयोग अपनी भावाभिव्यक्ति को अधिक स्पष्ट एवं प्रभावशाली बनाने के लिए करते हैं। इस शैली के प्रयोग द्वारा मुख्य रूप से कवि निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्त्ति करता है—

१. प्रतीकों के प्रयोग के द्वारा सूक्ष्मभाव, विचार या कल्पना को स्थूल रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पाठक वस्तु-विशेष का बिम्ब-ग्रहण करने में समर्थ होता है।

२. प्रतीकों के प्रयोग द्वारा कवि अपरिचित वस्तु का परिचय किसी

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचित आधार पर देता है जिससे पाठक अपरिचित वस्तु का सहज ही में परिचय प्राप्त कर लेता है।

३. अवर्ण्य का वर्णन करके कवि सहृदय के हृदय में वर्ण्य के विषय में जिज्ञासा जागृत कर देता है जिससे सहृदय (पाठक) किसी-न-किसी प्रकार वर्ण्य (प्रस्तुत) वस्तु की गहराई तक पहुंचना चाहता है।

४. प्रतीकों के प्रयोग के द्वारा कवि अपने कथ्य को अभिधात्मक ढंग से न कहकर व्यंग्य अथवा संकेतात्मक रूप से कहता है। बिहारी ने ऐसे अनेक दोहों की रचना की है, जिनमें उन्होंने अपना कथ्य सर्वथा व्यंग्य-शैली में व्यक्त किया है। उदाहरणार्थ उनका निम्नलिखित दोहा प्रस्तुत किया जा सकता है—

नहिं पराग, नहिं मधुर मधु, नहिं विकास इहि काल।
अली कली ही सौं बंध्यो आगे कौन हवाल॥

५. प्रतीकों का प्रयोग उस स्थिति में और भी आवश्यक हो जाता है जब एक ही शब्द, वाक्य, प्रसंग, कहानी या काव्य द्वारा दो भिन्न विषयों अथवा कथाओं का प्रतिपादन करना कवि को अभीष्ठ हो। हिन्दी-साहित्य के 'पद्मावत' और 'कामायनी' जैसे महाकाव्य इसी प्रकार के हैं। इन दोनों ग्रन्थों में जायसी और 'प्रसाद' ने लौकिक विषयों के साथ-साथ आध्यात्मिक विषयों को प्रतिपादित करने का भी विलक्षण प्रयास किया है।

अब प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या प्रतीकों का प्रयोग काव्य में अनिवार्यतः किया जाय ? इसके उत्तर में यही कहना संगत होगा कि प्रतीकों का प्रयोग कवि को यथाप्रसंग एवं यथावश्यकता करना चाहिए। प्रतीकों का श्रमसाध्य एवं अति प्रयोग भावाभिव्यक्ति को दुर्बोध एवं जटिल बना देता है। प्रतीकों के लिए प्रतीकों का प्रयोग करने पर काव्य का मूल संवेद्य—भाव—खण्डित हो जाता है।

प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग प्राचीन काल से कवि करते चले आये हैं। संस्कृत-साहित्य में ऐसे अनेक प्रयोग उपलब्ध होते हैं। इधर हिन्दी-साहित्य के भक्तिकाल, रीतिकाल आदि के काव्यों में भी इस शैली का सुन्दर प्रयोग मिलता है। सूरदास के 'भ्रमरगीत' में 'मधुप' 'मधुकर' आदि शब्द लोलुपवृत्ति के पुरुषों के प्रतीक-रूप में प्रयुक्त हुए हैं जिनका संकेत वहाँ कृष्ण और उद्धव की ओर है। इसी प्रकार जायसी के 'पद्मावत' में रत्नसेन जीवात्मा का प्रतीक है, तो पद्मिनी उस विराट् सत्ता ब्रह्म की। कहने का अभिप्राय यह है कि यह शैली कवियों को विशेष रूप से प्रिय एवं ग्राह्य रही है। आधुनिक काल के छायावादी और प्रयोगवादी काव्य में तो इस शैली का प्रयोग इतना अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है कि इन्हें 'प्रतीकवाद' (Symbolism) की संज्ञा से अभिहित करने की चेष्टा की गयी है। छायावादी काव्य में प्रतीकों का सर्वाधिक प्रयोग किया गया है। इस काव्य-धारा के प्रायः समस्त कवियों ने प्रतीक-विधान अत्यन्त सुन्दर रीति से किया है। 'प्रसाद', पंत, 'निराला' और महादेवी वर्मा छायावादी काव्य-धारा के चार प्रमुख आधार-स्तम्भ हैं। इन चारों ने अपने-अपने काव्यों में प्रतीकात्मकता का अत्यन्त प्रचुर मात्रा में समावेश किया है। वस्तुतः प्रतीकात्मकता काव्य का बहुत बड़ा वैभव है। इसके समावेश से काव्य में एक ओर कुछ जटिलता और गहनता उपस्थित हो जोती है तो दूसरी ओर उसमें अत्यधिक चमत्कार एवं चारुता भी आ जाती है।

प्रसाद की 'लहर' के प्रगीत प्रतीक-विधान की दृष्टि से अत्यन्त सफल हैं। कवि ने इन प्रगीतों के प्रतीकों का चयन अधिकांशतः प्रकृति-जगत् से किया है। कवि ने प्रतीकों के चुनाव में विशेष कौशल एवं प्रतिभा से काम लिया है। प्रकृति के प्रमुख उपादान हैं—मधुऋतु, मधुवन, प्रातः, सायं, उषा, संध्या, नीरव प्रशांत रजनी, लहर, क्षितिज, नभ, समुद्र, झंझा, पुष्प, कण्टक आदि-आदि इनमें से अधिकांश उपादान 'लहर' में विभिन्न अर्थों के प्रतीक रूपमें प्रयुक्त हुए हैं। उदाहरणतः 'लहर' के प्रगीतों में 'मधु' शब्द का प्रयोग अनेक स्थलों पर किया गया है। 'मधु' शब्द सर्वत्र प्रेम या प्रणय का प्रतीक बनकर आया है। इसी प्रकार प्रेमी के लिये 'मधुप', प्रिया के लिए 'मुकुल', प्रफुल्लता या आनन्द के लिए 'उषा' या 'प्रभात', 'विषाद' के लिए 'पतझड़' आदि का प्रयोग भी कवि ने किया है। कुछ उदाहरण अवेक्षणीय हैं—

१. छिन्न पात्र ले कम्पित कर में,
मधु भिक्षा की रटन अधर में,

२. स्वयं चकित-सा समझ न पाता,
कहाँ छिपा था ऐसा 'मधुवन'

३. मधुमंगल की वर्षा होती,
काँटों ने भी पहना मोती।

४. मधुप गुनगुना कर कह जाता,
कौन कहानी यह अपनी
मुरझाकर गिर रहीं पत्तियां
देखो कितनी आज घनी।

उपर्युक्त उद्धरणों में रेखांकित शब्द क्रमशः 'प्रेम-भिक्षा', 'प्रेम-वन'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रेम-मांगल्य' तथा 'प्रेमी' के प्रतीक रूप में प्रयुक्त हुए हैं। 'लहर' की प्रसिद्ध कविता 'उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर' में 'लहर' शब्द प्रकृति-जगत् से चुना हुआ सुन्दर प्रतीक है। यहाँ 'लहर' शब्द आनन्द की भाव-लहर' अथवा 'जीवन की लहर' अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। निम्नलिखित पंक्तियों में 'क्षितिज' शब्द का प्रयोग भी विशेष रूप से अवलोकनीय है —

तुम हो कौन और मैं क्या हूँ ?
इसमें में है क्या धरा सुनो,
मानस-जलधि रहे चिर चुम्बित
मेरे क्षितिज ! उदार बनो।

यहाँ 'क्षितिज' प्रतीक है - हृदय की व्यापकता एवं विशालता का। जिस प्रकार क्षितिज का कोई ओर-छोर नहीं होता, आर-पार नहीं होता, उसी प्रकार कवि कामना करता है कि मेरा हृदय भी अत्यन्त विशद और उदार बन जाय। इसी प्रकार, कहीं कवि ने 'पुष्प' को 'सुख' के अर्थ में और 'शूल' को 'दुःख' के अर्थ में प्रयुक्त किया है, तो कहीं 'उषा' को जीवन की प्रफुल्लता और स्फूर्ति के अर्थ में। 'सूना नभ' यदि हृदय की व्यापकता का प्रतीक बनकर आया है तो 'सागर' हृदय की गहराई और विशालता का। यथा—

सूने नभ में आग लगाकर
यह स्वर्ण-सा हृदय गलाकर
जीवन-संध्या को नहला कर
रिक्त जलधि भरने वाले ?

'आँसू' काव्य की निम्नोद्धृत पंक्तियाँ भी प्रतीक विधान की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट बन पड़ी हैं—

'झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरदमाला
पा कर इस शून्य हृदय को
सब ने आ डेरा डाला।'

यहाँ 'झंझा झकोर गर्जन' मानसिक क्षोभ एवं द्वन्द्व का प्रतीक है, 'नीरदमाला' विविध प्रकार की भावनाओं की प्रतीक है; 'बिजली' से रह-रहकर पीड़ा व्यंजित होती है और 'शून्य-हृदय' अन्तरिक्ष की व्यंजना करता है।

वस्तुतः 'प्रसाद' ने दार्शनिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना एवं प्रेम की सूक्ष्मातिसूक्ष्म दशाओं के अंकन में प्रतीकात्मकता का आश्रय ग्रहण किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम-चित्रण में लौकिक और अलौकिक दोनों अर्थों की व्यंजना के लोभ के फलस्वरूप उनके कुछ प्रगीतों में महादेवी के प्रगीतों की भाँति अस्पष्टता एवं दुरुहता आ गयी है और ऐसे प्रगीतों में अभीष्ठ प्रभाव भी नहीं आ सका है। फिर भी 'लहर' के अधिकांश गीत प्रतीकात्मकता की दृष्टि से अत्यन्त सफल रहे हैं।

प्रकृति-जगत् के अतिरिक्त 'लहर' में 'प्रसाद' ने कुछ प्रतीक हाला-जगत् से भी चुने हैं। मधुउाला, मधुशाला, टूटा प्याला आदि प्रयोग ऐसे ही हैं। टूटा प्याला कवि का टूटा-फूटा हृदय ही है। 'कुसुम की माला' से कवि का अभि- है—रात्रि में झिलमिलाते हुए तारे।

(क) अन्तरिक्ष में अभी सो रही है ऊषा मधुवाला,
अरे खुली भी नहीं अभी तो प्राची की मधुशाला।

× × ×

रजनी रानी की बिखरी है म्लान कुसुम की माला,
अरे भिखारी ! तू चल पड़ता लेकर टूटा प्याला।

उपरिलिखित पंक्तियों में रेखांकित अंशों में प्रतीकात्मक पद्धति का अत्यन्त चारु प्रयोग हुआ है।

निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि प्रेम-सौन्दर्य-भावना, प्रकृति का मानवीकरण, नवीन बिम्ब-योजना, रहस्यमयता आदि छायावादी अन्य प्रमुख विशेषताओं के साथ-ही-साथ प्रसाद-काव्य प्रतीकात्मकता की वैभव-राशि से भी मण्डित है। 'लहर' के प्रगीत इस दृष्टि से अत्यंत समृद्ध एवं सम्पन्न हैं। उपर्युक्त उद्धरणों के अतिरिक्त अनेक अन्य उद्धरण भी 'लहर' के प्रगीतों में यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं जिनमें प्रतीकात्मकता का अत्यंत सुन्दर एवं चित्ताकर्षक रूप दृष्टि गोचर होता है। निम्नोद्धृत प्रगीत में प्रतीकात्मकता की समृद्धि आद्यन्त व्याप्त हैं—

अब जागो जीवन के प्रभात !
वसुधा पर ओस बने बिखरे
हिमकन आंसू जो क्षोभ भरे
ऊषा बटोरती अरुण गात !
तम-नयनों की तारायें सब—
मुंद रहीं किरण-दल में हैं अब,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चल रहा सुखद यह मलय वात !
रजनी की लाज समेटो तो
कलरव से उठकर भेंटो तो,
अरुणांचल में चल रही बात !
अब जागो जीवन के प्रभात !

प्रश्न १४—कल्पना-सौष्ठव की दृष्टि से 'लहर' के प्रगीतों की प कीजिए।

उत्तर—कल्पना साहित्य की मूल प्राणदायिनी शक्ति है। साहित्य अ काव्य की भूमि मानव-कल्पना की भूमि है। 'जहाँ रवि की पहुंच नहीं, क कवि की पहुंच' कल्पना द्वारा ही होती है। विज्ञान में जो बुद्धि है, दर्शन में दृष्टि है, काव्य में वही कल्पना है। एक साधारण-से-साधारण घटना को कवि कल्पना के रंग में रंगकर ऐसा भव्य रूप प्रदान कर देता है कि वह ह हृदय को बलात् आकर्षित कर लेती है। वह अपनी कल्पना के बल पर दू के सुख-दुःख और दूसरों की अनुभूतियों का चित्रण इस प्रकार कर देता है वह सहृदय पाठक को अपना सुख-दुःख प्रतीत होने लगता है। कल्पना-शक्ति द्वारा ही वह एक ओर पूर्वानुभूत वस्तुओं, घटनाओं और भावों का चि करता है और दूसरी ओर अदृष्टपूर्व, अश्रुतपूर्व और अननुभूत वस्तुओं घटनाओं की भी सृष्टि करने में समर्थ होता है। दूसरे शब्दों में, वह कल्पना द्वारा 'लौकिक' और 'अलौकिक' दोनों की सृष्टि करता है। कल्पना के योग बुद्धि की गति तीव्र हो जाती है और वह अपनी अनुभूति को पाठकों के सम रखकर उनके मनोवेगों को तरंगित करने में सफल होता है। अपनी कल्प के बल से ही उसने कितने ऐसे महान् पात्रों की सृष्टि की है, जो संसार मस्तिष्क और हृदय पर शासन करते हैं।

वस्तुतः कलाकार की कल्पना विश्व की प्रायः समस्त उज्ज्वल, उदा ओजस्वी एवं स्फीत भावनाओं को दृढ़ करने वाली तथा मनोरम बना मनुष्य जीवन में मिला देने वाली सिद्ध हुई है। कल्पना के द्वारा साहित्यक वैज्ञानिकों से योजनों आगे चला करते हैं और भविष्य-द्रष्टा हुआ करते हैं

'प्रसाद' जी ने अपने निबन्धों में साहित्य को आत्मा की संकल्पात्मक अ भूति माना है। आत्मा की यह अनुभूति, दूसरों के सामने कल्पना के द्वारा प्रस्तुत होती है। कलाकार अपने हृदय में उत्पन्न भाव-तरंगों को जिस श

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा अभिव्यक्ति देता है, वही कल्पना अथवा Imagination है। कल्पना ही कला को आकर्षक एवं हृदयग्राही बनाती है। काव्य के चार तत्त्वों में कल्पना तत्व का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

जहाँ तक 'प्रसाद' जी की 'लहर' का सम्बन्ध है, कहा जा सकता है कि 'लहर' तो क्या 'प्रसाद' का सम्पूर्ण साहित्य इस दृष्टि से अनुपम बन पड़ा है। 'लहर' से पूर्व रचित 'आँसू' काव्य में कल्पना और अनुभूति का अत्यन्त सुन्दर समन्वय मिलता है। उदाहरणार्थ निम्नोद्धृत पंक्तियाँ देखी जा सकती है—

इस करुणा कलित हृदय में,
क्यों विकल रागिनी बजती ?
क्यों हाहाकार स्वरों में,
वेदना असीम गरजती ?
... ...
बाँधा है विधु को किसने,
इन काली जंजीरों से ?
मणिवाले फणियों का मुख,
क्यों भरा आज हीरों से ?
काली आँखों में कैसी,
यौवन के मद की लाली ?
मानिक मदिरा से भर दी,
किसने नीलम की प्याली ?

'हृदयवाद' का इतना सुन्दर उदाहरण मिलना हिन्दी-साहित्य में कठिन है। 'लहर' काव्य तो छायावादी कविताओं का एक अनूठा संग्रह है। लाक्षणिकता छायावादी काव्य की प्रमुख विशेषता है। शब्दों के लाक्षणिक प्रयोग में ही कल्पना का सौन्दर्य निहित रहता है। लाक्षणिक प्रयोगों के अनेक सुन्दर उदाहरण 'लहर' में यत्र-तत्र विद्यमान हैं। यथा—

(क) मधुमंगल की वर्षा होती,
कांटों ने भी पहना मोती
जिसे बटोर रही थी रोती—
आशा, समझ लिया अपना धन।

(ख) जैसे अन्तरिक्ष की अरुणिमा
पी रही दिगन्तव्यापी सन्ध्या-संगीत को।

काँटों का मोती पहना, आशा का रोते हुए उन्हें बटोरना तथा अरुणिमा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सन्ध्या संगीत पीना आदि प्रयोग लाक्षणिक हैं, जिनमें कल्पना-सौष्ठव निहित हैं। सुन्दर कल्पना के बल पर ही लाक्षणिक मूर्त्त-विधान सम्भव हो पाते हैं। इसी प्रकार 'करुणा की नव अंगराई-सी' 'मलयानिल की परछाईं-सी' उपमाओं में भी लाक्षणिक सौन्दर्य व रमणीय कल्पना के दर्शन होते हैं। 'करुणा की नव अंगराई' में और 'मलयानिल की परछाईं' में कल्पना की कितनी सूक्ष्मता है। जीवन की आनन्द लहर के लिए ऐसे सूक्ष्म उपमानों का विधान वास्तव में भावुकता एवं कल्पनाशीलता की पराकाष्ठा है।

'ले चल मुझे भुलावा देकर' प्रगीत कल्पना-सौन्दर्य का सुन्दर उदाहरण है। कवि की दृष्टि में यह संसार तुच्छ है, यहाँ चारों ओर छलछद्मता, कपट, प्रवंचना, अविश्वास एवं स्वार्थ का राज्य है। सरल-हृदय कवि इस संसार से दूर जाना चाहता है। वह अपने नाविक से प्रार्थना करता है कि तू मुझे यहाँ से कहीं दूर ऐसे प्रदेश में ले चल, जहाँ अमरत्व हो और जहाँ बैठकर मैं इस संसार में चलने वाले सुख-दुःख के चलचित्र को देख सकूँ। कवि की कल्पना में एक श्रेष्ठ संसार का चित्र है। उसकी उदार एवं विशाल आत्मा के लिए यह स्थान रहने के लिए उपयुक्त नहीं—

ले चल मुझे भुलावा देकर,
मेरे नाविक ! धीरे धीरे।
जिस निर्जन में सागर लहरी
अम्बर के कानों में गहरी—
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे।

कवि ने अपनी ललित कल्पना के माध्यम से मिलन की आतुरता का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया है। कवि ने 'हे सागर सङ्गम अरुण नील' नामक कविता में सागर के हृदय को मधुर उमंगों से पूर्ण चित्रित किया है। वह किसी से मिलने के लिए आतुर है, इसका अनुमान उसके हृदय-गर्भ से उठती हुई उत्ताल तरंगों से कर सकते हैं।

'हे सागर संगम अरुण नील' इन शब्दों में कवि ने प्रकृति की बड़ी सुन्दर झाँकी तैयार कर दी है। दूर क्षितिज पर सागर और आकाश मिल रहे हैं। उसी समय ऊषा का आगमन हुआ। ऊषाकाल की लालिमा सागर तथा आकाश का नीलवर्ण मिलने से विचित्र शोभा उत्पन्न हो गयी है।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्रसाद' और उनकी लहर

(व्याख्या भाग)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. उठ-उठ री लघु-लघु, लोल लहर !

परिचय—रससिद्ध कवि 'प्रसाद' की 'लहर' अनेक मधुर भाव लहरियों को अपने में संजोये है। प्रथम गीत में ही कवि के हृदय की भावुकता एवं मादकता व्यक्त हो गई है। कवि ने अपने यौवन-काल में किसी सुन्दरी की प्रेम-मदिरा का पान किया था, फलतः आज भी उसे अपने यौवन-कालीन वे मधुर क्षण स्मरण हैं। अतीत के वे मधुमय क्षण उसकी चेतना को इतना अधिक घेर लेते हैं कि उसका हृदय शब्दों के माध्यम से फूट पड़ता है। प्राकृतिक उपादानों—लहर और तट—का आश्रय लेकर उसका हृदय मुखरित हो उठता है। संयोग की स्थिति में हृदय-रूपी तट को सम्बोधित करते हुए कवि एक बार फिर से उन रस भरे दिनों की आवृत्ति चाहता है।

उठ उठ री·····छिटक छहर !

(प्रेम-साधना के मध्य कवि आनन्द की लहर को सम्बोधित करते हुए कहता है—) हे लघु एवं चचल लहर ! तू उठ। तेरी स्थिति हृदय में उदित होने वाले कोमल-मधुर भावों की-सी है तथा तू मलय पर्वत की ओर से आने वाली पवन की परछाई-सी (सुखदायिनी) है। तू (मेरे हृदय रूपी) शुष्क तट को (अपनी सरस गति से) परितृप्त कर दे।

इन पंक्तियों में कवि ने लहर के माध्यम से अपनी भावनाओं को अत्यंत सुन्दर शैली में व्यक्त किया है। वह लहर के लिए 'करुणा की नव अंगराई-सी', 'मलयानिल की परछाईं-सी' जैसे उपमानों का प्रयोग करता है। जिस प्रकार हृदय में यदा-कदा करुणा के कोमल-मधुर भाव उठते रहते हैं, उसी प्रकार कवि लहर का भी उदय चाहता है। भाषा की मधुरिमा तथा सहजता कहीं खण्डित न हो जाय, इसलिए उसने 'अंगड़ाई' के स्थान पर 'अंगराई' का प्रयोग किया है। 'मलियानिल की परिछाईं-सी' इसलिए कहा कि 'मलय-समीर' तथा 'लहर' में शीतलता, मन्दता तथा सुगन्ध की दृष्टि से पर्याप्त साम्य होता है। इसके अतिरिक्त 'मलयानिल' न कहकर उसकी 'परछाईं' इसलिए कहा कि 'मलियानिल' की अपेक्षा उसकी छाया कहीं मूर्त एवं स्पष्ट होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—प्रथम और अन्तिम पंक्ति में अनुप्रास की छटा द्रष्टव्य है।

शीतल कोमल.....ठहर ठहर !

(लहर कवि के हृदय रूपी नीरस तट पर आती है किन्तु कवि परितृप्ति से पूर्व ही लौट जाती है। लहर के मधुर स्पर्श से उसके शुष्क हृद तट को एक विशेष प्रकार की शीतलता और कोमलता का अनुभव होता है अतः वह नहीं चाहता कि लहर उससे पृथक हो।) हे लहर ! तू शीतल सुकुमार कम्पन के समान है। तेरी स्थिति (अत्यधिक लाड़-प्यार के कारण बिगड़े हुए हठीले बालक की-सी है। तू (मेरे हृदय-तट की तृप्ति से पूर्व ही कहाँ लौट जाती है ? तू ठहरकर कुछ देर और मेरे साथ क्रीड़ा क्यों नहीं करती है ?

विशेष १—'लहर' के लिए 'दुर्ललित' विशेषण का प्रयोग अत्यन्त नवीन है। जिस प्रकार अत्यधिक लाड़-प्यार के कारण बालक का बिगड़ जाना स्वाभाविक है, उसी प्रकार 'हृदय-तट' के असामान्य कोमलता भरे व्यवहार द्वारा 'लहर' का बिगड़ जाना कवि-कल्पना-प्रसूत होकर भी सहज स्वाभाविक है।

२—'लहर' के माध्यम से कवि ने अपनी आन्तरिक भावनाओं को व्यक्त किया है। अतः यहाँ अन्योक्ति अलंकार का सुन्दर रूप दृष्टिगत होता है। उपमा तथा अनुप्रास का चमत्कार भी देखते ही बनता है।

उठ-उठ गिर-गिर .....तरल सिहर !

(लहर तट तक आती है और अपने नृत्य के पद-चिह्न बनाकर छोड़ जाती है। उसके पदचिह्न बताते हैं कि वह अभी-अभी आई थी और अपने कोमल-मधुर स्पर्श से तट की बालू में सरसता भर गयी है। अतः कवि कहता है—) हे लहर ! तू उठती है, (तट पर आकर) गिरती है और पुनः आती है। तू तट की सिकता की रेखाओं को उभार कर अपने नृत्य के पद-चिह्न बना जाती है। (ऐसा प्रतीत होता है मानो इस प्रकार) तू तट की सिकता की रेखाओं में अपनी तरल-सिहरन भर जाती है।

सिहरन से शरीर सीधा न रहकर, कुछ मुड़ने-सा, सिकुड़ने-सा लगता है। लहर के स्पर्श से तट की सिकता पर लक्षित होने वाली सीधी-तिरछी रेखाएँ भी मानो उसकी सिहरन को व्यक्त करती हैं। अतः कवि की कल्पना अत्यन्त सार्थक बन पड़ी है। उसकी दृष्टि अत्यन्त पैनी है। उसने प्राकृतिक व्यापार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को अत्यन्त सूक्ष्मतापूर्वक निरूपित किया है। तट, सिकता और लहर की ओट में उसने अपना हृदय ही उंड़ेल दिया है। अतीत के रमणीय दिनों की स्मृति उसके हृदय में बार-बार आती है और समस्त इन्द्रियों को अपनी मधुर तान से झंकृत करके फिर लुप्त हो जाती है। हाँ, हृदय पर उसका आनन्दात्मक प्रभाव अवश्य शेष रह जाता है।

विशेष—छेकानुप्रास की आभा दर्शनीय है।

तू भूल न री·····विरस अधर !

(यहाँ कवि लहर को सम्बोधित करते हुए कहता है कि यद्यपि तेरा निवास-स्थल सरोवर है और सरोवर में विकसित कमलों का समूह ही तुझे प्रिय है तथापि तुझे शुष्क तट को सर्वथा भुला देना शोभा नहीं देता। अतः) तू कमलों के वन में रहकर तट के सूनेपन को मत भुला। तू तट के शुष्क जीवन को अपनी प्यारभरी पुलक से भर दे। तू उसके रस-विहीन जीवन में अपने स्पर्श द्वारा रस भर दे।

कमलों के मध्य रहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं कि लहर क्षुद्र पदार्थों (तट आदि) को उपेक्षा की दृष्टि से देखे। लहर की शोभा इसी में है कि वह अपने मधुर-रससिक्त स्पर्श से शुष्क तट को फिर से हरा-भरा कर दे—उसके सूने जीवन में फिर से सरसता एवं गति भर दे। यह तट भी कभी हर्षोल्लास लिए था—इसने भी अनेक मधुर क्षणों का सुख देखा था—यह बात दूसरी है कि आज इसकी स्थिति अत्यन्त दीन-हीन है। किन्तु निश्चय ही आज भी यह लहर के प्रेम का पिपासु है, आज भी इसके अतृप्त हृदय को लहर की स्मृति रह-रह कर सन्तप्त करती है। लहर स्नेहसिक्त है, वह फिर से इसके नीरस जीवन में सरसता भरकर इसे नव-जीवन प्रदान कर सकती है।

'विरस' शब्द का प्रयोग अत्यन्त अर्थ-गर्भित है। हृदय रूपी तट किसी समय रसपूर्ण था, किन्तु आज भाग्यलिपि कालिमाग्रस्त होने के कारण वह 'विरस' हो गया है।

कवि ने इन पंक्तियों में इस तथ्य का भी स्पष्टीकरण किया है कि संसार में प्रायः प्रेम-पिपासुओं को प्रेम की प्राप्ति नहीं होती। जिन्हें प्रेम की कामना नहीं होती, (अथवा जो प्रेम के अनधिकारी पात्र हैं,) उन्हें असीम प्रेम प्राप्त होता है। कवि के अनुसार प्रेम की सार्थकता इसी में है कि वह शुष्क-हृदय में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर प्राणप्रदायिनी शक्ति का संचार कर दे। इसीलिए उसका हृदय कराह उठता है—

तू भूल न री पङ्कज वन में
+ + +
आ चूम पुलिन के विरस अधर !

विशेष—समग्र गीत में एक ओर भाव का सौन्दर्य छलका पड़ता है, दूसरी ओर कला की अनूठी कारीगरी दृष्टव्य है। कोमलकान्त पदावली और मधुर भाव-लहरी इस प्रगीत की अनुपम विशेषताएँ हैं।

२. निज अलकों के अन्धकार में

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में मिलन के दृश्य का अत्यन्त मनोहारी चित्रण किया गया है। कवि को यौवन के मधुमय क्षणों की स्मृति हो आती है और यह स्मृति रह-रहकर उसके चित्त को व्यथा पहुँचाती है। वह अपने प्रिय से बड़ी व्यग्रतापूर्वक मिलना चाहता है और उसका प्रेमी भी उससे मिलने से कम उत्सुक नहीं है। प्रियतम चुपचाप आकर कवि की आँखें मींच लेना चाहता है। कारण उसे आँख-मींचने से एक अलौकिक आनन्द का अनुभव होगा और इस प्रकार एक मधुर कुतूहल की सृष्टि भी हो सकेगी किन्तु आराध्य आराधक से छिप कैसे सकता है ? कवि रूपी यह उपासक तो स्वयं प्रतिक्षण एवं प्रतिपल अत्यन्त सजग एवं सावधान है। हल्की-सी भी आहट उसे सुनाई पड़ जायगी। अतः प्रियतम चाहे जितने भी सँभल-सँभल कर कदम रखे, कवि की सजग दृष्टि से वह बच नहीं सकेगा।

निज अलकों.....सजावेगी ।

हे प्रिय ! तुम अपनी केशराशि के अंधकार (आवरण) में स्वयं को छिपाना चाहकर भी नहीं छिपा पाओगे। मेरा कुतूहल अत्यन्त तीव्र (सजग) है। तुम (किसी भी प्रकार से) मेरी दृष्टि से बच नहीं सकोगे। तुम्हारे जिन चरणों को मैं चूमने की कामना रखता हूं, उन्हीं को तुम (इस प्रकार) दबा-दबा कर क्यों कष्ट दे रहे हो ? तुम्हारे चरणों की लालिमा (मानो (आकाशमण्डल की) उषा में व्याप्त हो गई है। (तुम जिस रीति से पृथ्वी पर चरण रख रहे हो, उसका परिणाम यह होगा कि) पृथ्वी पर तुम्हारे चरण-चिन्ह उसकी (पृथ्वी की) अक्षयनिधि बनकर रह जायंगे। पूर्व दिशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(में व्याप्त अरुणिमा) मानो तुम्हारे ही चरणों की धूल के प्रयोग द्वारा अपने ललाट प्रदेश का साज शृंगार करेगी।

इन पंक्तियों में कवि ने मिलन का दृश्य प्रस्तुत किया है। कवि का प्रियतम कवि से मिलना चाहता है, किन्तु वह अपना आगमन व्यक्त नहीं करना चाहता। फलतः वह अत्यन्त धीरे-धीरे चल रहा है. जिससे कवि सहसा उसका स्पर्श पाकर आश्चर्य-विमुग्ध हो जाय। दूसरी ओर कवि भी अत्यन्त सजगतापूर्वक उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा है। उसकी (कवि की) सम्पूर्ण चेतना में प्रियतम के अतिरिक्त कुछ व्याप्त ही नहीं। अतः 'सजग कुतूहल' पद का प्रयोग अत्यन्त सार्थक एवं चमत्कारपूर्ण है।

इन पंक्तियों में कवि के रहस्यवादी भावों का अत्यन्त सुन्दर परिचय मिलता है। कवि ने प्रियतम के रूप में उस अनन्त शक्ति की ओर संकेत किया है, जो समस्त सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है और परम आनन्दमय है। सृष्टि के कण-कण में एक विशेष प्रकार का आकर्षण इसीलिए है कि वह उस आदि-शक्ति से मिलने का चिराभिलाषी है। दूसरी ओर, वह अनन्त-शक्ति भी प्रत्येक कण से आत्मीयता होने के कारण मिलनातुर रहती है।

चेतन-प्रकृति के साथ-साथ जड़-प्रकृति भी अपना समस्त रूप-वैभव उस आदि-अनन्त-शक्ति से प्राप्त करती है। उषा के समस्त-रूप वैभव का मूल-स्रोत उसी अनन्त शक्ति में निहित है। इसी प्रकार पूर्व दिशा के ललाट पर शोभित अरुणिमा उस अनन्त-शक्ति के चरणों की रजकुंकुम है।

विशेष—'अरे अरुणिमा ऊषा-सी', 'वसुधा चरण-चिह्न-सी बनकर' में उपमालंकार तथा 'प्राची रजकुंकुम ले चाहे अपना भाल सजावेगी' में व्यतिरेक का विधान अत्यन्त सुन्दर बन पड़ा है।

देख न लूँ.....आ जकड़ो।

तुम्हारी यही तो इच्छा है न कि मैं तुम्हारा आगमन न जान सकूँ, तो लो, मैं स्वयं ही नतशिर हो जाता हूँ। (अन्त में तुम क्या करोगे, यह भी मुझसे छिपा नहीं है) तुम किरण के समान कोमल एवं सुकुमार उंगलियों से मेरे नेत्रों को ढक दोगे और तत्काल पूछोगे कि—'क्या मुझे पहचाना ?' किन्तु (यदि तुम वास्तव में अपने आगमन को मुझ से छिपाना चाहते हो तो) पहले अपने अधरों पर खेलती हँसी को तो अधरों में ही नियन्त्रित करके दिखाओ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने मृदुल एवं शिथिल अंचल द्वारा यदि अपनी इस हँसी को नियन्त्रित कर लोगे, तभी अपनी इच्छा-पूर्ति कर सकोगे, अन्यथा नहीं। (कारण, तुम्हारा स्पर्श ही तुम्हें पहचानने में पर्याप्त है और यदि तुम्हारी हँसी भी व्यक्त हो गई, तब तो पहचानना और भी सरल हो जायगा। वस्तुतः तुम स्वयं मुझसे मिलने को आतुर हो। सँभल-सँभल कर कदम रखना, मेरी आँखों को मींचने की कामना करना आदि तत्त्व तुम्हारे प्रेम की व्यग्रता एवं आतुरता के ही व्यंजक हैं। मेरा भी तुमसे अनुरोध है कि) समय बीता जा रहा है। तुम विलम्ब न करो और शीघ्र ही अपनी चंचल बाहु-लता में मुझे आबद्ध कर लो।

विशेष—कवि अपने प्रिय की चंचल बाहु-लता के आलिङ्गन पाश में आबद्ध होने की अत्यन्त तीव्र इच्छा हृदय में संजोए है। अतएव यहाँ शृंगार रस के सभी कायिक, वाचिक एवं सात्त्विक अनुभावों का सूक्ष्म निरूपण किया गया है। 'कोमल किरन-उगलियों', 'वेला बीत·····बाहु-लता' में अनुप्रास और रूपक अलंकार का चमत्कार अवलोकनीय है।

तुम हो····· ·····उदार बनो।

(यहाँ कवि सच्चे प्रेम के स्वरूप का स्पष्टीकरण अपने वैयक्तिक जीवन के प्रेमानुभव के आधार पर करते हुए कहता है—) 'तुम कौन हो' और 'मैं क्या हूँ' आदि परिचयात्मक प्रश्न (प्रेम-क्षेत्र में) सर्वथा निरर्थक होते हैं। इनमें किसी प्रकार की सार्थकता नहीं होती। अतः ऐ मेरे क्षितिज (प्रियतम)! तुम इतने उदार बनो कि मेरा हृदय रूपी सागर तुमसे चिर-चुम्बित रहे।

कवि ने अपने प्रिय के लिए 'क्षितिज' का प्रयोग किया है। 'क्षितिज' अत्यन्त व्यापक एवं विस्तृत होता है। कवि उसे और अधिक उदार बनने के लिए कहता है, ताकि वह अपनी महानता में कवि की क्षुद्रता को भी विलीन कर ले। वस्तुतः प्रेमी और प्रियतम का 'एकत्व' ही प्रेम का चरमादर्श है। विश्व के प्रायः सभी महान् कवियों ने प्रेम के इस आदर्श को उच्च माना है। मीरा ने 'तुम बिच हम बिच अन्तर नाहीं जैसे सूरज घामा' में सूर्य और धूप के समान प्रेमी और प्रियतम में अभेद स्वीकार किया है। जिस प्रकार सूर्य और धूप देखने में भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हैं, किन्तु मूलतः एक ही हैं, उसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार प्रेमी और प्रेयसी शारीरिक रूप से देखने पर यद्यपि दो दिखाई देते हैं, किन्तु हृदय उनके 'एक' हो जाते हैं। यही भाव कवि रहीम ने निम्न दोहे में व्यक्त किया है—

प्रीतम हम तुम एक हैं, कहन सुनन को दोय।
मन से मन को तौलिये, दो मन कबहुँ न होय॥

'प्रसाद' के इस पद्य में रहस्यवाद का प्रतिपादन अत्यन्त सुन्दर रीति से हुआ है। अपने लौकिक अर्थ के अतिरिक्त यह पद्य आत्मा और परमात्मा के अलौकिक अर्थ का भी द्योतन करता है। प्रेम में 'मैं' और 'तू' का द्वैत समाप्त हो जाता है और आत्मा एवं परमात्मा अद्वैत की स्थिति में पहुँच जाते हैं।

३. मधुप गुनगुनाकर कह जाता.....

परिचय—प्रस्तुत कविता 'प्रसाद' जी की 'आत्मकथा' के रूप में लिखी गई और 'हंस' जनवरी-फरवरी, १९३२ के 'आत्मकथांक' में प्रकाशित भी की गई। इसमें 'प्रसाद' जी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व निहित है। इसमें उनके सारल्य, विषाद और जीवन-प्रेम का परिचय मिलता है—

छोटे से जीवन की कैसे
बड़ी कथाएं आज कहूँ?

क्या यह अच्छा नहीं कि
औरों की सुनता मैं मौन रहूँ?

\+ + +

उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊं
मधुर चाँदनी रातों की।

अरे खिलखिलाकर हँसते
होने वाली उन बातों की।

वस्तुतः मानव के लिए अपने अतीत को भुला देना अत्यन्त कठिन होता है। कभी-न-कभी किसी-न-किसी स्थिति में उसे अतीत की मधुर स्मृतियाँ हो ही आती हैं और वे उसके हृदय रूपी चित्रपट पर चलचित्र की भाँति चलने लगती हैं। कवि 'प्रसाद' भी अपने यौवनकालीन रसभरे दिनों की मधर स्मृतियों का आश्रय लेकर जी रहे हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी स्मृति पाथेय बनी है
थके पथिक की पन्था की ?

मधुप गुनगुनाकर.....भरने वाले।

(उद्यान में पौधों की डालियों पर विकसित पुष्प कुछ समय के लिए अपने सौरभ का प्रसार करने के उपरान्त काल-कवलित होकर धराशायी हो जाते हैं, उनके मुरझाने से कवि एक महान् संदेश ग्रहण करता है। प्रस्तुत पक्तियों में भ्रमर के गुञ्जार के माध्यम से कवि ने उसी जीवन-सन्देश को व्यक्त किया है।) कवि कहता है कि (पुष्पों के ऊपर) अपनी मधुर गुंजार द्वारा भ्रमर किस कहानी का कथन करता है। (पुष्पों की) अनेक पत्तियां मुरझाकर धराशायी क्यों हो रही हैं ? (विश्व रूपी) गम्भीर अनन्त आकाश में (टिमटिमाने वाले असंख्य तारों के रूप में मानो) असंख्य जीवनों के इतिहास व्यंग्यपूर्वक अपना ही उपहास किया करते हैं (आश्चर्य की बात तो यह है कि इस प्रकार मानो वे अपनी ही हँसी उड़ाया करते हैं)। तब भी (हे प्रिय !) तुम मुझे अपनी विगत कथा कहने को (अपनी भूली-बिसरी दुर्बलताएं व्यक्त करने के लिए) कहते हो ! तुम मेरी (करुण) कथा को सुनकर (अवश्य) हर्षानुभव करोगे, किन्तु मेरी गगरिया (हृदय) तो (प्रेम-जल के अभाव के कारण) 'रीती' हो चुकी है। (मैं पूरी कथा तुमसे इसलिए नहीं कहना चाहूँगा कि कहीं) तुम स्वयं को मेरी (हृदय) गगरिया को खाली कर अपनी (हृदय) गगरिया को भरने वाले न समझ बैठो।

भ्रमर की मन्द-मन्द गुंजार द्वारा जीवन की स्वार्थप्रियता एवं नश्वरता की ओर संकेत किया गया है। कारण, भ्रमर पुष्प-रस लोभी होने के कारण सदव उसका सान्निध्य चाहता है किन्तु सहसा पुष्प के मुरझाकर धराशायी हो जाने पर वह मानो अपना जीवन-साथी खो बैठता है। उसकी गुनगुनाहट में एक ओर उसके प्रेम के करुण अन्त की व्यंजना होती है तो दूसरी ओर जीवन की क्षण-भंगुरता का परिचय मिलता है। प्रेमी कब प्रिय से विलग हो जायगा, इसका पूर्वानुमान कठिन है। काल के कठोर पाश में वह किसी भी क्षण आबद्ध हो सकता है। भ्रमर, अपनी 'गुनगुनाहट' से प्राणी को मानो जीवन की इसी नश्वरता का पाठ पढ़ाता है। वह जिस पुष्प के प्रेम-पाश में प्रातःकाल ही आबद्ध होता है, वही (पुष्प) सन्ध्या-वेला तक उससे वियुक्त हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्ध्याकालीन विस्तृत आकाश में टिमटिमाते नक्षत्र भी इसी तथ्य का संकेत करते हैं कि जीवन क्षणिक एवं अचिरस्थायी है, उस पर हर्षान्वित होना मानव की सरासर भूल है। कवि भी भग्न-हृदय (Broken-Heart) है, अतः उसका प्रिय-वियोगजन्य दुःख इन तथ्यों से अवगत हो जाने पर और भी तीव्र हो जाता है। वह प्रेम को जीवन की 'दुर्बलता' मानने लगता है। कारण, प्रेम किये बिना रहना भी तो कठिन होता है। किन्तु वह अपने प्रिय से अपनी संपूर्ण कथा भी नहीं कहना चाहता, क्योंकि वह अपने जीवन का समस्त ऐश्वर्य, सौन्दर्य एवं सारस्य खो चुका है। अब उसका जीवन सर्वथा शुष्क एवं नीरस है। वह जितने अधिक दुःख प्रिय से कहेगा, प्रिय उतना अधिक हर्षानुभव करेगा। अतः वह अपने प्रिय को कुछ एक घटनाओं से अवगत कराकर मौन हो जाता है। वह अपने प्रिय से किसी प्रकार का उपालम्भ भी नहीं करना चाहता। कारण, उपालंभ द्वारा संभव है कि प्रिय अपनी 'करनी' पर लज्जित होकर दुःखानुभव करने लगे।

यह विडम्बना.....मधुमाया में ।

कवि कहता है—(हे प्रिय !) क्या यह मेरे लिए शोभाकर है कि मैं तुम्हारे भोलेपन को (अपनी आपदाओं का) दोषी ठहराऊं, तुम्हें प्रवंचक आदि कहूँ। यह तो मेरी अपनी ही भूल थी (कि मैंने तुम्हारे प्रेम का आञ्चल पकड़ा)। किन्तु मैं उन मधुर चाँदनी रातों की सरस गाथा कैसे कहूँ जब तुम मुझ से खिलखिलाकर हँसी भरी बातें किया करते थे (जब मुझे तुम्हारा सान्निध्य प्राप्त था)। जिस सुख का स्वप्न देखते-देखते मेरी आँख खुल गयी, वह मैं प्राप्त न कर सका। तुम तो आलिंगन-पाश में आबद्ध होने से पूर्व ही (दृष्टिपथ से) ओझल हो गये। (तुम कितने रूप-सौन्दर्य-सम्पन्न थे) तुम्हारे अरुण-कपोलों की लालिमा द्वारा ही तो (आकाशस्थित) उषा ने अपनी मांग भरी थी, (किन्तु आज वह दृश्य ही बदल गया है।)

कवि अपने प्रिय पर किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं करता। वह तो अपनी आपदाओं के लिए स्वयं को ही दोषी ठहराता है। प्रिय के लिए 'सरलते' शब्द का प्रयोग कर वह उसके भोलेपन की ओर इंगित करता है। उसके लिए अतीत के उन रसभीगे दिनों को भुला पाना आज भी संभव नहीं है। वे प्यार-भरी मधुर चांदनी रातें उसके लिए वर्णनातीत हैं। वे उसे एक प्रकार का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलौकिक आनन्द प्रदान करती थीं। प्रिय की हँसी का स्रोत उसके जीवन के अणु-अणु को सराबोर किये रहता था। किन्तु यह सब मिथ्या था—एक मधुर सपना-मात्र था। जब तक स्वप्न की अवधि थी, वह हर्षोल्लसित रहा। स्वप्न-अवधि के समाप्त होते ही उसे वास्तविकता स्पष्ट हो गयी। उसकी आनन्द-कल्पना अपूर्ण ही रही। उसे सर्वाधिक दुःख तो इस बात का है कि उसका प्रिय अनिन्द्य सौन्दर्य का भण्डार था। उसके प्रिय के कपोलों की सौन्दर्य-लालिमा के समक्ष तो उषा की लालिमा भी फीकी थी, किन्तु आज वह दृश्य ही बदल गया है।

उसकी स्मृति..... .....मेरी मौन व्यथा।

(यद्यपि कवि अपने प्रिय से तो वियुक्त हो गया, किन्तु उसकी मधुर स्मृति को न भुला सका। प्रस्तुत पंक्तियों में उसी मधुर स्मृति का चित्रण किया गया है।) प्रियतम, तुम तो चले गये किन्तु तुम्हारी स्मृति श्रांत-पथिक के पाथेय की भाँति मेरे जीवन का आधार बन गई। अब तुम मेरी कंथा की सीवन खोलकर क्या करोगे? (उन विगत घड़ियों को गिनने-गिनाने से क्या होगा?) मैं अपने छोटे-से जीवन की वे विस्तृत कथाएँ किस प्रकार कहूँ—(उनका प्रयोजन ही क्या है?) (मेरे लिए) श्रेयस्कर तो यही है कि मैं मौन-भाव से दूसरों की (प्रेम) कथाएं सुनता रहूँ। (वस्तुतः) तुम मेरी करुणाभरी (भोली) आत्मकथा सुन कर करोगे भी क्या! मेरी व्यथा इस समय कुछ शाँत है, मानो थककर विश्राम कर रही है, अतः (आत्म-कथा सुनाने का) यह उचित अवसर भी तो नहीं है।

प्रिय की स्मृति कवि के जीवन का आधार बन गई है। जीवन की लम्बी यात्रा में प्रिय की स्मृति उसके लिए विशेष सहायक है। वह स्मृति उसके जीवन का सबसे बड़ा संबल है।

कवि का जीवन यद्यपि अत्यंत तुच्छ एवं लघु है तथापि उसमें घटित घटनाएँ ऐसी हैं कि उनकी कहानी बहुत विस्तृत है। अतः वह नहीं चाहता कि अपनी विस्तृत कहानी सुनाकर श्रोता (प्रिय) को दुःखी करे।

उसकी प्रिय-वियोगजन्य वेदना इस समय तो सुप्तावस्था में है यदि वह उसे व्यक्त करना आरम्भ कर देगा, तो फिर से समस्त स्मृतियां ताजी हो जायंगी और उसके हृदय को अत्यधिक संतप्त करेंगी।

विशेष—१. स्मृति का परिणाम प्रायः दुःखद ही होता है। कारण, सुख-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरे दिनों की पुनरावृत्ति तो प्रायः सम्भव नहीं होती किन्तु व्यक्ति की सुखेच्छा अतीत-चिन्तन से तीव्र हो जाती है।

२. आत्मकथात्मक शैली में लिखित प्रस्तुत गीत में कवि की प्रेम एवं विरह-सम्बन्धी भावनाओं का सुन्दर परिचय मिलता है।

४. अरी वरुणा की शांत कछार !

परिचय—'प्रसाद' का सम्पूर्ण काव्य भारतीय-संस्कृति का आख्यान प्रस्तुत करता है। प्रस्तुत कविता में भी कवि ने भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों को उद्घाटित करने का प्रयास किया है। यह कविता सर्वप्रथम 'जागरण' के अंक प्रथम में ११ फरवरी, १९३२ में प्रकाशित की गई। इसका विषय ऐतिहासिक है। मूलगन्धकुटी विहार के उपलक्ष्य में इसकी रचना की गई है। कवि ने इस स्थान के गौरव एवं महात्म्य का गान किया है। यह स्थान वही है जहां पर महात्मा बुद्ध जैसे ज्ञानी-ध्यानी ने अपने उपदेशों का बखान एवं अमर सत्य का दर्शन किया था। यह स्थान ऐतिहासिक दृष्टि से तो महत्वपूर्ण है ही, धार्मिक दृष्टि से भी पर्याप्त महत्व रखता है। सत्य, अहिंसा एवं त्याग की साक्षात् प्रतिमा महात्मा बुद्ध की शान्ति-प्रसारक वाणी एक बार फिर से विश्व में प्रतिध्वनित हो जाय, यही कवि की कामना है। बौद्ध-धर्म के प्रति कवि के हृदय में एक विशेष आस्था एवं पूज्य-भावना है। वस्तुतः दर्शन की दृष्टि से 'प्रसाद' जितने बौद्ध-दर्शन से प्रभावित हुए हैं, उतने किसी अन्य दर्शन से नहीं। प्रस्तुत कविता इस का अकाट्य प्रमाण है।

अरी वरुणा.....जिससे संसार।

कवि वरुणा के शान्त कछारों को सम्बोधित करते हुए कहता है कि (तुम्हारा इतना अधिक आकर्षण है कि) महात्मा बुद्ध जैसे विरागी साधु को भी तुम से अनुराग हो गया। तुम (सांसारिक प्राणियों की) अनवरत व्याकुलता के विश्रामस्थल हो। तुम (पवित्रता एवं सात्त्विकता की साक्षात् प्रतिमा) ऋषियों के वन-कुंज हो (ऋषि तुम्हारे तट पर ही निवास किया करते थे।) तुम संसार की क्षणभंगुरता के लघु-रक्षक हो तथा लताओं, वृक्षों एवं पुष्पों के पुञ्जीभूत रूप हो। तुम्हारी कुटियाओं में अत्यन्त मौन भाव से उज्ज्वल (वास्तविक ज्ञान की वृद्धि के) क्रिया-कलाप चल रहे थे। तुम्हारे यहां ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सर्वप्रथम) पृथ्वी और स्वर्ग के बीच वह पवित्र सन्धि हुई थी, जिससे समग्र संसार गूँज उठा था ।

महात्मा बुद्ध ने वरुणा नदी के समीपस्थ 'सारनाथ' नामक स्थान पर अपना सर्वप्रथम उपदेश दिया था। उन्हें संसार के नानाविध आकर्षण एवं ऐश्वर्य प्रलुब्ध न कर सके किन्तु वरुणा की शांत कछारों ने अत्यन्त तीव्रतापूर्वक आकृष्ट कर लिया। अतः निश्चय ही इन कछारों का महत्व असाधारण है।

महात्मा बुद्ध ने अपने सम्पूर्ण जीवन-काल में, जिन तत्त्वों की उपलब्धि की एवं जिन कथनों की व्याख्या की, उनका श्रेय इन्हीं कछारों को है। सांसारिक प्राणियों के जीवन नाना प्रकार की विषमताओं से ग्रस्त थे। इच्छाओं और वासनाओं की ज्वाला ने उनके हृदयों को संतप्त कर रखा था। महात्मा बुद्ध लोकमंगल विधायिका वाणी के प्रसार द्वारा ही उनकी अशांति एवं विषमता का अन्त हुआ। यहां के वनों में न जाने कितने ऐसे ऋषि-मुनि रहे, जिनका जीवन पवित्रता एवं उदारता की साक्षात् मूर्ति था। यहीं के वृक्षों, पुष्पों, पौधों एवं लताओं के मध्य स्थित बौद्ध-विहारों से जाकर बौद्ध-भिक्षु सांसारिक प्राणियों को अपना अमर संदेश दिया करते थे। उनके संदेश का सार था—संसार नश्वर है, मिथ्या है, अतः उसमें आसक्त होना हृदय की दुर्बलता है। उनके सार भरे संदेश से सांसारिक प्राणी जगत् के प्रलोभनों से बचने का प्रयास करते थे और मोक्ष-प्राप्ति की दिशा की ओर अग्रसर होते थे। स्वर्ग का द्वार मानो खुल रहा था। स्वर्ग भी कैसा ? जो उन दिनों जन-सामान्य के लिए आकाश-कुसुम के समान दुर्लभ था। कर्मकाण्डों के सिद्धान्तों का इतना अधिक बोलबाला था कि व्यक्ति जीवन के सत्य को प्राप्त करने में सर्वथा असमर्थ थे। कर्मकाण्डों के सिद्धान्तों ने धर्म को इतना कठोर एवं आडम्बरपूर्ण बना दिया था कि धर्म का अवलम्बन ग्रहण करना भी अत्यंत कठिन था। महात्मा बुद्ध ने जन-सामान्य को दृष्टि में रखते हुए कर्मकाण्डी विचारधारा के स्थान पर कुछ ऐसे सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया, जिनमें व्यावहारिकता का तत्त्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान था। अपने व्यावहारिक सिद्धान्तों के कारण ही वे अधिकांश प्राणियों के श्रद्धा-पात्र बने। उनके व्यावहारिक सिद्धान्तों की खोज इन्हीं कछारों में हुई, अतः इन कछारों का गौरव असन्दिग्ध है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरी वरुणा.....अधिकार ?

ऐ वरुणा की शाँत कछारो ! (तुम्हारा यह स्थान कितना गौरवपूर्ण है !) तुम्हारे ही घने कुंजों के मध्य (प्राचीनकालीन दार्शनिकों द्वारा) दार्शनिक सिद्धान्तों के वाद-विवाद किये जाते थे। देवताओं की उत्पत्ति तथा स्वर्गीय सपनों पर संवाद किये जाते थे। सुकुमार वृक्षों की छाया में बैठकर (अशोक और कनिष्क के समय) सभाएं इस बात पर विचार किया करती थीं कि (उस आदिशक्ति को प्राप्त करने में) कितना अंश बुद्धि का है और कितना हृदय का ?

वरुणा की शांत कछारों के घने कुंजों के मध्य बैठकर प्राचीनकाल में अनेक दर्शन-शास्त्री संसार में प्रचलित विविध विचारधाराओं पर वाद-विवाद किया करते थे। भिन्न-भिन्न स्थानों के अनेक विद्वान् एकत्र होकर शास्त्र-चर्चा किया करते थे। अपने बौद्धिक-व्यायाम द्वारा समाज को वे नाना प्रकार के नवीन विचारों से अवगत कराते थे। कोई ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास रखता था तो कोई अनस्तित्व में कोई एकेश्वरवादी था, तो कोई बहुदेववादी, कोई आत्मा और परमात्मा को 'एकरूप' मानता था, तो कोई उन्हें सर्वथा पृथक्-पृथक्। दूसरे शब्दों में, 'जेता घट तेता मता बहुबानी बहुभेख' के अनुसार अनेक मत-मतान्तर तत्कालीन समाज में व्याप्त थे। फलतः जन-सामान्य के लिए मोक्ष-लाभ मृग-मरीचिकामात्र था।

इसके अतिरिक्त यहाँ देवताओं की उत्पत्ति-विषयक अनेक चर्चाएँ की जाती थीं तथा स्वर्गीय सपनों जैसे मधुर संवादों द्वारा जनता को विश्वस्त करने का प्रयास किया जाता था। इन्हीं कछारों के सघन वृक्षों की छाया में अशोक तथा कनिष्क जैसे कुशल शासकों द्वारा ऐतिहासिक सभाओं का आयोजन किया जाता था, जिनका उद्देश्य होता था—पारस्परिक विचार-विनिमय। उस 'आदिशक्ति' तक पहुँचने का उचित मार्ग क्या है, इस विषय पर उन सभाओं में विचार-विमर्श किया जाता था। उसे प्राप्त करने का मुख्य साधन हृदय (भाव-तत्त्व) है अथवा बुद्धि (विचार-तत्त्व) अर्थात् वह भक्ति द्वारा गम्य है अथवा ज्ञान द्वारा ? इस प्रकार अनेक दार्शनिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया जाता था।

विशेष—१. भगवान् बुद्ध के समय समाज में अद्वैतवाद, द्वैतवाद, प्रकृति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाद आदि अनेक वाद प्रचलित थे। 'दर्शनों के होते थे वाद' पंक्ति का संकेत इसी ओर है। अद्वैतवाद के प्रवर्त्तक आचार्य शंकर हैं, जिनके अनुसार 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है, जगत् मिथ्या है। इनकी धारणा है कि आत्मा और परमात्मा मूलतः एक हैं, उनमें किसी प्रकार की भिन्नता नहीं है। जो भिन्नता गोचर होती है, उसका कारण है--'सांसारिक माया'। माया का आवरण हट जाने पर आत्मा-परमात्मा में किसी प्रकार का अन्तर नहीं रहता। द्वैतवाद के प्रवर्त्तक आचार्य मध्व हैं, जिन्होंने शंकर के मायावाद का उग्रतापूर्वक खण्डन करते हुए विष्णु की भक्ति का प्रचार किया। इनके अनुसार आत्मा और परमात्मा दो भिन्न वस्तुएँ हैं। उनमें किसी प्रकार की एकरूपता नहीं है। हाँ, भक्ति द्वारा आत्मा अवश्य ही ईश्वर को प्राप्त कर सकती है।

२. भक्ति का सम्बन्ध हृदय से है, अतः उसमें अधिक सरसता एवं रागात्मकता है। दूसरी ओर ज्ञान बुद्धि से सम्बद्ध होने के कारण अपेक्षाकृत दुरूह एवं नीरस है। संभवतः इसीलिए गोस्वामी तुलसीदास को कहना पड़ा—

ग्यान पंथ कृपान कै धारा।
परत खगेस होइ नहिं बारा॥

—रामचरितमानस

'प्रसाद' ने 'भाग कितना लेगा मस्तिष्क, हृदय का कितना है अधिकार?' कहकर प्रकारान्तर से ज्ञान और भक्ति की ओर संकेत किया है। 'कुरुक्षेत्र' का कवि भी हृदय-बुद्धि की बात निम्न शब्दों में कह रहा है, यद्यपि उसकी दृष्टि कुछ भिन्न प्रकार की है—

किन्तु, है बढ़ता गया मस्तिष्क ही निःशेष,
छूटकर पीछे गया है रह हृदय का देश;

अरी वरुणा.....तेरे द्वार।

ऐ वरुणा की शांत कछौरो! (तुम कितनी पवित्रता एवं सात्त्विकता लिए हो कि) महात्मा बुद्ध (जैसे ससार त्यागी) ने तुम्हारे यहाँ आश्रय लिया, उन्होंने समस्त सांसारिक ऐश्वर्यों एवं आकर्षणों तथा प्रेमिका के अत्यन्त दुर्लभ प्रेम का भी (तुम्हारे यहां रमने के हेतु) परित्याग कर दिया। उन्होंने एक ओर पिता (शुद्धोदन) के स्नेह को तथा दूसरी ओर शिशु (राहुल) के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वात्सल्य को (तुम्हारे यहां रमने के लिए) ठुकरा दिया। वे (वस्तुतः) प्राणियों का उद्धार करने के लिए दुःख का सही अर्थों में उन्मूलन करना चाहते थे। अतः उन्होंने तुम्हारी पुण्यभूमि पर आकर वेदों के आरण्यक भाग (में निहित सत्य) का प्रचार-प्रसार किया।

भगवान बुद्ध ने वरुणा की पुण्यभूमि पर साधनालीन होने के लिए राज-प्रासादों के विलासी जीवन का त्याग किया, यशोधरा जैसी गुणागार एवं दुर्लभा प्रेयसी के प्रेम का त्याग किया और तो और परम श्रद्धेय पिता शुद्धोदन के स्नेह तथा पुत्र राहुल के वात्सल्य को भी कुछ न समझा। पिता, पुत्र और प्रेयसी का समवेत प्रेम भी उन्हें सांसारिक आकर्षणों की ओर आकृष्ट न कर सका। सांसारिक क्लेशों—रोग, जरा, मरण आदि—का मूल कारण जानने के लिए तथा मानव-जाति को इन क्लेशों से मुक्त होने का उपाय बताने के लिए उन्होंने वरुणा की इन्हीं शांत कछारों की शरण ली। यहीं पर उन्होंने जीवन-सत्य की उपलब्धि की और उसके द्वारा समग्र मानव जाति का अत्यधिक कल्याण किया। इसी पुण्यभूमि पर उन्होंने एक बार फिर वेदों के आरण्यक भाग में निहित सत्य का प्रचार-प्रसार करके शुद्ध ज्ञान, शुद्ध-कर्म, अहिंसा और त्याग जैसे सात्त्विक तत्त्वों पर बल दिया। अतः वरुणा की इन शांति-दायिनी कछारों का निश्चित रूप से अपना ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व है।

विशेष—'सुनाने आरण्यक सम्वाद'—ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, शिक्षाग्रन्थ आदि वेदाङ्गों की भाँति आरण्यक भी एक प्रमुख वेदाङ्ग है। आरण्यक ग्रन्थों की गणना ब्राह्मण-ग्रन्थों के पश्चात् की जाती है। इनका सम्बन्ध आर्यों के अरण्य-जीवन से है और वेदों के अध्यात्म-विवेचन (Spiritual-Study) को इनमें अत्यन्त सुलझे हुए ढंग से प्रस्तुत किया गया है। विशेषकर वानप्रस्थ आश्रम में जिन यज्ञों का अनुष्ठान करना अभीष्ट है, उनका इनमें आध्यात्मिक ढंग से विवेचन उपलब्ध होता है।

अरी वरुणा.....पूरा अधिकार।

(प्रस्तुत पंक्तियों में यह चित्रित किया गया है कि ब्राह्मणों द्वारा प्रचारित कर्मकाण्ड प्रधान धर्म ने किस प्रकार जनसामान्य के लिए मोक्ष का मार्ग बन्द कर दिया था। जब समग्र संसार (मिथ्या धार्मिक आडम्बरों की) ज्वाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में प्रज्वलित हो रहा था, उस समय (वरुणा नदी की इन शांत कछारों से) मुक्ति रूपी जल की शीतल बाढ़ आ गई (जिसके द्वारा जनसाधारण के लिए मुक्ति अत्यन्त सुलभ हो गयी) तथा (सम्पूर्ण वातावरण में व्याप्त अज्ञान रूपी) अन्धकार का नाश करने के लिए असीम आभा वाले भगवान् बुद्ध रूपी उज्ज्वल चन्द्र का प्रकाश उदित हुआ। (फलतः) भगवान बुद्ध ने भाग्य-चक्र से पीड़ित एवं व्यथित प्राणियों को संदेश देते हुए (स्पष्ट) कहा—(हे प्राणियो !) तुम भी संसार के समस्त बन्धनों का उच्छेदन कर सकते हो, तुम सर्वथा इसके योग्य (अधिकारी) हो।

भगवान बुद्ध के अवतरित होने से पूर्व समस्त वातावरण को अज्ञानान्धकार ने आच्छादित किया हुआ था। ऐसी शोचनीय स्थिति में भगवान् बुद्ध रूपी चन्द्र का उदय हुआ, जिसने अपने दिव्य प्रकाश से समस्त समाज को आलोकित कर दिया—जन-जन के हृदय में जागृति की चेतना भर दी। उनका दिव्य संदेश यह था कि संसार के समस्त प्राणी मोक्ष-लाभ कर सकते हैं। मोक्ष-मार्ग सबके लिए सहज-सुलभ है। किसी को न तो मिथ्या धार्मिक आडम्बरों में पड़ने की आवश्यकता है और न ही किसी प्रकार की हीन-भावना से दुःखी होने की। सत्य, अहिंसा एवं त्याग जैसे अमोघ शस्त्रों का अवलम्बन ग्रहण करके समस्त सांसारिक बन्धन उच्छिन्न किये जा सकते हैं।

विशेष—१. प्रस्तुत पंक्तियों में 'परिकर' अलंकार का अत्यंत सुष्ठु प्रयोग हुआ है। 'परिकर' अलंकार वहाँ होता है जहाँ प्रस्तुत का वर्णन करने के लिए साभिप्राय विशेषणों का प्रयोग किया जाय। यथा—

मुक्ति जल की वह शीतल बाढ़
जगत की ज्वाला करती शांत।
तिमिर का हरने को दुःख भार,
तेज अमिताभ अलौकिक कांत।

२. महात्मा बुद्ध के 'तथागत', 'सिद्धार्थ' आदि अनेक नामों की भाँति एक नाम 'अमिताभ' भी है, जिसका अर्थ है—अमित आभा वाला। अन्धकार की पृष्ठभूमि में चन्द्र के अर्थ में उसका प्रयोग अत्यन्त सार्थक एवं युक्ति संगत है।

अरी वरुणा की.....रवि-चन्द्र।

ऐ वरुणा की शांत कछारो ! (तुम्हारी पुण्यभूमि पर ही) भगवान बुद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने यह उपदेश दिया कि जीवन के अतिवादों का परित्याग करके मध्यमार्ग पर चलकर (व्यक्ति को) अपना जीवन-सुधार करना चाहिए। दुःख के उदय और नाश का कारण व्यक्ति के निजी कर्म हैं--यह संदेश मेघ के समान गम्भीर स्वर में (तुम्हारी शांत कछारों पर ही) दिया गया। यही विश्व-मानवता का जयघोष था। इस पवित्र संदेश की साक्षी आज भी सूर्य और चन्द्र (अपने अलौकिक प्रकाश द्वारा) दे रहे हैं।

यहां कवि ने स्पष्ट किया है कि किस प्रकार प्राचीनकाल में जीवन बिताने के दो ऐसे मार्ग प्रचलित थे, जो अतिवादी तत्त्वों को लिए थे। ये दो मार्ग थे—१. प्रवृत्तिमार्ग या सुखवाद और २. निवृत्तिमार्ग या दुःखवाद। प्रवृत्तिमार्ग के अनुसार यह संसार परम रमणीय है, परम कल्याणकर है, अतः परमकाम्य है। संसार के मध्य रहकर उसके आकर्षणों का आनन्द लूटना ही इस मार्ग का मूल लक्ष्य था। अतः इसे सुखवाद अथवा उपभोगवाद भी कहा गया। दूसरी ओर निवृत्तिमार्ग के अनुसार यह संसार दुःखमय है, इसके समस्त आकर्षण मिथ्या एवं भ्रम मूलक हैं। अतः इस मार्ग में संसार-त्याग पर बल दिया गया तथा आध्यात्मिक जीवन की प्राप्ति के लिए साधना को परमावश्यक माना गया। वस्तुतः ये दोनों मार्ग अतिवादी होने के कारण एकांगी थे। इनके अवलम्बन से सच्चा सुख एवं वास्तविक शान्ति सम्भव न थी। स्वयं महात्मा बुद्ध ने अपने जीवन-काल में इन दोनों मार्गों की सारहीनता का अनुभव कर लिया था। अतः उन्होंने एक ऐसे धर्म का संदेश दिया, जो जीवन के अतिवादों से मुक्त था। उनके संदेश का सार है—सांसारिक आकर्षणों के प्रति न तो पूर्ण आसक्ति हो और न ही पूर्ण विरक्ति। आसक्ति और विरक्ति का समन्वित रूप ही परम श्रेयस्कर है। महात्मा बुद्ध ने इस प्रकार मध्यमार्ग की स्थापना की। यह मध्यमार्ग ही व्यक्ति को मोक्ष-लाभ कराने में समर्थ सिद्ध हो सकता था। मध्यमार्ग में कर्म को प्राधान्य दिया गया। यदि कर्म अच्छा है तो सुख मिलेगा और यदि बुरा है तो दुःख। दुःख का उदय और नाश कर्म पर ही निर्भर है। ऐसा अलौकिक संदेश भगवान बुद्ध ने इन्हीं कछारों में मेघ के समान गम्भीर स्वर में दिया था। यही विश्व-मानवता का जयघोष था। समूचे विश्व की मानो इसी में विजय थी। उनके इस शांतिसंदेश की साक्षी आज भी चन्द्र और सूर्य अपनी प्रकाश-रश्मियों से दे रहे हैं। उनका पावन-संदेश वरुणा नदी के शाँत कछारों पर ही प्रसारित किया गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—१. भगवान बुद्ध के मध्यमार्ग में मुख्यतः "संसार में रहकर संसार से तटस्थ रहने" का संदेश दिया गया है। उनकी यह विचारधारा औपनिषदिक विचारधारा—"कमलपत्रमिवाम्भसाम्" से बहुत साम्य रखती है। जैसे कमल जल में रहते हुए भी जल से परे रहता है, उसी प्रकार प्राणी भी सांसारिकता में लिप्त रहते हुए भी उससे परे रहे।

२. मध्यमार्ग के अष्टाङ्ग हैं—सत्य विश्वास, सत्य कामना, सत्य वाक्य, सत्य व्यवहार, (जीवन निर्वाह के) सत्य उपाय, सत्य उद्योग, सत्य विचार, सत्य ध्यान। यह भगवान बुद्ध की शिक्षा का सारांश है। इसका अभिप्राय यह है कि जीवन और उसके सुखों की लालसा दुःख का कारण है। उस लालसा के मिट जाने से दुःख का अन्त हो जाता है। लालसा पवित्र जीवन से ही मिटती है। उक्त आठ विधियों से पवित्र जीवन प्राप्त होता है। अतः समस्त मार्गों में अष्टाङ्गी मार्ग को श्रेष्ठ कहा गया है—

मार्गाणां अष्टाङ्गिकः श्रेष्ठः सत्यानां चत्वारि पदानि।
विरागः श्रेष्ठः धर्माणां प्राणभूतानां चक्षुष्मान॥

—भगवान

३. बौद्धधर्म की प्राचीनता का प्रमाण वरुणा के शाँत कछार हैं, अन्यथा उनका इतिहास शुद्ध रूप में प्राप्त नहीं होता।

अरी वरुणा.....बने विहार।

भगवान बुद्ध के प्रथम सर्वजनीन स्वागत की पुण्यभूमि होने के नाते तुम्हारा वह अलौकिक स्वागत तथा तुम्हारे इन्हीं कछारों से आरम्भ होने वाला भगवान तथागत के निर्मल यश का प्रचार समस्त विश्व (वसुधा) को अपना (अमर) सन्देश देकर आज भी बारम्बार धन्य है। आज अनेक शताब्दियों के पश्चात् एक बार फिर मूलगन्ध कुटी विहार की स्थापना के रूप में उस अमर सन्देश की झंकार इन (जीर्ण) ध्वंसों में सुनाई पड़ रही है। हमारी कामना है कि इसकी गूंज समस्त दिशाओं में फैल जाय तथा समग्र संसार उस (महात्मा बुद्ध की अमर वाणी) का विहारस्थल बन जाय।

मध्यमार्गी धर्म के प्रचारक एवं उपदेशक भगवान बुद्ध का स्थान-स्थान पर स्वागत किया गया। उन्हें अपने संदेशों के कारण इतना अधिक यश मिला कि वे विश्व के कोने-कोने में आदर और श्रद्धा के पात्र बने। उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संदेश निःसन्देह सम्पूर्ण वसुधा के लिए उपादेय सिद्ध हुए। आज भी उनके वही जीवन-सन्देश वरुणा के शाँत कछारों पर गूंज रहे हैं। अनेक शताब्दियाँ बीत जाने के बाद आज फिर इन पुण्य स्थानों का जीर्णोद्धार हो रहा है। कवि 'प्रसाद' की यह तीव्रेच्छा है कि एक बार फिर क्षुद्ध एवं शोषण से त्रस्त मानवता भगवान बुद्ध के जीवन-संदेशों से शांति-लाभ करे। बौद्धधर्म का इतना अधिक प्रचार-प्रसार हो कि उसकी गूंज से समस्त दिशाएँ प्रतिध्वनित हो जायं और वह समस्त संसार के लिए कल्याणकर सिद्ध हो।

विशेष – १. प्रसाद पर बौद्ध-धर्म का प्रत्यक्ष प्रभाव है। बौद्ध-दर्शन के प्रति उनके हृदय में अटूट निष्ठा एवं आस्था है। फलतः उनके अनेक नाटकों, काव्यों एवं निबन्धों आदि में बौद्ध-दर्शन से सम्बद्ध विचार व्यक्त हुए हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में भी उनके बौद्ध-दर्शन सम्बन्धी विचारों का सुन्दर नमूना उपस्थित किया गया है। बौद्ध-धर्म के प्रति आज भी उनके हृदय में विशेष स्थान है। तभी तो वे व्यष्टि से समष्टि की ओर उन्मुख हुए हैं -

आज कितनी शताब्दियों के बाद, उठी ध्वंसों में वह झंकार।
प्रतिध्वनि जिसकी सुने दिगन्त, विश्व वाणी का बने विहार॥

'विश्व वाणी का बने विहार' अंश में वृत्त्यनुप्रास की छटा दृष्टव्य है। इस पंक्ति द्वारा कवि ने यह शुभेच्छा भी व्यक्त की है कि मूल गंध कुटी विहार (जिसके उपलक्ष में प्रस्तुत कविता रची गयी) वास्तव में भगवान् बुद्ध की विश्व कल्याणकारिणी वाणी की प्रतिध्वनि—उनके उपदेशों का सार-संदेश—सुरक्षित-संरक्षित रख सके तथा उसका सम्पूर्ण विश्व में प्रचार-प्रसार भी कर सके।

५. ले चल वहाँ भुलावा देकर

परिचय—प्रस्तुत गीत में सरल हृदय कवि इस संसार से कहीं दूर किसी अज्ञात-लोक में जाना चाहता है। उसकी दृष्टि में यह दृश्यमान जगत् छल, कपट एवं प्रवंचना से परिपूर्ण है। सुख और शांति इस जगत् से कोसों दूर हैं। यहाँ प्रेमी को प्रेम के स्थान पर घृणा, निराशा एवं दुःख प्राप्त होते हैं। अविश्वास और स्वार्थ का यहाँ बोलबाला है। अतः कवि अपने नाविक (अथवा नियन्ता) से अनुरोध करता है कि वह उसे यहाँ से कहीं दूर किसी ऐसे रम्य-स्थल पर ले चले, जहाँ चिरशांति एवं अमरता का स्थायी आवास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो, जहां किसी प्रकार की चिन्ता एवं निराशा न हो और जहाँ बैठकर कवि (कवि) इस संसार के सुख-दुःखात्मक दृश्यों के चलचित्र को तटस्थ भाव से देख सके। इस प्रकार वह संसार से पलायन नहीं करना चाहता, वरन् वह एक ऐसी महायात्रा पर चलने का इच्छुक है, जहाँ पहुँच कर व्यक्ति चिरसुख चिरशांति एवं परम आनंद प्राप्त करता है। वह सांसारिक संघर्षों से मुँह न मोड़ते हुए एक उदात्त लक्ष्य की ओर अग्रसर होना चाहता है। वह उस परब्रह्म की खोज करना चाहता है, जिसे पा लेने पर समस्त दुःखों एवं निराशाओं का अन्त हो जायगा।

ले चल..... .....अवनी रे !

हे मेरे नाविक ! (मेरी तुमसे सानुरोध प्रार्थना है कि) तुम मुझे भुलावा देकर उस (अज्ञात) निर्जन द्वीप में ले जाओ, जहां सागर की उत्ताल तरंगें इस कोलाहल भरे संसार को त्याग उठ-उठकर अम्बर के कानों में निष्कपट प्रेम की मधुर कथा कह रही हों।

कवि निर्जन द्वीप में इसलिए जाना चाहता है, क्योंकि वह सांसारिक संघर्षों का सामना करते-करते अब ऊब गया है। सांसारिक संघर्षों का सामना करने की उसमें सामर्थ्य न हो, ऐसी बात नहीं। वह तो सांसारिक संघर्षों में दुःख कपट एवं प्रवंचना का प्राधान्य देखकर ही उनसे विलग होना चाहता है। इस संसार में रमने की तीव्र इच्छा है, किन्तु यहां के प्रवंचना भरे प्रेम-व्यापारों को देखकर उसका चित्त अत्यंत क्षुब्ध एवं निराश है, अतः वह ऐसे लोक में जाना चाहता है, जहाँ सागर की लहरें उसे निश्छल प्रेम का मधुर आख्यान सुनाकर आह्लादित करें।

विशेष—'ले चल वहां भुलावा देकर' गीत के आधार पर कुछ आलोचक 'प्रसाद' जी को पलायनवादी मान बैठे हैं, किन्तु यह उनकी भूल है। वस्तुतः 'प्रसाद' पलायनवादी नहीं हैं, वह तो उस परब्रह्म की खोज करना चाहते हैं जहाँ चिरमंगल एवं चिरजागरण है। विश्व के अनेक कवियों ने सांसारिक प्रेम से चोट खाई है, उन्हें प्रेम में अविश्वास, असफलता एवं निराशा के अतिरिक्त कुछ प्राप्त न हुआ। फलतः उसमें से कुछ पलायनवादी हो गये। उन्होंने संसार-त्याग पर तो बल दिया, किन्तु उन्हें स्वयं यह ज्ञात नहीं कि वे कहाँ जायं ! दूसरी ओर 'प्रसाद' अपने लक्ष्य से सुपरिचित हैं। उनकी कल्पना में तो एक आदर्श संसार का चित्र है। पलायनवादी भावधारा का एक नमूना 'दिनकर' की निम्नलिखित पंक्तियों में देखा जा सकता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं न रुकूंगा इस भूतल पर
जीवन, यौवन, प्रेम गवाँकर;
वायु उड़ाकर ले चल मुझको
जहाँ-कहीं इस जग से बाहर।

—रेणुका

जहाँ साँझ-सी.....घनी रे।

(यहाँ कवि अपनी भावनाओं का प्राकृतिक उपादानों पर आरोपण करते हुए कहता है कि जिस प्रकार मैं साँसारिक जीवन के नाना प्रकार के क्लेशों से संघर्ष करते थक गया हूँ, उसी प्रकार) सन्ध्या की कोमल-मधुर काया भी क्लान्त एवं श्रान्त प्रतीत होती है, (मानो दिनभर उसे नाना प्रकार के संघर्ष सहन करने पड़े हों।) वह नील (नीलाकाश रूपी) नेत्रों से तारों की पंक्तियां ढुलकाती है। (आकाशमण्डल में टिमटिमाने वाले तारे मानो उसकी आँखों के आँसू हैं जिनके प्रवाह से वह अपने दुःख-विषाद को व्यक्त करती है।)

विशेष—छायावादी काव्य की अनेक विशेषताएं 'लहर' के प्रगीतों में स्थान-स्थान पर दृष्टिगोचर होती हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में भी छायावादी काव्य की एक अन्यतम विशेषता—प्रकृति का मानवीकरण—का सुन्दर रूप दृष्टिगत होता है। प्रकृति पर मानवीय चेतना का आरोपण प्रायः समस्त छायावादी कवियों में मिलता है, किन्तु इस दृष्टि से 'प्रसाद' का काव्य विशेषतः समृद्ध है। यहाँ 'प्रसाद' प्रेम के अभाव में दुःखी हैं, अतः उन्हें प्रकृति भी दुःखी दृष्टिगत हो रही है। उनके हृदय में अत्यन्त कोमल भावना व्याप्त है जिससे प्रेरित होकर वह व्यष्टि के स्थान पर समष्टि के सुख की कल्पना करते हैं—

"नील नयन से ढुलकाती हो
ताराओं की पाँति घनी रे।"

जिस गम्भीर.....बनी रे

ऐ मेरे नाविक ! (तू मुझे ऐसे स्थान पर ले चल) जहाँ की गम्भीर एवं मधुर छाया में बैठकर मैं विश्व (के क्रिया-कलापों) के चित्रपट की भाँति देख सकूं तथा प्रभु की दुःख-सुखात्मक वास्तविक व्यापकता (विभुता) से परिचित हो सकूं।

यहाँ कवि रहस्यवादी हो गया है। वह ऐसे स्थान पर पहुँचना चाहता है, जहाँ पर उसे चिरविश्रामदायिनी छाया मिल सके और विश्राम करते हुए वहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से सम्पूर्ण विश्व के क्रिया-कलापों को चित्रपट की भाँति देख सके, जहाँ से उसे विश्व की वास्तविकताओं का परिज्ञान हो सके, सुख-दु.ख के क्रमिक चक्र का स्पष्टीकरण हो सके और उस सर्वव्यापी ब्रह्म की सर्वव्यापकता का रहस्य विदित हो सके।

विशेष—१. सुख-दुःख संसार में क्रमिक रूप से आते हैं। आज दुःख है तो कल सुख, आज हर्ष है तो कल विषाद। कवि पंत ने भी अपनी 'परिवर्तन' शीर्षक कविता में ऐसे अनेक भाव व्यक्त किये हैं, जिनकी 'प्रसाद' जी की 'दुःख-सुख वाली सत्य बनी रे' उक्ति से काफी समता है। यथा—

आज का दुख, कल का आह्लाद,
और कल का सुख, आज विषाद;
समस्या स्वप्न गूढ़ संसार
पूर्ति जिसकी उस पार;
जगत जीवन का अर्थ विकास,
मृत्यु, गति-क्रम का ह्रास !

२. कवि की रहस्यमयता की अभिव्यंजक इन पंक्तियों में प्रगीत-तत्त्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान है।

३. सुख-दुःख विषयक सत्य और प्रभु की प्रभुता का ज्ञान छलछद्मपूर्ण सांसारिक रीति-नीतियों से तो संभव नहीं। इसके लिए तो ब्रह्मलोक ही उपयुक्त है। संसार में रहते हुए मनुष्य सांसारिक आकर्षणों में लिप्त हो जाता है, जिससे वह तत्त्वदर्शन नहीं कर पाता, किन्तु ब्रह्मलोक में स्थित वह, सिनेमा के तटस्थ दर्शक की भाँति संसार के चित्रपट की समस्त वास्तविकताओं का परिच प्राप्त कर लेता है। इसीलिए कवि ने कहा—

जिस गंभीर मधुर छाया में—
विश्व चित्रपट चल माया में—
श्रम विश्राम.....घनी रे।

(कवि अन्त में फिर अपने नाविक से अथवा नियन्ता से प्रार्थना करता है कि) ऐ नाविक ! तू मुझे ऐसे स्थल पर ले चल जहाँ क्षितिज की सीमा से श्रान्ति के बाद चिर विश्राम मिलता हो तथा जहाँ उषा अपने नेत्रों (उज्वल रश्मियों) से अमर जागरण की ऐसी ज्योति बिखेर रही हो जो सृजनात्मक शक्ति (Creative power) से परिपूर्ण हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि एक ऐसे कल्पना-लोक में जाना चाहता है, जहाँ चिरन्तन सुख, चिरन्तन जागरण एवं चिरन्तन कर्मण्यता वर्तमान हो, सभी वस्तुओं में स्फूर्ति एवं सजीवता हो, सर्वत्र जीवन की कर्मण्यता व्यक्त हो तथा जहाँ का अरुणोदय सृजनात्मक शक्ति-सम्पन्न हो।

विशेष—एक अन्य प्रसिद्ध कवि नाथूराम शर्मा 'शंकर' ने भी निम्नलिखित पंक्तियों में कुछ ऐसे ही संसार की कल्पना की है—

पकड़े कमला श्रम के कर को
दिन फेर पिता, वर दे सविता···

६. हे सागर सङ्गम अरुण नील

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत पुरी में मकर संक्रांति १९८८ वि० को लिखा गया है। इस प्रगीत में कवि 'प्रसाद' ने अपने रहस्यवादी भावों को अभिव्यक्त किया है। जिस प्रकार अंग्रेजी कवि वर्ड्सवर्थ (Wordsworth) प्रकृति में उस अनन्त शक्ति के रहस्यमय संकेत पाते हैं, उसी प्रकार हिन्दी कवि 'प्रसाद' भी। वह प्रकृति को सदैव चैतन्यमयी मानते हैं—हर्ष और विषाद दोनों दृष्टियों से उसका पर्यवेक्षण करते हैं। प्रस्तुत प्रगीत में उन्होंने प्रकृति की ओट में मिलन की आतुरता का अत्यन्त हृदयग्राही चित्रण किया है। सागर का हृदय मधुर उमंगों से पूर्ण है। वह अपनी उत्ताल तरंगों से 'किसी' का हृदयालिंगन करना चाहता है। अपनी इस इच्छा की पूर्ति के हेतु वह निरन्तर गतिशील है।

हे सागर सङ्गम ····· ·····अरुण नील।

(प्राकृतिक उपादानों पर उषाकालीन लालिमा का प्रभाव किस प्रकार पड़ता है, इसका वर्णन करते हुए कवि ने प्रातःकालीन लालिमा, सागर और आकाश तीनों का सश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। उषा की अरुणिमा तथा नीलसागर और नीलाम्बर की लालिमा के करुण मिलन से सम्पूर्ण वातावरण में एक विचित्र सुषमा उत्पन्न हो रही थी। कवि अपनी सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि के बल पर इसे 'सागर' की 'प्रेयसी' की संज्ञा देते हुए कहता है—) सागर अपनी असीमता एवं गम्भीरता को त्यागकर अपनी (गर्जना करती हुई) भयंकर लहरों के रूप में गहरे उच्छ्वास भर रहा है। वह (अपने जीवन में) युग-युग से व्याप्त (प्रिया से मिलने की) मधुर कामना को आज पूर्ण करना चाहता है—(उसके सयमजन्य) बन्धन को शिथिल करना चाहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सागर संयमशील एवं गम्भीर-हृदय प्रेमी है। उसकी सहनशीलता अपार एवं अनन्त है। आज उसके हृदय में प्रियमिलनेच्छा इतनी तीव्र हो उठी है कि वह बार-बार अपनी उत्ताल तरंगे भर रहा है। कारण, आज तक वह अपनी प्रेयसी के रूप-सौन्दर्य से अपरिचित था, किन्तु आज उषाकालीन वातावरण में अपनी प्रेयसी के अपार रूप-वैभव को देखकर वह मिलन के लिये आतुर हो उठा है। उसके हृदय में भीषण लहरें बार-बार उठ रही हैं। ये लहरें गर्जना करती क्षितिज तक चली जा रही है। इनका भयंकर रव मानों उसकी (सागर की) आहों एवं दीर्घ श्वासों का सूचक है। अपने जीवन में युग-युग से व्याप्त मिलन की मधुर कामना को पूर्ण करने के लिये आज वह अपनी समस्त संयम शक्ति एवं मर्यादा खो बैठा है।

विशेष—१. 'सागर' को प्रिय रूप में चित्रित करने में कवि की प्रकृति पर्यवेक्षण-शक्ति का अच्छा परिचय मिलता है। वस्तुतः प्रेम-सौन्दर्य भावना और प्रकृति का मानवीकरण छायावादी काव्य की प्राणभूत विशेषताएँ हैं। इन दोनों विशेषताओं का समावेश इन पंक्तियों में अत्यन्त सफलतापूर्वक किया गया है।

२. अनुप्रास और ध्वनि-माधुरी इन पंक्तियों का गौरव है।

पिङ्गल किरणों····· ·····नील !

(प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने सागर की प्रिया 'हिमशैल-बालिका' के सौन्दर्य-मण्डित रूप का चित्रांकन किया है।) तुमने मधुमण्डित पीतवर्णा किरणों जैसी हिम-शैल-बालिका को कब देखा है। यह हिमशैल बालिका संगीत का कलरव करती हुई न जाने किस अतीत (विगत) की गाथा का गायन करती हुई आ रही है। शायद उसके आगमन को चिरस्थायी मिलन समझ कर ही तुम (उसके स्वागत में) फेन रूपी खीलें विकीर्ण कर रहे हो।

उषाकाल में दूर क्षितिज पर आकाश की पृष्ठभूमि में सूर्योदय से पूर्व पीतवर्ण की एक रेखा-सी खिची हुई है। यह पीत-रेखा मानो मधुमण्डित है। कारण, प्रातःकालीन सूर्य-रश्मियाँ पीत एवं रक्त वर्णों का मिश्रण लिए रहती हैं। ऐसी स्थिति में सागर की प्रेयसी को कवि ने 'हिम-शैल-बालिका' की संज्ञा दी है। इतनी अधिक रूप-राशि से मण्डित हिमालय की पुत्री ही हो सकती है। इस प्रकार 'सागर-प्रिया' के लिये 'हिम-शैल-बालिका' विशेषण का प्रयोग अत्यन्त समीचीन है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रातःकालीन वातावरण में वृक्षों पर स्थित पक्षियों का कलरव ही मानो उसका संगीत है। इस संगीत में वह न जाने अतीत की किस मधुर गाथा का प्रकटीकरण करती हुई सागर से मिलनार्थ व्यग्रतापूर्वक चली आ रही है। सागर भी उसके मिलन को अनन्त एवं चिरस्थायी जानकर हर्षाधिक्य से प्रेरित होकर उसके स्वागत में फेन रूपी खीलें विकीर्ण कर रहा है। उसकी लहरों के परस्पर टकराने से 'फेन' उत्पन्न हो रहा है, इसी फेन को कवि ने 'तरल खील' कहा है।

विशेष— १. 'किस अतीत युग की गाथा, गाती आती' पंक्ति में कवि को अपने अतीत प्रेम के मधुर दिनों की स्मृति हो आती है। कवि का अतीत के प्रति तीव्र आग्रह है और यह आग्रह इन पंक्तियों में भी मुखरित है।

२. कविकुलगुरु कालिदास ने भी अपने महाकाव्य 'कुमारसम्भवम्' में हिमवान् सुता पार्वती के अनिन्द्य सौन्दर्य का चित्रण किया है।

३. 'हिमशैल-बालिका.....गाती आती' में रूपकातिशयोक्ति तथा सागर के फेन की 'तरल खील' कहने में कवि की उत्प्रेक्षा-शक्ति का अच्छा परिचय मिलता है।

आकुल कूल..... नील।

(इन पंक्तियों में कवि ने सागर की प्रेयसी की मिलनातुरता का चित्रण किया है। उसका कहना है कि केवल सागर अपनी प्रेयसी से नहीं मिलना चाहता, वरन् प्रेयसी भी अपने प्रिय—सागर से मिलने की उत्कट इच्छा रखती है। यही कारण है कि) वह निरन्तर चली आ रही है। देवलोक की अमरता तथा हरियाली भरे उपवनों की मादक (आलस) छाया का भी परित्याग कर वह अब ऐसा विश्राम चाहती है जिसका दर्शन उसने स्वप्नलोक में ही किया था। वह कब (क्षितिज पर) असीम आकाश के नीचे (सागर के) नीलवर्ण वक्षस्थल में 'अरुण ज्योति की झील' बनकर (सलज्ज भाव से) समायेगी ?

सागर-प्रिया सागर से मिलने की इतनी तीव्र इच्छा संजोये है कि देवलोक के ऐश्वर्यों एवं विलासों का भी उसकी दृष्टि में कोई महत्त्व नहीं है। देवलोक की अमरता भी उसकी प्रिय-मिलनातुरता के समक्ष तुच्छ है। हरियाली भरे उपवनों की मादक छाया का परित्याग कर प्रिय-मिलन के आनन्द का अनुभव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना ही उसका एकमात्र उद्देश्य है। देवलोक को त्याग कर वह इस लोक के सुख वैभवों को लूटना चाहती है। कारण, इस लोक के जिन वैभवमण्डित मुखों का दर्शन उसने स्वप्न में किया था, अब वह उनका साक्षात् सान्निध्य चाहती है।

वस्तुतः कवि सागर और उसकी प्रिया दोनों का स्थायी एवं अनन्त मिलन चाहता है। मिलनेच्छा की पूर्ति के उपरान्त हृदय में उठने वाला ज्वार उसी प्रकार शान्त हो जाता है, जिस प्रकार झील का जल-प्रवाह। झील का जल चांचल्य रहित होता है—उसमें एक विशेष प्रकार का मौन होता है। इसीलिए कवि ने सागर की प्रेयसी के लिए 'अरुण ज्योति की झील' शब्दों का व्यवहार किया हैं। क्षितिज पर आकाश के नीचे सागर के नीलवर्ण वक्षस्थल पर वह सागर-प्रिया स्थायी रूप से ठहर जाय—यही कवि की कामना है।

विशेष—१. सागर और उषा-सुन्दरी के मिलन में कवि ने मानवीय भावों का आरोपण किया है।

२. 'अमृत कथा की माया' 'हरित कानन की आलस छाया' अंशों द्वारा कवि ने देवलोक के स्थायित्व की ओर संकेत किया है।

३. संयोग शृंगार के दोनों आलम्बनों की आतुरता का अत्यन्त स्पष्ट चित्रण किया गया है। सागर ही नहीं, वरन् उसकी प्रेयसी भी सागर से मिलने के लिये आतुर है—

विश्राम माँगती अपना
जिसका देखा था सपना—

४. अन्तिम पंक्तियों में रहस्यवादी तत्त्व (Mystic-Elements) भी अत्यन्त स्पष्ट हैं। आत्मा ही परमात्मा से मिलनार्थ आतुर नहीं, वरन् परमात्मा भी अपनी सृष्टि में अवतरित होकर आत्मा से मिलने की उत्कट इच्छा लिए रहता है।

७. उस दिन जब जीवन के पथ में

परिचय—'लहर' के प्रगीतों की यह अपनी विशेषता है कि उनमें अतीत के प्रति तीव्र आग्रह का भाव मिलता है। कवि बार-बार अतीत के उन रस-भीगे दिनों का स्मरण करता है, जब उसे अपने प्रिय का सान्निध्य प्राप्त था। प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने स्वयं को एक भिखारी के रूप में चित्रित किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस प्रकार भिखारी प्रतिद्वार अन्न-धन की याचना करता है, उसी प्रकार कवि प्रेम-भिक्षा की याचना करता है, जिस प्रकार भिखारी भिक्षा-पात्र लिए रहता है, उसी प्रकार कवि भग्न हृदय (Broken-Heart) रूपी -भिक्षा-पात्र लिए है और जिस प्रकार भिखारी को कोई-न-कोई दयाद्रवित होकर दान देने को तत्पर हो जाता है, उसी प्रकार कवि को भी उसके प्रिय ने असीम प्रेम-दान दिया, फलतः कवि को असीम हर्ष का अनुभव हुआ।

उस दिन.....एक अकिञ्चन।

जीवन की लम्बी यात्रा में वह दिन चिरस्मरणीय रहेगा जब कवि अपने (कष्टों की अधिकता के कारण) काँपते हुए हाथों में (भग्न-हृदय रूपी) टूटे-फूटे पात्र को लिए निकटवर्ती अपरिचित नगर में अधरों में (प्रेम रूपी) भिक्षा की रट लगाए जा पहुँचा था।

कवि की दृष्टि में अतीत के उस दिन का आज भी असाधारण महत्त्व है, जिस दिन वह अपनी प्रिया के सम्पर्क में आया था। वह 'यौवनकाल' का भिखारी है, अतः उसके लिए प्रेम-भिक्षा की याचना करना स्वाभाविक ही है।

विशेष—१. 'छिन्न-पात्र', 'मधु-भिक्षा' तथा 'अकिंचन' शब्द क्रमशः 'भग्न-हृदय', 'प्रेम-भिक्षा' तथा 'प्रेम-भिखारी' के प्रतीक हैं।

२. 'कम्पित कर' में एक ओर छेकानुप्रास की छटा है तो दूसरी ओर इसमें कवि के हृदय की विवशता-आतुरता भी व्यक्त हुई है।

उस दिन.....धन।

(उस प्रेम-भिखारी की करुण पुकार सुनकर) कितने ही लोगों की आंखें आकृष्ट हो उठीं, मानो वे (उसे कुछ देने के स्थान पर) स्वयं उससे कुछ मांग उठीं। प्रेम-सरिता आकुल-व्याकुल होकर मानो अपने चिरसञ्चित धन (प्रेम) को उसे (प्रेम-भिखारी को) सौंप देना चाहती थी।

कवि का प्रेम सच्चा है, अतः उसमें एक प्रबल शक्ति है। उस प्रबल शक्ति का ही परिणाम था कि उस दिन उस अपरिचित स्थान पर उसकी करुणा भरी पुकार सुनकर कई लोग दौड़ पड़े। उसकी ओर कितने ही नेत्र आकर्षित होने लगे, कितने ही नेत्रों में प्रेमरस की धारा उमड़ पड़ी। जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार बाढ़ आने पर नदी अकुलाकर शक्तिशाली बाँधों तक को तोड़ देती है और वेगपूर्वक बहने लगती है, उसी प्रकार कवि के अतृप्त हृदय की तृषा को शान्त करने के लिए प्रेम की अथाह सरिता अबाध गति से बहने लगी। ऐसा प्रतीत होता था मानो प्रेम-भिखारी कवि को उसकी प्रिया अपना चिरकाल-संचित धन – प्रेम — देना चाहती हो।

विशेष— १. 'मधु-सरिता' शब्द 'प्रेम-सरिता' के प्रतीक रूप में व्यवहृत हुआ है।

२. 'लोगों की····· कुछ आई' अंश कहकर कवि ने प्रेम में दोनों पक्षों की अधीरता पर बल दिया है। एकांगी प्रेम कवि को प्रिय नहीं है।

उस दिन····· ····· ·····मधुवन।

(जीवन की लम्बी यात्रा में) उस दिन फूलों ने मानो अपनी पंखुड़ियाँ खोल लीं, आंखें आंखों से मिलकर खिलवाड़ करने लगीं, हृदय अनियन्त्रित हो गये, दो दुःखी मन पागलों की भाँति (एक दूसरे पर) लुटने लगे (मुग्ध होने लगे)। (प्रेम-भिखारी कवि के) भग्न-पात्र (भग्न हृदय) में वह रस (मात्रा में अत्यधिक होने के कारण) समा तक न पाता था। कवि स्वयं उस अज्ञात मधुवन (प्रेम वन) को आश्चर्य-चकित-सा देख रहा था।

कवि युगों से अपने अन्तःकरण में प्रिय-मिलनेच्छा संजोए था। यौवन-काल में यह इच्छा और भी बलवती हो चुकी थी। अतः चिर प्रतीक्षित प्रिय से साक्षात्कार होते ही एक ओर यौवन की चंचलता और प्रेम की मादकता के कारण और दूसरी ओर हर्षातिरेक के कारण कवि की हृदय-कलिका खिल उठी। उमंगों एवं भावनाओं का प्रवाह सीमातीत होकर बह चला। हृदय अनियन्त्रित हो उठे – उनकी अवस्था विक्षिप्तों-सी हो चली। कवि की दृष्टि में उस दिन का महत्त्व अपार है। उसके भग्नहृदय रूपी पात्र में इतना अधिक प्रेम-रस डाला गया कि उसके आश्चर्य की कोई सीमा ही न रही।

विशेष— १. प्रथम मिलन में आवेश, आतुरता, आत्म-समर्पण आदि सब कुछ रहता है। व्यक्ति प्रेमानन्द से उन्मत्त होकर आत्म-विस्मृत और आत्म-विभोर हो जाता है। वह अपनी चेतना-शक्ति तक खो बैठता है। इसीलिए कवि ने कहा—

"लुटने लगे विकल पागल मन"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. 'छिन्नपात्र' तथा 'मधुवन' क्रमशः भग्नहृदय एवं प्रेमोपवन के प्रतीक हैं।

३. मनु ने भी 'कामायनी' में रसवर्षण के दिन श्रद्धा से कहा था—

"क्षुद्र पात्र इसमें तुम कितनी
'मधुधारा हो ढाल रहीं।'

उस दिन..... ... .अपना धन।

(कवि की अपने प्रिय से साक्षात्कार के दिन ऐसा अनुभव हुआ कि मानो चारों ओर) मधु एवं मंगल की वर्षा हो रही थी तथा काँटों ने मोती धारण कर लिए थे। रोती हुई आशा जिन्हें अपना धन (प्राप्तव्य) समझकर चुन रही थी।

जिस प्रकार वर्षा होने पर शुष्क धरती की पिपासा शान्त हो जाती है और चारों ओर हरियाली एवं सरसता छा जाती है, उसी प्रकार कवि भी उस प्रेम की मंगल-वर्षा से तृप्त हो गया और उसके व्यक्तित्व के रोम-रोम में मधुरिमा एवं सरसता का संचार हो गया। उसका नीरस जीवन समाप्त हो गया। जीवन भर कवि को क्लेशों, यातनाओं एवं निराशाओं के अतिरिक्त कुछ प्राप्त ही नहीं हुआ, किन्तु आज प्रिय से साक्षात्कार होने पर प्रथम बार उसे आभास हुआ कि उसके दुःख भरे दिनों का अन्त हो गया है और वह प्रिय से प्रेम पाने का पूर्ण अधिकार रखता है। उसके जीवन का हर्षोल्लास प्रेमाभाव के कारण लुप्त हो चुका था, किन्तु आज फिर से उसके जीवन की आशा-लता लहलहा उठी।

विशेष—१. लाक्षणिकता छायावादी काव्य की अनूठी विशेषता है। काँटों का मोती पहनना, आशा का रोते हुए उन्हें बटोरना आदि प्रयोग लाक्षणिक हैं, जिनमें कल्पना का विनियोग भी निहित है।

२. छन्द की दृष्टि से कवि ने प्रस्तुत प्रगीत में नवीन प्रयोग किये हैं। छन्द में कवि ने क, ख, ख, ख, ग का अन्त्यक्रम रखा है। यथा—

उस दिन जब जीवन के पथ में, —क
मधु-मङ्गल की वर्षा होती —ख
काँटों ने भी पहना मोती, —ख
जिसे बटोर रही थी रोती, —ख
आशा, समझ मिला अपना धन। —ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. बीती विभावरी, जाग री !

परिचय प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने प्रभातकालीन वातावरण की सुन्दर झाँकी प्रस्तुत की है। रात्रि का अन्त हो रहा है, चन्द्र और तारे निष्प्रभ हो रहे हैं तथा उषा-सुन्दरी का उदय हो रहा है। चारों ओर उल्लास एवं स्फूर्ति छा रही है। समस्त प्राणी निद्रा त्याग कर अपने-अपने कार्यों में फिर से जुट गये हैं, किन्तु कवि की प्रिया अभी भी निद्रालीन है। उसके सुकुमार अंगों में न जागृति है और न ही स्फूर्ति। वह पूर्ण जड़ता की स्थिति में है। कवि ने अनेक उद्भावनाओं एवं कल्पनाओं द्वारा गीत में एक विशेष आकर्षण, सरसता एवं सुकुमारता भर दी है।

बीती विभावरी.....रस गागरी।

री सखि ! रात्रि समाप्त हो गई है, (सभी प्राणी निद्रा त्याग चुके हैं) तू भी उठ। (आलस्य एवं जड़ता को त्यागकर तू स्फूर्तिवती हो जा, अपने अंगों में जागृति और उल्लास भर ले।) देख, आकाश रूपी पनघट में उषा रूपी नागरी (चतुर स्त्री) तारक रूपी घड़ा डुबो रही है (तारे विलीन हो रहे हैं और प्रभात होने को है।) पक्षी-समुदाय कुल-कुल का (मधुर) नाद कर रहा है (जिससे सम्पूर्ण वातावरण गूंज उठा है) वृक्षों एवं पौधों के नवीन पत्ते पल्लवित हो उठे हैं (उनमें सक्रियता एवं चेतनता का उदय हो गया है।) लताओं में लगी हुई मुकुलित कलियां भी अब पूर्ण विकसित हो गयी हैं। (उनमें नवीन रस का संचार हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है मानो) लताएं नवरस-परिपूर्ण गगरिया लिए खड़ी है। (ऐसी स्थिति में यदि तू निद्रामग्न रहेगी, तो उचित न होगा।)

विशेष—१. कवि ने यहाँ सांगोपांग रूपक की अत्यन्त उत्कृष्ट योजना की है।

२. उषा का मानवीकरण (Personification) किया गया है। प्राचीन-काल में भारतीय रमणी प्रातःकाल उठते ही सर्वप्रथम जल लाने के लिए घड़ा हाथ में लेकर पनघट पर जाया करती थी। उषा भी मानो एक भारतीय रमणी है, जो आकाश रूपी पनघट से तारा रूपी घड़ों में जल लेने जाती है। उषा को भारतीय रमणी के रूप में चित्रित करना कवि की प्रतिभा एवं संस्कृति-निष्ठा का परिचायक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. 'खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा' आदि पंक्तियों द्वारा प्रभातकालीन वातावरण सजीव हो उठा है। ऐसा प्रतीत होता है मानो साक्षात् पक्षीगण कलरव कर रहे हैं। मन्द-मन्द समीर के बहने की व्यंजना 'किसलय·····डोल रहा' पंक्ति द्वारा की गयी है।

४. काव्य-गुण की दृष्टि से प्रस्तुत पद का एक-एक शब्द माधुर्य गुण को व्यंजित करता है और मानव-हृदय पर माधुर्य एवं सौकुमार्य की अमिट छाप छोड़ जाता है। वर्ण-संगीत की दृष्टि से निम्न पंक्तियाँ प्रसाद-काव्य का अनुपम उदाहरण हैं—

खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अञ्चल डोल रहा।

५. ध्वन्यात्मकता का तत्त्व भी प्रस्तुत पद में पर्याप्त मात्रा में दृष्टिगत होता है।

अधरों में राग ·····विहाग री!

री सखी! तू अधरों में तीव्र राग (लालिमा), केशपाश में सुगन्धित द्रव्यों का लेप तथा आंखों में विहाग-गीत (प्रेम-गीत) भर कर अभी तक निद्रालीन है (जबकि सारा संसार जाग चुका है।)

इन पंक्तियों में कवि वे विरहविदग्धा अभुक्ता नायिका का चित्रण किया है। प्रभातकालीन मनोरम बेला में सृष्टि के जड़-चेतन सभी पदार्थ जागृतावस्था में आ चुके हैं, किन्तु कवि की नायिका अभी निद्रामग्न ही है। उसके अधरों की लालिमा यथावत् विद्यमान है, उसमें किसी प्रकार की न्यूनता नहीं आयी। (अथवा उसके अधरों में अभी तक प्रिय का प्रेम-रस भरा है।) उसके केश-पाश में अभी भी चन्दनादि सुगन्धित पदार्थों की सुगन्ध यथावत् विद्यमान् है, उसकी साजसज्जा में भी कोई अन्तर नहीं आया। उसकी बंद आँखों में अभी प्रिय-वियोगजन्य उदासीनता छायी है। इस प्रकार इन पंक्तियों में कवि स्पष्ट करना चाहता है कि नायिका नायक से मिल नहीं सकी। प्रिय से समागम करने के लिए उसने पूरी शृंगार-सज्जा की थी, किन्तु प्रिय से समागम न होने के कारण उसकी शृंगार-सज्जा यथावत् बनी रही, उसमें रंचमात्र भी परिवर्तन न हुआ। समागम की मधुर बेला में नायिका के अधरों की लालिमा निस्तेज हो जाती है, केशराशि बिखर जाती है, किन्तु यहाँ ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। अतः उसका शृंगार स्वस्थ है। रात्रिभर प्रियमिलनेच्छा की अपूर्ति के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण वह अश्रुपात करती रही, सो न सकी। अब प्रभात की वेला में वह कुछ-न-कुछ निद्रानुभव करने लगी है। उसके अलसाये नेत्रों में 'विहाग गीत' (प्रेम-गीत) भरा है। उसके न उठने का कारण प्रियमिलनेच्छा की अपूर्ति का दुःख ही है।

विशेष—१. कविकुल गुरु कालिदास ने भी अपने 'शृंगारतिलक' काव्य की 'कस्तूरविरपत्र भंगनिकरो भ्रष्टो न गण्डस्थलः' आदि पंक्तियों में विरह-विदग्धा अभुक्ता नायिका का रम्य चित्रण किया है।

२. प्रस्तुत गीत की रचना के मूल में 'शिशुपालवध' महाकाव्य के प्रभात-वर्णन का प्रभाव दृष्टिगत होता है।

३. प्रस्तुत गीत की शैली उद्बोधनात्मक है, जिसमें मधुरता, सरसता तथा प्रवाहमयता का यथास्थान सुन्दर प्रयोग हुआ है।

४. वर्ण-विन्यास अत्यंत सुन्दर एवं कोमल है तथा संगीत-तत्त्व आद्यन्त व्याप्त है।

९. आँखों से अलख जगाने को!

परिचय—कवि 'प्रसाद' ने जहाँ प्रेम के अनेक भव्य चित्र उतारे हैं वहां उषाकालीन वातावरण के भी अनेक चित्र उतारे हैं। उन्होंने कई प्रकार से प्रभात (उषा) को अपने गीतों में चित्रित किया है। 'बीती विभावरी जागरी' प्रगीत में उसे यदि पनिहारिन के रूप में प्रस्तुत किया है, तो प्रस्तुत प्रगीत में उसे रतिश्रांता नायिका के रूप में, जो नायक (आराध्य) से मिलनार्थ रात्रिभर विहार करती रही। कवि ने सर्वत्र प्रकृति का मानवीकरण किया है। प्रस्तुत प्रगीत में भी उसने 'प्रकृति' को अपने प्रिय 'पुरुष' से मिलनार्थ आकुल दिखाकर, उसका मानवीकरण किया है। प्रकृति अपने प्रिय से मिलने के लिए वैसे ही आतुर रहती है जैसे एक सामान्य नायिका नायक से मिलने के लिए।

आंखों से..... .....ललाई है।

आज आँखों में मादकता भरी लालिमा धारण करके उषा (तुल्य नायिका) (साक्षात्) भैरवी के समान साधना करती हुई दृष्टिगत होती है।

उषा रक्तवर्ण की वेषभूषा धारण किये है। अपने प्रिय की प्राप्ति के लिए उसने साधनामय जीवन अपना लिया है। साधना उसके जीवन में विशेष स्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगी है। उसके लाल नेत्र इस बात को प्रामाणित करते हैं कि साधनालीन होने के कारण वह रात्रिभर शयन न कर सकी। निद्रा की अपूर्ति के कारण उसके नेत्रों में आलस्य तो भरा ही है। इसके अतिरिक्त उनमें मादकता भी छायी हुई।

विशेष—उषा (नायिका) को एक तपस्विनी के रूप में प्रस्तुत करना कवि की नवीन कल्पना है। रात्रि में जागरण करने से नेत्रों में लालिमा छा जाती है। उषा की लालिमा का कारण-रात्रि का जागरण ही है।

कहता दिगन्त ..... अंगराई है।

(प्राची दिशा के प्रेम-रहस्य को उद्घाटित करते हुए) मलय-समीर दिगन्त से कहता है कि पूर्वदिशा रात्रिभर (प्रिय के साथ) मधुवन में विहार करती रही, (फलतः) उसकी दृष्टि में लज्जा तथा (अंगों में) आलस्य छाया है।

प्राचीन दिशा मानो एक रमणी है, जिसके नेत्रों में लज्जाजन्य लालिमा व्याप्त है। उसकी इस लालिमा का मूल कारण यह है कि वह एक अभिसारिका नायिका है, जिसने रात्रिभर मधुवन में अपने प्रिय के साथ अभिसार किया है। प्रियतम के मिलन-सुख को पा लेने के कारण वह रात्रिभर जागती रही, जिससे प्रभातकालीन वेला में उसके नेत्रों में लालिमा का होना स्वाभाविक है। उसके अंग भी अलसाये हुए हैं। उसके नेत्रों की लालिमा तथा अंगों के आलस्य को देखकर मलय-समीर पूरा रहस्य जान गया। उसके प्रणय-रहस्य का दिगन्त में प्रसार करने के लिए वह मन्द-मन्द गति में बहने लगा।

विशेष—१. प्राची को अभिसारिका नायिका के रूप में चित्रित करना अत्यन्त कलात्मक एवं उत्कृष्ट बन पड़ा है।

२. 'दिगन्त' और 'मलय-पवन' का मानवीयकरण किया गया है।

३. 'आलस की अँगराई' अंश में अनुप्रास की छटा अवेक्षणीय है। 'अँगड़ाई' के स्थान पर 'अँगराई' का प्रयोग भाषा की कोमलता एवं संगीतात्मकता की रक्षा के लिए किया गया है।

लहरों में ..... लगाई है?

(प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने सागर का चित्र उतारा है।) सागर की लहरों की चंचल क्रीड़ा, (उसके) काँपते हुए वस्त्र हैं जिनसे वह अपनी नीरभरी आँखें पोंछ रहा है। न जाने किसने (उसके हृदय को) दुःख पहुँचाया है।

Adhikari Publication Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सागर के हृदय में अनेक ऊँची-नीची लहरें उठ रही हैं, जिससे उसमें उद्वेलन-सा हो रहा है। ये लहरें ही मानो उसके वस्त्र हैं। ये वस्त्र इस समय हिल रहे हैं जिससे उसके हृदय का विषाद व्यक्त होता है। लहरों के बार-बार डूबने-उतराने (परस्पर टकराने) से अनेक जलबिन्दु बिखर गये हैं। ये जलबिन्दु मानो उसकी करुण-कथा को साकार करने के लिए अश्रुओं के रूप में उभर उठे हैं। उसके हृदय पर प्रियतम का गहरा आघात लगा है, जिससे उसका हृदय छिन्न-भिन्न हो गया है। छिन्न-भिन्न हृदय का आँखों से अश्रुओं के माध्यम से व्यक्त हो जाना स्वाभाविक ही है।

विशेष—१. सागर के प्रियतम द्वारा उस अनन्त एवं अखण्ड सत्ता की ओर संकेत किया गया है, जिसने समग्र सृष्टि का निर्माण किया है—

२. विप्रलंभ शृंगार की दृष्टि से इन पंक्तियों का सौन्दर्य देखते ही बनता है—

लहरों में यह क्रीड़ा चंचल
सागर का उद्वेलित अंचल।
है पोंछ रहा आँखें छल छल,
किसने यह चोट लगाई है।

३. सागर का प्रयोग उपलक्षण रूप में किया गया है। उसके माध्यम से समग्र प्रकृति का ग्रहण है। 'प्रकृति' और 'पुरुष' के प्रेम की अभिव्यक्ति के कारण रहस्यमयता का तत्त्व मुखर है।

४. संगीतात्मकता, ध्वन्यात्मकता तथा छेकानुप्रास ('छल-छल' में) की छटा इस पद की अनुपम विशेषताएँ हैं।

१०. आह रे, वह अधीर यौवन !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने यौवन-काल का महात्म्य-गान किया है। यौवन-काल में व्यक्ति में हृदय-पक्ष की ही प्रधानता रहती है। भावों से प्रेरित होकर वह अनेक मधुर कल्पनाएँ करता है तथा एक विचित्र प्रकार की मादकता उसके व्यक्तित्व को सराबोर किये रहती है। वह बुद्धि की विद्यमानता में भी उसका उपयोग नहीं कर पाता। बुद्धि की प्रत्येक बात उसे अग्राह्य प्रतीत होती है। उसके समस्त क्रिया-कलापों एवं वचनों के मूल में एक प्यास-सी छायी रहती है। यह प्यास है—प्रेम की। वह अपने अन्तर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस अपने 'मन के मीत' पर उड़ेल देना चाहता है। अपने प्रिय के अतिरिक्त उसकी चेतना में अन्य कुछ नहीं रहता। कवि ने भी यौवन-कालीन इस मादकता का अनुभव किया है। उसकी धारणा है कि यौवन के दिन ही गौरव के दिन हैं। (Days of Youth are the days of glory) यौवन जीवन की भूमिका है। यौवन की मधुर एवं सुखमयी घड़ियों में ही व्यक्ति अपने हृदय द्वारा बुद्धि को पराजित कर देता है।

आह रे.....यौवन !"

कवि कहता है—मैं उस यौवन का वर्णन कैसे करूं, जो अधीरता-प्रधान है। (व्यक्ति पर) प्रचण्ड वायु के वेग के समान (भावों के वेग का) पागलपन उसी प्रकार सवार हो जाता है जिस प्रकार (किसी मन्दोन्मत्त पर) निरन्तर मदिरा-वर्षा का सागर (के जल की भाप) से निर्मित मेघमण्डली जिस प्रकार (सूर्य के) समस्त प्रकाश को आच्छन्न कर लेती है, उसी प्रकार यौवनकालीन (हृदय की) भावनाएं (अपनी समवेत शक्ति द्वारा) बुद्धि रूपी प्रकाश को आच्छन्न कर लेती हैं। भावनाओं के अनन्त आकाश में बुद्धि की स्थिति (बादलों में) यदा-कदा कौंधने वाली विद्युत की-सी होती है। अधीर युवक जीवन का (अधिक-से-अधिक) उपभोग करना चाहता है।

अधीरता यौवन का वैशिष्ठ्य है। भाव-शक्ति युवावस्था में इतनी तीव्र एवं प्रचण्ड होती है कि युवक उस पर नियन्त्रण नहीं कर पाता। भावों का वेग प्रचण्ड वायु के वेग से भी कहीं अधिक होता है। फलतः युवक पर एक पागलपन-सा सवार हो जाता है। भावाविष्ट होकर वह जिस किसी पर अपने अन्तर का प्रेम उड़ेलने लगता है। प्रतिक्षण, प्रतिघड़ी उस पर एक प्रकार की मादकता-सी छायी रहती है। उसकी मनोदशा वही समझ सकता है, जिसने यौवन के मधुमय क्षणों का स्वयं अनुभव किया हो। उसकी भावनाएँ आकाश के समान व्यापक एवं रहस्यमय होती हैं। यौवनकालीन मादक घड़ियों में व्यक्ति की विवेक-बुद्धि कुण्ठित हो जाती है। प्रेम के आवेश की ही प्रधानता होती है। बुद्धि यदि सत्पथ का निर्देशन करती भी है तो हृदय उसकी परवाह नहीं करता। भावनाओं के अनन्त-असीम आकाश में बुद्धि की स्थिति बादलों में यदा-कदा कौंधने वाली विद्युत् के समान क्षणिक होती है। व्यक्ति इस मादक अवस्था में जीवन का अधिक-से-अधिक उपभोग करना चाहता है, अधिक-से

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक हास-विलास करना चाहता है, अतएव उसमें अधीरता एवं आकुलता की प्रधानता रहती है।

विशेष—१. 'मत्त-मारुत' में छेकानुप्रास की छटा है।

२. यौवन अन्धा होता है, इसका प्रकटीकरण मेघ, प्रकाश, आकाश तथा चपला के रूपक द्वारा अत्यन्त कौशलपूर्वक किया गया है—

सिन्धु बेला-सी घन मण्डली
+ + +
भावना के निस्सीम गगन,
बुद्धि चपला का क्षण नर्तन—

३. 'आह रे, वह अधीर यौवन' में मानवीकरण शैली का सुन्दर प्रयोग बन पड़ा है।

आह रे.....अधीर यौवन !

(यौवन-काल की विशिष्टताओं का गायन करते हुए कवि एक अत्यन्त मादक चित्र उतार रहा है) युवावस्था में (प्रेमी-प्रेमिका के) अधरों में अधरामृत पान करने की तृषा रहती है तथा नेत्रों में (एक-दूसरे का) दर्शन करने का विश्वास। धमनियों में आलिंगनेच्छाजन्य मधुर पीड़ा छा जाती है। (फलतः प्रेमी-प्रेमिका) समस्त (सांसारिक) बन्धनों को उसी प्रकार तोड़ देते हैं, जिस प्रकार (वर्षाकाल में) जल की बूंदें इधर-उधर बिखर कर सम्पूर्ण धरा को भर देती हैं।

यौवनावस्था में नर-नारी का पारस्परिक आकर्षण अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचा होता है। प्रेमी अपनी प्रिया के अधरों का शत-शत चुम्बन करते हुए भी संतोष-लाभ नहीं करता। उसके नेत्रों में प्रिया-दर्शन की अभिलाषा तथा अधरों में प्रिया के अधरामृत-पान की लालसा सदैव बनी रहती है। वह प्रिया के अधिकाधिक सामीप्य में रहने पर भी तृप्त नहीं होता। उसकी प्रेम-तृषा तीव्र-से-तीव्रतर होती जाती है। उसकी चेतना में अखण्ड विश्वास एवं आशा होती है। प्रेम और विलास के अतिरिक्त वह अन्य किसी तत्त्व की कल्पना भी नहीं करता।

मिलन और दर्शन की इच्छा तो उसमें बनी ही रहती है, साथ ही मधुर आलिङ्गन भी उसका अभीष्ट रहता है। प्रिया के आलिंगन-पाश में आबद्ध होने के लिए उसके शरीर की शिराओं में अत्यन्त प्रबल-गति से रक्त की धारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दौड़ने लगती है। आलिंगनेच्छा के कारण उसके चित्त में एक मधुर पीड़ा छा जाती है। फलतः वह लोक-लाज, भय-संकोच, मान-अपमान आदि समस्त सांसारिक बन्धनों का तिरस्कार करने लगता है। वर्षाकालीन जल की बूँदों द्वारा धरा के शुष्क प्रांगण में शीतलता एवं तृप्ति भर दी जाने के समान प्रिया के प्रेम-रस की बूँदें उसके हृदय में शीतलता एवं शान्ति का संचार कर देती हैं।

विशेष—१. प्रस्तुत पंक्तियों में डॉ० नगेन्द्र के शब्दों में 'वासनाओं का स्वस्थ प्रदर्शन' किया गया है।

२. 'सरस-सीकर' में छेकानुप्रास है।

३. 'यौवन' का मानवीकरण किया गया है।

आह रे .....यौवन।

(प्रस्तुत पद में कवि ने इस तथ्य को स्पष्ट किया है कि व्यक्ति का पूर्ण विकास युवावस्था में ही होता है। वस्तुतः कवि ने स्वयं जीवन में यौवन का अनुभव किया है। अपने विगत यौवन के मादक एवं रसभरे दिनों की स्मृति आज भी उसके मानस-पटल पर अत्यंत स्पष्ट रूप से अंकित है। निजी अनुभवों के आधार पर ही वह युवक समुदाय को सन्देश दे रहा है।) युवावस्था में व्यक्ति का रूप-सौन्दर्य अपने पूर्ण विकास पर होता है। जिस प्रकार ऋतुराज कुसुमाकर में (उद्यान के) समस्त पुष्प पूर्णरूपेण विकसित हो जाते हैं, उसी प्रकार युवावस्था रूपी मधुऋतु में युवा-जीवन रूपी पुष्प विश्व रूपी मधुवन में पूर्ण विकास प्राप्त करता है। किन्तु यौवनावस्था (वास्तव में) जीवन की रंगमयी भूमिका है जिसे (युवकों को) आंख भर देखना चाहिए। उस ईश्वर की लघुता ही (वस्तुतः यौवन रूपी) समय के सुन्दर वातायन से (समग्र संसार के) अदृष्ट नर्तन (क्रिया-कलाप) को देखने आती है।

यौवन-काल व्यक्ति के जीवन का सुन्दरतम भाग होता है। इस अवस्था में उसका रूप-सौन्दर्य एवं विकास अपने चरमोत्कर्ष पर होता है। जिस प्रकार पुष्प की महत्ता उसमें निहित सुगन्ध के कारण होती है, उसी प्रकार यौवन की महत्ता उसकी मादकता के कारण होती है। जिस प्रकार पुष्पों का आगमन वृक्षों पर लगने वाले फलों की पूर्व सूचना देता है, उसी प्रकार यौवन का आगमन भावी जीवन की पूर्व सूचना देता है। अतएव 'भूमिका अपनी रंगमयी' शब्दों का प्रयोग किया गया है।

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस प्रकार वातायन से दूरस्थ दृश्य एवं घटना बड़ी सुगमतापूर्वक देखी जा सकती है, उसी प्रकार यौवन के समय रूपी वातायन से समग्र संसार के क्रिया-चक्र देखे जा सकते हैं। यौवनकाल के रूप में वस्तुतः वह व्यापक सत्ता (ईश्वर) ही अपने लघु रूप में व्यक्त होती है। अतएव कवि ने –

"अखिल की लघुता आई बन—
समय का सुन्दर वातायन ।"

शब्दों का प्रयोग किया है।

जीवन में अदृष्ट का अपना विशेष महत्व एवं गौरव होता है। न जाने किस समय 'अदृष्ट' व्यक्ति के जीवन को क्या रूप दे दे, न जाने कब वह उसके जीवन के हर्षोल्लास को रुदन-विषाद में बदल दे। अतः कवि का युवक-समाज के प्रति संदेश है कि यौवनकालीन साहस एवं आशावाद पर गर्वान्वित होना उनकी भूल है।

विशेष—१. प्रस्तुत पद में कवि के व्यक्तिगत जीवन की अच्छी झलक प्रस्तुत है। सम्भवतः कवि को अपने यौवनकाल के अन्त में बहुत बड़ी आपदाओं का सामना करना पड़ा, जिसके कारण उसने यौवन के हर्षोल्लास, आशा एवं साहस को निरर्थक एवं निस्सार कहा है।

२. पद में प्रयुक्त भूमिका, रंगमयी, अदृष्ट, नर्तन आदि शब्द अत्यन्त अर्थगर्भित हैं।

३. "मधुर जीवन के, पूर्ण विकास,
विश्व-मधु-ऋतु के कुसुम-विलास
अरे अभिलाषा के यौवन !

पंक्तियों में मालोपमा की आभा अवलोकनीय है। कुशल कवि ने एक उपमेय 'यौवन' के लिए अनेक उपमान प्रस्तुत कर दिये हैं।

४. 'अदृष्ट', 'नियति' आदि शब्द 'प्रसाद'-काव्य में अन्यत्र भी प्रयुक्त हुए हैं। यहाँ प्रयुक्त 'अदृष्ट' शब्द एक ऐसी शक्ति की ओर इंगित करता है जिसे वशीभूत एवं दमित करना व्यक्ति की सामर्थ्य से परे है। निश्चय ही जीवन-चक्र में इस शक्ति का विशेष महत्त्व एवं गौरव है। इसका तिरस्कार करने वाला इसके प्रकोप से बच नहीं सकता। अतएव कवि ने युवक समाज को इस विषय में सतर्क किया है।

५. 'अखिल की लघुता आई बन' प्रयोग द्वारा पद में रहस्यमयता का समावेश हो गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. तुम्हारी आँखों का बचपन !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने अपनी प्रियतमा के शैशव का अत्यन्त रस भरा चित्र खींचा है। अतीत का मोह कवि 'प्रसाद' के अनेक गीतों में व्यक्त हुआ है। यहाँ भी उसके अतीत की मधुर घड़ियाँ साकार हो उठी हैं। यद्यपि आज वह भिन्न स्थिति में है, तथापि यौवन और शैशव के मधुर चित्र उसके स्मृति-पटल पर यथावत् विद्यमान हैं। आज वह अपनी प्रियतमा से विलग हो चुका है, उसका शैशव और यौवन दोनों समाप्त हो गये हैं, किन्तु फिर भी उस सुनहरी स्मृति को वह नहीं भुला पाया। सुनहरे दिनों की सुनहरी स्मृति के आते ही उसके हृदय में एक कसक एवं टीस-सी उठती है। यह कसक उसके अंग-प्रत्यं पर छा जाती है।

तुम्हारी आँखों .....व्यतीत जीवन !

कवि का कथन है कि व्यतीत जीवन (शैशवकालीन मधुर घड़ियों) को भुलाना अत्यंत कठिन है। कारण, प्रिया की शैशवकालीन क्रीड़ाओं में एक (विशेष प्रकार का) आकर्षण था। वह स्वच्छन्दतापूर्वक आंगन में उछलती-कूदती थी। कवि-प्रेमी का मन हँसते-हँसते (उसे प्रसन्न करने के लिए क्रीड़ा में) हार मान लेता था।

प्रिया के शैशवकालीन मधुर-कोमल खेल आज भी कवि की चेतना को सराबोर किये हुए हैं। उस समय उसकी प्रिया की प्रेमी आँखों में एक विशेष प्रकार का आकर्षण एवं सौकुमार्य था। सरलता एवं भोलापन उसके व्यक्तित्व के निजी गुण थे। वह घर के आँगन में स्वच्छन्दतापूर्वक नाना प्रकार की क्रीड़ाएँ किया करती थी और कवि हर्ष-विभोर होकर उस पर सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार रहता था। वह विगत जीवन वस्तुतः इतना मनोरम एवं प्रियकर था कि उसे भुला पाना कवि के वश से परे है।

विशेष—१. 'आह रे, वह व्यतीत जीवन' पंक्ति से स्पष्ट है कि कवि का विगत जीवन अत्यन्त मधुमय रहा है। आज उसके जीवन में भीषण परिवर्तन उपस्थित हो गया है।

२. पंक्तियों का वर्ण-विन्यास अत्यन्त कोमल एवं मधुर है। उनमें संगीतात्मकता तथा स्मृति संचारी का सुन्दर समन्वय हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी आँखों..... ....मलय-पवन।

शैशवकाल में बसन्त प्रिया का सहचर था, जो चारों दिशाओं में माधुर्य फैलाता था। (क्रीड़ा करते समय) प्रिया की किलकारियों का स्वर (समस्त आंगन में) गूंज उठता था और उस स्वर से मलय-पवन भी प्रसन्न हो उठता था।

'साथ ले सहचर सरस वसन्त' कहकर कवि स्पष्ट करना चाहता है कि उसकी प्रिया में कुछ-कुछ यौवन उभर आया था। उसके रूप में ठीक उसी प्रकार का सौन्दर्य एवं माधुर्य आ गया था जैसा कि वसन्तकाल में दिग्-दिगन्त पर। वसन्त के आगमन पर समस्त दिशाएं उल्लास एवं सारस्य से ओत-प्रोत हो उठती हैं। कवि को सम्पूर्ण वातावरण में सिवाय प्रिया की किलकारियों के कोई अन्य स्वर सुनाई ही न पड़ता था। उसे मलय-समीर भी प्रिया का स्वर सुनने के कारण हर्षातिरेक से झूमता दिखाई देता है।

विशेष—१. वर्ण-विन्यास इतना मधुर एवं कोमल है कि कवि की प्रिया का सुकुमार शैशव साकर हो उठा है।

२. "साथ ले सहचर सरस वसन्त" में वृत्त्यनुप्रास की छटा द्रष्टव्य है।

३. 'वसन्त' शब्द का प्रयोग 'यौवन' के प्रतीक रूप में किया गया है।

स्निग्ध संकेतों.....जीवन।

(मैं) प्रिया के स्निग्ध (स्नेह भरे) एवं सुकुमार संकेतों की ओर आकृष्ट हो जाता था (कारण उनमें प्रेम छलकता था)। प्रिया के संकेत चुपचाप चलते थक जाते थे तब वे छलक पड़ते थे और उसी सरसता (प्रेम-रस) में मेरा जीवन तैरने लगता था।

अपनी निरीह नयन-पटी से प्रिया कवि से कुछ कहती थी। कवि की सम्पूर्ण चेतना प्रिया की ओर आकृष्ट हो जाती थी, सत्-असत् का ज्ञान तक खो बैठती थी। उसके नेत्रों में हृदय का निश्छल अनुराग व्यक्त होने लगता था। उसकी वाणी प्रेमातिरेक से अवरुद्ध हो जाती थी, किन्तु उसके हृदय के समस्त प्रेमोद्गार नेत्रो के माध्यम से कवि तक पहुँच जाते थे। फलतः कवि उसके प्रेम-रस में तैरने-सा लगता था। उसके व्यक्तित्व के रोम-रोम में उसका (प्रिया का) प्रेम-रस मानो डुबकियाँ लगाने लगता था।

विशेष—१. प्रेम की भाषा मौन होती है। उसका प्रकटीकरण जितनी स्वाभाविकता से नेत्र कर सकते हैं उतनी स्वाभाविकता से स्वयं वाणी भी नहीं कर सकती। निम्न दोहों में भी यही भाव निहित है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क) प्रेम छिपाया नहीं छिपे, जा घट परगट होय।
जो पै मुख बोलै नहीं, नैन देत हैं रोय॥
—कबीर

(ख) कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे मौन में करत हैं नैननु ही सौं बात॥
—बिहारी

२. संगीतात्मकता की दृष्टि से प्रस्तुत पद अत्यन्त समृद्ध है। माधुर्य गुण, उपनागरिका वृत्ति तथा वैदर्भी रीति का समन्वय 'प्रसाद' के काव्यशास्त्रीय ज्ञान का परिचायक है—

छिड़कता अपना गीलापन,
उसी रस में तिरता जीवन।

३. 'उसी रस में तिरता जीवन' पंक्ति अत्यन्त सार्थक एवं भावाभिव्यंजक है। मधुमयता मानो इस पंक्ति में साकार हो उठी है।

तुम्हारी आँखों.....बचपन !

किन्तु क्या आज भी (प्रियतमा की) वह किशोरावस्था विद्यमान है? आज भी क्या वह उसी प्रकार भाव-विभोर होकर 'किशोर सुलभ) क्रीड़ाओं में निमग्न है? क्या उसका वह सरल-सहज अपनत्व अक्षुण्ण है? क्या उसकी आंखों का वह शिशु-सारल्य ज्यों-का-त्यों बना है? और क्या इन सभी में समाहित वैभव आज भी मेरा ही निजी धन है?

कवि प्रेमी के वे समस्त मधुर दिन आज अतीत के गर्भ में विलीन हो गये हैं। आज न उसकी प्रिया है, न वे रसभरे दिन; न प्रियतमा का भोलाभाला निश्छल बचपन है, न उसका सहज-सरल हास-परिहास। फिर भी, उसका प्रेम-विह्वल हृदय इस कठोर सत्य को स्वीकार नहीं करता। इस प्रत्यक्ष सत्य पर भी जैसे वह विश्वास नहीं करना चाहता। उसकी इसी विवशता ने आज उसके सम्पूर्ण जीवन अतीत, वर्तमान और इसी नाते भविष्य—सभी पर मानो एक प्रश्नवाचक चिह्न लगा दिया है। प्रस्तुत पंक्तियों की प्रश्नात्मकता ने उक्तियों में प्रभावोत्पादकता तो भरी ही है, कारुण्य का भी समावेश कर दिया है।

विशेष—१. सम्पूर्ण पद में संगीतात्मकता बिछी पड़ी है। कोमलता, सुकुमारता तथा मधुरता ने एक ओर वर्ण-विन्यास को सुसज्जित किया है

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो दूसरी ओर कवि की कलात्मक अभिरुचि (Artistic Taste) को व्यक्त किया है।

२. प्रेमी के लिए अतीत के मधुमय दिनों का विशेष महत्व होता है। यह स्मृति उसके जीवन का स्थायी अंग बन जाती है। 'प्रसाद' काव्य में प्रेम-तत्त्व के प्राधान्य के कारण अतीत की मधुर स्मृतियाँ अनेक स्थलों पर व्यक्त हुई हैं। उनका 'आँसू' काव्य तो वस्तुतः स्मृति-काव्य ही है। 'आँसू' की निम्नलिखित पंक्तियां इस दृष्टि से अवेक्षणीय हैं—

बस गई एक बस्ती है
स्मृतियों की इसी हृद में।
नक्षत्र-लोक फैला है
जैसे इस नील निलय में।
यह सब स्फुलिङ्ग हैं मेरी,
इस ज्वालामयी जलन के।
कुछ शेष चिह्न हैं, केवल
मेरे उस महामिलन के।

+ + + +

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति-सी छाई
दुर्दिन में आंसू बनकर
वह आज बरसने आई।

१२. अब जागो जीवन के प्रभात !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत का सम्बन्ध भारतीय इतिहास के उस काल से है जब भारत पराधीनता की जंजीरों में आबद्ध था। महात्मा गाँधी जैसे लोक-कल्याणकारी नेता अहिंसावादी भावना का प्रसार-प्रचार कर रहे थे। भारतीय नवयुवक निराश एवं दुःखी थे, उन्हें स्वतन्त्रता प्राप्ति का कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। वे आत्म-विश्वास प्रायः खो बैठे थे। ऐसी स्थिति में भारतीय नवयुवकों में उत्साह, स्फूर्ति एवं निराशा का संचार करने के लिए कवि ने प्रस्तुत प्रगीत की रचना की। प्राकृतिक उपादनों का आश्रय लेकर कवि ने वस्तुतः भारतीय जनता को जागृति का अमर संदेश दिया है। गीत की शैली उद्बोधनात्मक है तथा उसमें व्यंजना-तत्त्व का प्राधान्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब जागो.....अरुण गात !

प्रभातोदय हो गया है, अतः (ऐ नवयुवको !) तुम जागृतावस्था में आओ। पृथ्वी पर ओस के रूप में मानो किसी के क्षोभ भरे आँसू बिखरे पड़े हैं जिन्हें अरुणवर्ण उषा (धैर्य बँधाने के लिए) मानो बटोर रही है।

कवि भारतीय युवकों की सुप्तचेतना को जागृत करते हुए कहता है कि प्रभातोदय हो गया है, अतः तुम सुप्तावस्था को त्याग कर जागृतावस्था में आओ, फिर से जीवन-चक्र को संचालित करने के लिए कटिबद्ध हो जाओ। जिस प्रकार रात्रि के पर्यवसान में सुखद प्रभात का उदय होता है, उसी प्रकार जीवन में निराशा और असफलता के अन्त में आशा और सफलता का उदय होता है। अतः इस तथ्य से परिचित होकर ऐ भारतीय युवको ! तुम अपने भीतर फिर से क्रियाशीलता एवं तत्परता लाओ। निराशा के कारण कर्मक्षेत्र से पलायन करना तुम्हारे लिए शोभाकर नहीं। प्रभात की आभा चारों ओर छिटक गयी है। पृथ्वी के आंचल में चारों ओर ओस-राशि बिखरी पड़ी है, जिसे किसी के क्षोभपूर्ण आँसू समझती हुई अरुण वर्णा उषा सान्त्वना बँधाने के लिए मानो बटोर रही है। वह उसे फिर से क्रियाशील बनाने का सन्देश दे रही है। वस्तुतः प्रकृति-जगत् में उषा जैसी प्रेरणादायिनी शक्ति की विद्यमानता मानव को पग-पग पर जीवन-क्षेत्र में कूदने को प्रेरित करती है। कवि 'प्रसाद' भी इस शक्ति द्वारा भारतीय युवकों के चित्त में आशा और स्फूर्ति का संचार करते दीखते हैं।

विशेष—१. प्रभातकालीन वेला में वसुधा के आंचल पर बिखरे ओस-कणों को किसी के 'क्षोभ भरे आँसू' कहना तथा अरुणवर्णा 'उषा' को उसे 'बटोरती हुई' दिखाना कवि की प्रकृति-पर्यवेक्षण-शक्ति की सूक्ष्मता का परिचायक है। 'उषा' का कवि ने अनेक स्थलों पर मानवीकरण किया है। यहाँ भी उसने उषा में चेतनता का आरोपण किया है।

२. 'अरुण' प्रेम अथवा प्रणय का प्रतीक है। ऐसी उषा, जिसके व्यक्तित्व के रोम-रोम में प्रणय व्याप्त है।

३. पद उद्बोधनात्मक शैली में लिखित है। कवि सुप्त चेतना में जागरण का स्वर भरना चाहता है—

अब जागो जीवन के प्रभात !

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब जागो ..... रही गात !

प्रभातोदय हो गया है, अतः (ऐ नवयुवको !) तुम जागो। अन्धकार के नेत्रों की पुतलियाँ (सूर्य की) किरणों के समूह में मुंद रही हैं। (चारों ओर) सुखदायक मलय-समीर बह रहा है। जरा तुम लज्जापूर्ण रात्रि को समाप्त तो करो। (पक्षियों के) कलरव को तो सुनो। सम्पूर्ण पूर्व-दिशा में यही (जागृति की) बात चल रही है।

प्रभातकाल में आकाशमण्डल में टिमटिमाते हुए तारे अपनी आभा खोने लगते हैं। वे मानो काली रात्रि रूपी राक्षसी के नेत्र हैं, जो सूर्योदय होते ही अपनी चमक-दमक खो बैठते हैं। सूर्य की देदीप्यमान रश्मियों के समक्ष वे चुंधियाने लगते हैं। उनका प्रकाश फीका पड़ जाता है। इसी प्रकार जीवन की आशा के समक्ष निराशा भी फीकी पड़ जाती है। जिस प्रकार प्रभातोदय होते ही समस्त अन्धकार-पुंज समाप्त हो जाता है, उसी प्रकार आशा और स्फूर्ति के आते ही निराशा और विफलता भी समाप्त हो जाती है। उषाकाल में बहने वाला मंद-मंद मलय-समीर भी अपनी सुगन्धि द्वारा आनन्द, प्रेरणा, उत्साह एवं स्फूर्ति प्रदान करता है।

कवि वस्तुतः नवयुवकों को संदेश देते हुए कहता है कि ऐ नवयुवको! तुम नीरवप्रशांत रजनी के लज्जापूर्ण जीवन को समाप्त कर दो। तुम्हें जो निराशा अथवा असफलता प्राप्त हुई है, उसे समाप्त करने के लिए तुम कोई ऐसा विलक्षण कार्य करो कि तुम्हारा यश फिर से प्रतिष्ठित हो सके। प्रभात-कालीन वातावरण में चारों ओर पक्षी-समुदाय चहक रहा है। उसके चहकने में वस्तुतः कर्मशीलता एवं स्फूर्ति का सन्देश निहित है। अतः उनकी चहक से तुम भी स्फुर्ति ग्रहण करते हुए जीवन के संघर्षों से जूझने के लिए कटिबद्ध हो जाओ। प्राची-दिशा की लालिमा एवं कान्ति भी जागरण का अमर सन्देश लिए है। अतः तुम सुप्तावस्था का परित्याग कर जागृतावस्था में आओ, देश और समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य को पहचानो। सक्रियता ही जीवन है, निष्क्रियता मरण है।

विशेष—१. तारों को रात्रि रूपी राक्षसी के नेत्र मानना कवि की विलक्षण सूझ है।

२. 'मलय वात' उद्बोधन का प्रतीक है तथा 'अरुणांचल' उषाकालीन वातावरण का वाचक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. कोमल कुसुमों की मधुर रात !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने विशुद्ध प्रकृति-चित्रण किया है। प्रकृति-चित्रण छायावादी काव्य की अनूठी विशेषता है। प्रायः सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति के एक-से-एक रम्य चित्र प्रस्तुत किये हैं। इन कवियों ने प्रकृति-जगत् के विभिन्न उपादानों को आधार बनाकर अनेक चित्र-विचित्र कल्पनाएं की हैं। 'प्रसाद' के प्रस्तुत प्रगीत में भी मानव-जगत् की भाँति प्रकृति-जगत् के क्रिया-व्यापारों का अत्यन्त सजीव चित्रांकन किया गया है। कमलों का विकास, चन्द्र का हास तथा मलय-समीर का प्रवाह कवि को भावाभिव्यक्ति करने को बाध्य कर देता है।

कोमल कुसुमों.....मलय वात।

कोमल फूलों से भरी हुई यह रात कितनी सुन्दर है। (आकाश में खिला हुआ) चन्द्रमा मानो सौ पँखुड़ियों वाले कमल-सा विशाल है, जिसमें (चाँदनी के रूप में) निर्मल हास्य हो रहा हो। (मंद-मंद बहने वाला) मलय-पवन ही मानो उसका उच्छ्वास है।

कवि-जगत् में अत्यन्त प्राचीनकाल से हास्य की तुलना चन्द्र-ज्योत्स्ना से की जाती रही है। अतः 'प्रसाद' ने 'जिसमें निर्मल हो रहा हास' का प्रयोग किया है। चन्द्रमा के लिए 'शतदल-कमल' की कल्पना सार्थक है। रात्रि की अन्धकारपूर्ण वेला में आकाशमण्डल में अन्य तारों के समक्ष चन्द्रमा का प्रकाश ही उभर कर सामने आता है। वह आकार और प्रकार दोनों में तारों की अपेक्षा अधिक सुन्दर एवं विशाल दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार पुष्प-लोक में भी अन्य पुष्पों की अपेक्षा शतदल-कमल कहीं अधिक सुन्दर एवं विशाल लक्षित होता है।

मलयाचल की ओर से आने वाला पवन मन्द, शीतल एवं सुगन्धित होता है। अतः कवि ने उसे चन्द्रमा के हृदय का विमल उच्छ्वास कहा है। इस प्रकार रात्रि का यह माधुर्य एवं सौन्दर्य अपने आप में अत्यन्त विलक्षण है। वाणी द्वारा उसका कथन सम्भव नहीं है।

विशेष—'कोमल-कुसुमों', 'शशि-शतदल' में क्रमशः छेक तथा वृत्ति अनुप्रास का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोमल.....रही बात ।

कोमल फूलों से भरी हुई यह रात कितनी सुन्दर है । लज्जाभरी असंख्य अर्द्ध-विकसित कलियां अपने सौरभ रूपी घूंघट में अपना दन्त (मुख) छिपाकर मंद-मंद बातें कर रही हैं (मुस्करा रही हैं) ।

जिस प्रकार नवविवाहिता सुन्दरी लज्जाधिक्य के कारण अपने मुख-सौन्दर्य को घूँघट की ओट में छिपाये रहती है, उन्मुक्त रूप से बातचीत नहीं करती, परन्तु हृदय की अथाह प्रेम-रस उसे प्रिय से बातें करने को विवश करता है, उसी प्रकार वन-उपवन की विभिन्न लताओं पर विद्यमान असंख्य अर्द्ध-विकसित कलिकाएँ मधुर सौरभ के घूँघट में अपना मुँह छिपाकर मंद-मंद मुस्करा रही हैं ।

विशेष—१. 'कोमल-कुसुमों', 'कँप-कँप', 'चुप चुप' अंशों में छेकानुप्रास तथा 'परिमल-घूँघट' में रूपक अलंकार है ।

२. अर्द्ध विकसित कलियों के माध्यम से कवि ने परोक्षतः मुग्धा नायिका का भी चित्रण कर दिया है ।

कोमल कुसुमों.....किरन पात ।

कोमल फूलों से भरी हुई यह रात कितनी सुन्दर है । तारों का समुदाय अलसाई हुई कुमुदिनी की माला है, जो शिथिल हंसी का सजल (आकर्षक) जाल लिए है । (इन तारों की) किरणों के गिरने से (धरती की) कलियां विकसित हो जाती हैं ।

जिस प्रकार कुमुदिनी का हास्य अत्यन्त मधुर एवं आकर्षक होता है, उसी प्रकार नीरव प्रशान्तरजनी के समय आकाशमण्डल में टिमटिमाते तारों की चमक भी अत्यंत मधुर एवं आकर्षक होती है, किन्तु चन्द्रमा की असीम ज्योत्स्ना के समक्ष इन तारों की ज्योति मंद पड़ जाती है । अतएव माला के लिए 'अलस' तथा हँसी के लिए 'शिथिल' विशेषण का प्रयोग किया है । और हँसी से सभी आकृष्ट होते हैं, उसमें दूसरे का मन हरने की शक्ति होती है, अतएव 'सजल जाल' विशेषण का प्रयोग किया गया है ।

विशेष—१. 'कोमल कुसुमों', 'खिल खुलते', 'सजल जाल' आदि अंशों में छेकानुप्रास की आभा बिखरी पड़ी है ।

२. अमूर्त भावों का मूर्तीकरण छायावादी काव्य की अनुपम विशेषता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हँसी' के साथ 'शिथिल' विशेषण के प्रयोग के मूल में यही विशेषता कार्य कर रही है।

३. जिस प्रकार आकाश में तारे अपनी आभा का प्रसार करते हैं, उसी प्रकार पृथ्वी पर कलियाँ अपनी सुगन्धि का प्रसार करती हैं।

कोमल कुसुमों .....सुख-पुलक गात।

इस मधुर-कोमल रात्रि में (अनेक) लघु-लघु कलियाँ झड़कर (उसी प्रकार) धराशायी हो रही हैं, जिस प्रकार शिशिर-ऋतु में सौरभ से परिपूर्ण ओस की बूंदें। समग्र संसार आनन्द से पुलकित हो रहा है। (सृष्टि के कण-कण में एक विशेष प्रकार का हर्षोल्लास छाया है। कहीं भी विषाद एवं जड़ता नहीं है।)

विशेष—१. प्रस्तुत पद भाव-वैभव एवं कला-वैभव दोनों दृष्टियों से अत्यन्त समृद्ध बन पड़ा है। कोमलकान्त पदावली तथा संगीतात्मकता प्रचुर मात्रा में वर्तमान है।

२. 'कोमल कुसुमों', 'लघु-लघु' में छेकानुप्रास का चमत्कार अवेक्षणीय है।

३. प्रकारान्तर से कवि ने अधीरा नायिका का चित्र भी खींच दिया है।

१४: कितने दिन जीवन-जलनिधि में

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने निराशा के स्थान पर आशा तथा विषाद के स्थान पर हर्ष का आंचल ग्रहण कर लिया है। अब वह भावावेश तथा भावातिरेक की दशा को पार कर गम्भीर साधना-पथ पर अग्रसर है। अतीत उसे अब रुलाता नहीं, वरन प्रेरणा और उत्साह प्रदान करता है। उसने अपने हृदय की स्थिति को अत्यन्त मनोवैज्ञानिक शैली में जीवन और समुद्र के रूपक द्वारा पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

कितने दिन..... .....निरवधि में।

(अतीत की मधुर स्मृतियां साधना-पथ के पथिक कवि के मार्ग में बाधा उपस्थित करती हैं। कवि उनसे मुक्ति चाहता है, किन्तु वे यदा-कदा अपनी उपस्थिति द्वारा उसकी चित्त-वृत्तियों को विशृंखल कर देती हैं। फलतः कवि उनसे खीझ कर तड़प उठता है—) न जाने कब तक मेरे जीवन रूपी सागर में (प्रेम के) झंझावात से प्रेरित होकर भावना रूपी लहरें (हृदय रूपी) तट को चूमने के लिए उठ-गिरकर (एक विशेष प्रकार की) छवि को उत्पन्न करती रहेंगी। मेरे इस अवधि रहित साधना-पथ पर (बारम्बार कानों में

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गूंजने वाले) मधुर संगीत की भाँति ये भावनाएं (अतीत की) चिरसंचित गाथाएं उभारती हुई कबतक तरल तान गाकर मुझे पागल (विक्षिप्त-उदभ्रान्त) बनाती रहेंगी ?

जिस प्रकार समुद्र के गर्भ में झंझावात उठने पर नाना प्रकार की उत्ताल तरंगें उछल-उछलकर तट का स्पर्श करने के लिए आकुल हो उठती हैं तथा उसके मधुर आलिङ्गन-पाश में आबद्ध होने पर एक विशेष प्रकार के सौन्दर्य की सृष्टि करती हैं, उसी प्रकार कवि के भावनाप्रवण हृदय में प्रेम रूपी झंझावात के उठने पर अनेक आशा-आकांक्षाओं का उदय होता है, जो कभी तीव्र गति से और कभी मंद गति से हृदय-सागर को झकझोरती रहती हैं। फलतः कवि के मानस-पटल पर रूप-सौन्दर्य-सम्पन्न प्रिया की छवि का चित्र अंकित हो जाता है, जिससे उसकी साधना कुछ अंशों में खण्डित होने लगती है।

किन्तु कवि को चिन्ता किस बात की है। उसकी साधना तो ऐसी है, जिसका न आदि है और न अन्त। उसकी साधना में तो एकाग्रता, संयम, प्रवृत्ति, आत्मविश्वास तथा चारित्रिक दृढ़ता की गरिमा वर्तमान है, फिर भी उसमें आशा-आकांक्षाओं का उदय क्यों होता है ? कारण स्पष्ट है। जिस प्रकार संगीत की मधुर स्वर-लहरी बार-बार कानों में गूँजती रहती है, उसी प्रकार ये आशा-आकांक्षाएँ बार-बार कवि के चित्त में उदित होकर उसके अतीत की मधुर गाथाओं को फिर से ताजा कर देती हैं। इन आशा-आकांक्षाओं (इच्छाओं) की अतृप्ति एक बार फिर उसे विक्षिप्त-सा बना देती है, जिससे उसकी साधना खण्डित-सी हो जाती है।

विशेष—१. 'निरवधि' शब्द विशेष साभिप्राय है। साधनापथ की कोई अवधि नहीं होती। अत. यहाँ परिकर अलंकार है। इसके अतिरिक्त 'तरल-तान' में छेकानुप्रास तथा 'जीवन-जलनिधि' में छेकानुप्रास तथा रूपक का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

२. 'झंझावात' की व्यंजना कराने के लिए 'अनिल' शब्द के साथ 'विकल' विशेषण का प्रयोग किया गया है।

दिनकर हिमकर.....अवधि में।

(साधना-पथ के पथिक कवि का कथन है कि न जाने कब तक) मेरे जीवन रूपी सागर के दर्पण के समान निर्मल वक्षस्थल पर सूर्य, चन्द्र तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तारक-समुदाय आशा की मधुर अवधि में अपने चंचल चित्र बनाते रहेंगे ?

जिस प्रकार सागर के निर्मल जल में रवि, शशि तथा तारक-समुदाय की छायाएं प्रतिबिम्बित हो उठती हैं, उसी प्रकार कवि के जीवन रूपी सागर के हृदय रूपी दर्पण में अतीत के मधुमय दिनों की स्मृतियाँ प्रतिबिम्बित हो उठती हैं। वे स्मृतियाँ नाना प्रकार के निर्मल चित्र बनाती हैं, जिनसे एक बार फिर उसके चित्त में चांचल्य छा जाता है। उसके भग्न-हृदय (Broken heart) में फिर से आशा और उल्लास का संचार होने लगता है। पता नहीं आशा-आकांक्षाओं का यह क्रम कब तक उसके जीवन में चलता रहेगा।

विशेष—कवि ने जीवन और सागर का रूपक बाँधकर अपने हृदय की अवस्था का अत्यन्त मोनवैज्ञानिक ढंग से चित्रण किया है। कविता में माधुर्य-गुण आद्यन्त व्याप्त है।

१५. वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे ?

परिचय—'प्रसाद' की दृष्टि में अतीत के मधुमय दिनों का असाधारण महत्त्व है। यद्यपि ऐसे दिनों की अवधि बहुत छोटी थी, तथापि कवि के जीवन में उनका विशेष स्थान है। प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने अतीत के उन्हीं मधुमय दिनों का स्मरण करते हुए अत्यन्त सफलतापूर्वक भावाभिव्यक्ति की है। उसने चतुर्दिक् प्राकृतिक वातावरण का अपने मन पर आरोपण किया है तथा अपने मन को समस्त प्रकृति के रंग में रंजित देखा है। प्रकृति की सुन्दरता कवि के मानस का प्रतिबिम्ब मात्र है।

व कुछ दिन.....मधुर अधर थे।

जीवन के वे कुछ दिन कितने सुहावने थे, जब सावन के बरसते हुए घनीभूत बादल काले-काले नेत्रों की छाया से मालूम होते थे। जब (सप्तरंगी) इन्द्रधनुष से अलंकृत, अभिनव बादल के समान क्षितिज तक व्याप्त आकाश से नदी के हरे-भरे दोनों कूल रूपी मधुर होठ चुम्बनरत होकर आ मिले।

अतीत के प्रेम-भरे दिन अति सुन्दर थे। तब सावन के सघन बरसते हुए मेघों में आँखों की तरलता ही प्रतिबिम्बित होती थी। सावन के श्यामल मेघ जल से भरे होने के कारण ठीक उसी प्रकार आर्द्र रहते थे, जिस प्रकार प्रेम के आवेश के कारण भावुक प्रेमी की श्यामल आँखें सजल हो उठती थीं। (भावुक प्रेमी की आँखों की आर्द्रता से मेघों की सघनता और तरलता का सुन्दर

CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सादृश्य दिखाया गया है।) सरिता के वनस्पति-संकुल हरे तट इन्द्रधनुष से मण्डित एवं मेघों से परिपूर्ण क्षितिजव्यापी आकाश से उसी प्रकार मिल रहे थे, मानो भावुक प्रेमी-प्रेमिका के मधुर अधर प्रेमावेश के कारण परस्पर मिल रहे हों।

विशेष—१. इन पंक्तियों में बाह्य-जगत् (प्राकृतिक-जगत्) में अन्तर्जगत् की प्रतिछवि दिखाई गयी है।

२. अप्रस्तुत और प्रस्तुत में उचित एवं सुन्दर सामंजस्य स्थापित किया गया है। सजल आँखें और जलभरे मेघ तथा मधुर अधर और सरिता के हरित कूल। अप्रस्तुत पक्ष माधुर्य गुणपूर्ण है, अतएव प्रस्तुत सामग्री भी चित्रमयी, रंगीन और भाव-संयुक्त है। सघन-सावन-घन, सुरधनुरंजित नव जलधर, क्षितिजव्यापी अम्बर, सरिता के मिलते हुए हरित कूल।

३. पंक्तियों की मूलध्वनि (Essential Meaning) यह है कि भावुक प्रेमी (कवि) का अतीत अत्यन्त मधुर था और उसके मन का सम्पूर्ण मधु मन से बाहर सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त किए था।

प्राण पपीहा.....मधुर थे।

उस समय हरीतिमा प्राण-पपीहा के स्वर जैसी बरसती थी। बरसते हुए आनन्द-जल-कण मतवाली (रसाभिसिक्त) मालती की कलियों जैसे थे। जब बिजली नीले मेघ-पट पर विलक्षण चित्र बनाती थी, तो उसमें मेरे अतीत जीवन के वे मधुर रूप (जो अब भी स्मृति-पटल पर अंकित हैं) एक साथ स्पष्ट हो जाते थे।

विगत जीवन के वे पुण्य-दिवस अति सुन्दर थे। चारों ओर वातावरण में हरियाली व्याप्त थी। मालती के पुष्पोंमें भरे हुए मधुरस के कण बिखर रहे थे। उनके सौरभ का उपभोग करने के लिए मदोन्मत्त भ्रमर मंडरा रहे थे। पपीहा 'पी कहां', 'पी कहाँ' की मधुर रट उसी प्रकार लगा रहा था, जिस प्रकार 'यौवन-काल' में प्रेम-पिपासा की तृप्ति के लिए भावुक प्रेमी प्रियतम के नाम की रट लगाता है।

आकाशमण्डल में घने कृष्णवर्ण मेघों के मध्य विद्युच्छटा बार-बार दिखलाई पड़ती थी, जिससे मेघ-पट पर एक विलक्षण दृश्य उपस्थित हो जाता था। इस दृश्य में भावुक प्रेमी अपनी प्रेयसी का रूप-सौन्दर्य निहारा करता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्युच्छटा से शोभित इस दृश्य में उसकी प्रेयसी का जो रूप-वैभव निखर उठता था, वही उसके जीवन की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्मृति थी। प्रेमाधिक्य के कारण प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक स्थान तथा प्रत्येक वस्तु में उसे अपनी प्रेयसी का ही रूप-वैभव दिखाई पड़ता था। सृष्टि के समस्त सौन्दर्य को वह अपनी प्रेयसी का ही प्रतिरूप समझता था।

विशेष—१. पंक्तियां मधुर रोमांटिक भाव से परिपूर्ण हैं।

२. जिस प्रेमी का वर्णन किया गया है, वह भावुक और संवेदनशील है। अतीत की मधुर स्मृतियां उसे विकल करती हैं।

३. 'मालती-मुकुल' तथा 'चित्रचपला' में छेकानुप्रास है।

१३. मेरी आँखों की पुतली में

परिचय – प्रस्तुत प्रगीत में कवि अपने प्रियतम को अपनी आँखों की पुतली में समा जाने का आग्रह करता है। अब वह किसी प्रकार के शारीरिक सम्मिलन की अभिलाषा नहीं करता। प्रिय से उसका प्रेमालाप होता है अथवा नहीं, उसे आलिंगन-सुख प्राप्त होता है अथवा नहीं, आदि बातें उसकी दृष्टि में अब कोई महत्त्व नहीं रखतीं। वह तो केवल अपने और प्रियतम के मध्य एकाकार स्थापित करना चाहता है। वह प्रेम के ऐसे आदर्श रूप को प्रस्तुत करना चाहता है, जो अद्वितीय हो, अनुपम हो।

मेरी आँखों ....सुना जा रे।

(कवि अपने प्रियतम से आग्रह करते हुए कहता है कि) हे प्रिय, तुम मेरी आंखों की पुतलियों में प्राण-रूप होकर समा जाओ, जिससे (सृष्टि के) कण-कण में नवस्फूर्ति छा जाय, मन में मलय-समीर की भांति (सुगन्धित) चंदन (के लेप) का संचार हो जाय तथा (हृदय में) फिर से करुणा (करुणा, दया जैसे कोमल एवं सात्विक भावों) का उदय हो। हे प्रिय! तुम कुछ ऐसा (विलक्षण) जीवन-संगीत सुनाओ।

कवि की यह हार्दिक इच्छा है कि उसका प्रिय उसके नेत्रों में इस प्रकार छा जाय कि उसकी समस्त जड़ता, निराशा एवं विषाद समाप्त हो जायं और उसमें नव-जीवन-शक्ति का संचार हो जाय। साथ ही प्रिय उसे कुछ ऐसा जीवन-सन्देश दे, जिससे सृष्टि के कण-कण में चेतना का संचार हो तथा उसके हृदय के प्रथम वियोग-जन्य प्रतिहिंसा, ईर्ष्या, उपालम्भ जैसे समस्त कठोर भाव तिरोहित हो जायं।

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—१. संगीतात्मकता की दृष्टि से प्रस्तुत पंक्तियां 'बीती विभावरी जाग री !' प्रगीत के समकक्ष रखी जा सकती हैं—

जिससे कन-कन में स्पन्दन हो,
मन में मलयानिल चन्दन हो,
करुणा नव अभिनन्दन हो—
वह जीवन गीत सुना जा रे !

इन पंक्तियों में नाद, लय, गति, यति आदि संगीत के विविध उपादान वर्तमान हैं।

२. प्रेम की चरम सीमा (Climax) में प्रेमी की प्रियतम से 'एकरूप' हो जाने की एक विशेष इच्छा होती है। कबीर ने भी निम्नलिखित दोहे में इसी 'एकरूपता' के भाव को अभिव्यक्ति दी है—

नैना अन्तर आव तू, मूँदि राखि तोहि लेहुँ।
ना मैं देखूं और को, ना तोहि देखन देहुँ॥

३. यहाँ कवि की वासना और असन्तोष क्रमशः आत्मसमर्पण और संतोष में बदल गये हैं।

४. कन-कन' में छेकानुप्रास की छटा है।

खिंच जाय .... जा रे !

हे प्रिय ! तुम (मधुर) मुस्कान का एक ऐसा चित्र बना जाओ कि अधरों पर मधुसिक्त (प्रेमभरी) रेखा अँकित हो जाय तथा (समग्र) विश्व उसे (आश्चर्य भरी) दृष्टि से देखता ही रह जाय।

लौकिक-जीवन की प्रत्येक वस्तु असार एवं नश्वर है। अतः उनके प्रति आसक्ति रखना मानव की भूल है। कवि 'प्रसाद' इस रहस्य को जान चुके हैं, अतः उन्होंने प्रस्तुत पद में लौकिक के स्थान पर अलौकिक को तथा स्थूल के स्थान पर सूक्ष्म को अधिक महत्त्व एवं गौरव दिया है। अलौकिक एवं सूक्ष्म में अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व होता है। अतः वे ऐसे भाव-लोक की कामना करते हैं, जहाँ मृत्यु, विरह, चिन्ता और विषाद जैसी कोई वस्तु न हो। उनका कथन है कि उनके अन्तर्जगत (हृदय) में प्रियतम का मधुर मुस्कान भरा चित्र अंकित हो; उस चित्र में अंकित रेखाएँ प्रिय के अधरामृत द्वारा खींची गयी हों। वह चित्र इतना स्पष्ट तथा उज्ज्वल हो कि जड़चेतनात्मक समस्त विश्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे आश्चर्य-चकित नेत्रों से देखता रह जाय तथा उसकी शाश्वतता की दाद देने लगे।

विशेष—कोमलकांत पदावली, नाद-लय तथा प्रवाह की दृष्टि से प्रस्तुत पद अत्यन्त समृद्ध है।

१७. जग की सजल कालिमा रजनी में

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में साधना-पथ के पथिक कवि ने अपने प्रेम का उदात्तीकरण (Sublimation of Love) किया है। उसे अब न तो प्रियतम की निर्ममता खलती है और न जगत की निष्ठुरता। वह प्रियतम के दर्शन पा लेने में ही अपना अहोभाग्य समझता है। 'जीवनधन'! इस जले जगत को वृन्दावन बन जाने दो' पंक्ति द्वारा उसने स्पष्ट किया है कि उसका संसार जलकर भस्मीभूत हो चुका है, प्रिय ही अपने कृपाकटाक्ष द्वारा उसका पुनर्निर्माण कर सकता है।

जग की सजल.....बन जाने दो।

हे प्रिय! तुम संसार की ओसपूर्ण एवं कालिमाग्रस्त रात्रि में मुझे अपना मुख-चन्द्र दिखा जाओ। अन्धकारपूर्ण झोली के समान (मेरे) हृदय में तुम प्रकाश की भिक्षा डाल दो। (मेरे) प्राणों की पुकार अत्यन्त व्याकुल है, इस विकल लहरी का तुम स्वर-परिवर्तन कर दो तथा प्रेम-वीणा की (मधुर) स्वर-लहरी में जीवनदायक गीत सुना जाओ।

हे (मेरे) जीवनधन! तुम (मेरे) नष्ट-भ्रष्ट जगत् को (फिर से) वृन्दावन का रूप दे दो तथा उसमें प्रेमालिङ्गन की लतिकाओं के झुरमुट को छा जाने दो।

कवि की जीवन-रात्रि में निराशा और विषाद की कालिमा वर्तमान है, उसका प्रिय ही अपने दर्शन की उज्ज्वल ज्योति द्वारा इस कालिमा का नाश कर सकता है—जिस प्रकार रात्रि के निविड अन्धकार को चन्द्र अपनी ज्योति द्वारा नष्ट कर देता है। उसके हृदय की स्थिति अन्धकारपूर्ण झोली के समान है, जिसमें प्रिय आशा और उत्साह का प्रकाश भर सकता है। उसका अन्तर्जगत विकल होकर प्रिय को पुकार रहा है। जिस प्रकार गायक भीड़ के द्वारा सहज-सरल रीति से स्वर-परिवर्तन कर लेता है, उसी प्रकार प्रिय भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके व्यथित हृदय की पुकार को हर्षोद्गार में परिणत कर सकता है। अतः कवि-प्रेमी चाहता है कि वह (प्रिय) प्रेम की वीणा पर ऐसीस्वर लहरी उपस्थित कर दे कि उसे सुनकर कवि के हृदय के समस्त दुःख एवं विषाद समाप्त हो जाएं; उसके जीवन में फिर से आशा और उत्साह छा जाय।

प्रेमी का प्रेम-जगत जलकर भस्मीभूत हो चुका है। प्रिय उसे फिर से हरा-भरा कर सकता है—उसमें वृन्दावन का-सा माधुर्य एवं सारस्य भर सकता है। अतः कवि अपने प्रिय से—'जीवन-धन' से—प्रार्थना करता है कि वह उसे अपने आलिंगन-पाश में आबद्ध करके उसी प्रकार एक नवीन संसार का निर्माण कर दे, जिस प्रकार वृन्दावन की लतिकाएं परस्पर आलिंगन-बद्ध होने पर एक विचित्र प्रेम-जाल का निर्माण कर देती हैं।

विशेष—१. साधना-पथ का पथिक कवि कभी-कभी फिर से मिलनोत्कण्ठा का इच्छुक हो जाता है। उसके अन्तर की प्रेम-भावना लुप्त नहीं होती।

२. इन पंक्तियों में रहस्यात्मकता का तत्त्व वर्तमान है।

३. कवि ने रूपक अलंकार का अत्यन्त सुन्दर प्रयोग किया है—मुख रूपी चन्द्र, हृदय रूपी अन्धकारपूर्ण झोली, ज्योति रूपी भीख, प्रेम रूपी वेणु, जीवन रूपी गीत आदि-आदि। 'जीवन-धन ! इस जले जगत को वृन्दावन बन जाने दो' पंक्ति में एक ओर अनुप्रास की छटा वर्तमान है और दूसरी ओर 'जीवन-धन' तथा 'जले जगत्' शब्दों का प्रयोग अत्यन्त सार्थक एवं साभिप्राय है। 'जीवन' शब्द का एक अर्थ 'जल' भी होता है और अग्नि-शमन की शक्ति जल से अधिक और किसी वस्तु में नहीं है। प्रिय 'जीवन-धन है—प्रेमी के जीवन का एक मात्र आधार ही नहीं, उसके कष्टनिवारण का अन्यतम शक्ति स्रोत भी है। उधर 'जले जगत्' में केवल इस विश्व-प्रपंच के छल-छद्म, निराशा-विषाद एवं दुःख-संकट ही विकट नहीं हैं, ईर्ष्या, द्वेष, असहिष्णुता, अनुदारता, वैमनस्य और विरोध भी अन्तर्निहित हैं; इस पद में बाह्य अग्नि से झुलसता विश्व ही नहीं, अन्तर्दाह से सुलगता विश्व भी निरूपित है।

१८. वसुधा के अञ्चल पर

परिचय—'प्रसाद' केवल कवि ही नहीं, वरन उच्चकोटि के दार्शनिक भी हैं। उनकी दार्शनिकता नाटकों आदि में तो व्यक्त हुई ही है, कविता-क्षेत्र में भी वह अनेक स्थलों पर अत्यन्त मुखर हो उठी है। प्रस्तुत प्रगीत में उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव-जीवन पर एक दार्शनिक की दृष्टि से विचार व्यक्त किये हैं। जिस प्रकार प्रभातकालीन वातावरण में कमल के पत्तों पर वर्तमान ओस की बूंदें सूर्य की उष्ण किरणों के पड़ते ही अपना अस्तित्व खो बैठती हैं, उसी प्रकार मानव-जीवन कराल-काल का थपेड़ा लगते ही अपना अस्तित्व खो बैठता है। इस प्रकार कवि ने प्रकृति-जगत् का आश्रय लेकर मानव-जीवन-विषयक अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया है।

वसुधा के.....रहे निखर।

शिशु की चंचल क्रीड़ा के समान कमल की पंखुड़ियों पर जिस प्रकार ओस-कण छा जाते हैं, उसी प्रकार वसुधा के अंचल (प्रांगण) पर (मानवों के रूप में) ये कैसे कण बिखर गये हैं ? (मानव-जीवन भी कैसा है, जो आशा-निराशा तथा सुख-दुख में ही निखार पाता है।)

रात्रि के तमसाच्छन्न वातावरण में कमल-दलों पर असंख्य ओस-कण गिर पड़ते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो वे कमल के कोमल पत्तों पर चंचल क्रीड़ा कर रहे हों। मानव-जीवन की स्थिति इन ओस-कणों की-सी है। वसुधा के प्रांगण में मानवों के रूप में उस परम चैतन्य-शक्ति के ही अनेक चैतन्य कण बिखरे पड़े हैं। इन चैतन्य-कणों का समवेत रूप ही वह अनन्त ब्रह्म है। मानव कभी तो हर्षोल्लास से प्रेरित होकर कार्यतत्पर हो जाता है और कभी विकलता एवं निराशा से अभिभूत होकर जड़वत् हो जाता है। कभी उसके व्यक्तित्व में ज़िन्दादिली व्याप्त होती है, तो कभी मात्र जड़ता। इस मानव-जीवन की समता तो ओस-कणों से की जा सकती है—ओस-कण उसके नाश और जन्म की कहानी अपने भीतर व्याप्त किये हैं। ओसकण क्षणभर के लिए अपनी आभा का प्रदर्शन करके लुप्त हो जाते हैं, मानव-जीवन भी कुछ क्षणों के लिए अपना रूप-सौन्दर्य दिखाकर, अपनी उपलब्धियों पर इतराकर यमलोक का अतिथि बनता है।

विशेष—१. कवि ने मानव-जीवन की क्षणभंगुरता के रहस्य को अत्यन्त संगत ढंग से उद्घाटित किया है। वस्तुतः मानव-जीवन क्षणिक एवं निस्सार है। उस पर मिथ्या-गर्व करना मानव की बहुत बड़ी भ्रान्ति है। कबीर आदि अन्य कवियों ने भी उसकी तुलना पानी के बुलबुलों से कर इसी भाव को व्यक्त किया है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पानी केरा बुदबुदा, अस मानुस की जात।
देखत ही छिप जायगा, ज्यों तारा परभात ॥

२. मानव-जीवन में सुख और दुख, आशा और निराशा दोनों की समन्वित उपस्थिति होती है, यह भाव कवि ने अपने 'आँसू' काव्य की निम्नलिखित पंक्तियों में भी व्यक्त किया है—

मानव-जीवन वेदी पर—
परिणय है विरह मिलन का,
सुख-दुख दोनों नाचेंगे,
है खेल आंख का, मन का।

३. 'कन-कन' में अनुप्रास अलंकार है। वर्ण-विन्यास अत्यन्त मधुर एवं कोमल है।

मिलने.....सुन्दर।

जब दो जलबिन्दु पारस्परिक आकर्षण के कारण एक-दूसरे से मिलते है तब (कमल के) पत्तों की नस-नस में एक सुन्दर एवं लघु जलधारा बहने लगती है।

कमल के पत्तों पर वर्तमान ओस-कणों की क्रीड़ा में कवि जीवन का एक अन्य सत्य देखता है। उसका कहना है कि समीपवर्ती ओसकण पारस्परिक आकर्षण से आकृष्ट होकर एक-दूसरे से मिल जाते हैं। इस मिलन के कारण उन निर्जीव-तुल्य पत्तों में भी सिहरन हो उठती है, उनकी नसों में भी रक्त का सा संचार होने लगता है। उनमें एक विशेष प्रकार की शक्ति एवं गति का उदय हो जाता है। दूसरी ओर, नर-नारी भी पारस्परिक आकर्षण के कारण संयुक्त हो जाते हैं। उनके पारस्परिक संयोग से ही मानव-जीवन सरस होता है।

हिलता.....निष्ठुर!

(कमल के) चंचल पत्तों के हिलने पर ये सब ओस-कण मचलने लगते हैं (गिरने लगते हैं)। यही कण मिलकर एक अनन्त (असीम) सागर का निर्माण कर सकते हैं, किन्तु (विधाता की) निष्ठुर-लीला कभी समाप्त नहीं होती।

शीतल मन्द-समीर के प्रवाह द्वारा कमल के पत्ते हिलते हैं। फलतः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओस-कण मचल-मचलकर धराशायी हो जाते हैं। वे अपने अस्तित्व को खो बैठते हैं। यद्यपि यह भी सत्य है कि उनमें से प्रत्येक कण थोड़ी-बहुत शक्ति लिए है। उन सब कणों के समवेत रूप से एक बहुत बड़ा सागर तैयार हो सकता है। किन्तु क्रूर विधाता की निष्ठुर-लीला से कौन बच सकता है? जैसे ही ओस-कण बनता है, नष्ट हो जाता है। वह अभी पूर्णतः विकसित भी नहीं हो पाता कि अस्तित्व विहीन हो जाता है। ठीक यही स्थिति मानव-जीवन की है। शक्ति का भण्डार होते हुए भी अपने आप में मानो उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। उसके समस्त क्रिया-कलापों के मूल में विधाता की अनन्त शक्ति कार्य कर रही है। उस अनन्त शक्ति की आज्ञा के बिना वह एक क्षण भी नहीं टिक सकता। वह उसके निष्ठुर हाथों का खिलौना-मात्र है।

विशेष—१. 'प्रसाद' ने उस नियामक (अनन्त) की शक्ति का उल्लेख अपने नाटकीय पात्रों के माध्यम से भी यत्र-तत्र किया है। 'स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य' में नायक स्कन्द के मुख से उन्होंने कहलवाया है—

'चेतना कहती है तू राजा है, और उत्तर में जैसे कोई कहता है तू खिलौना है—उसी खिलवाड़ी बटपत्रशायी बालक के हाथों का खिलौना है।'

यहाँ 'बटपत्रशायी बालक' का संकेत उसी अनन्त-शक्ति की ओर है।

२. 'हिलता-डुलता', 'चंचल दल' तथा 'कन-कन' में छेकानुप्रास का सौन्दर्य बिखरा पड़ा है।

तब क्यों.....अंचल पर !

फिर इस रोषभरी लालिमा का क्या प्रयोजन है? (मानव-जीवन की क्षण-भंगुरता से परिचित हो जाने पर) तू वसुधा के (विस्तृत) प्रांगण पर अपने नेत्रों से मनोहारी तथा उज्वल आंसू ढुलकने दे।

प्रकृति-जगत् से शिक्षा ग्रहण करते हुए कवि कहता है कि जब मानव-जीवन क्षणिक एवं निस्सार है, तो व्यर्थ के सुख-दुःख, लेन-देन, हर्ष-विषाद की क्या सार्थकता है? प्रिय के प्रति किसी प्रकार का क्रोध अथवा उपालम्भ रखना व्यर्थ है। प्रिय के विरह में नेत्रों से उमड़-घुमड़ कर बहने वाले अश्रुओं से धरा के अंचल को आर्द्र करना ही श्रेयस्कर है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. अपलक जगती हो एक रात

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने रात्रि का भावात्मक वर्णन किया है। उसकी दृष्टि प्रसुप्तावस्था में भी एक विशेष सौन्दर्य एवं माधुर्य का दर्शन करती है। अतः रात्रि भी उसे भावपूर्ण दिखाई पड़ती है। रात्रि की अन्धकारपूर्ण वेला में चेतन प्राणी ही विश्राम नहीं चाहते वरन् प्रकृति का कण-कण विश्राम चाहता है। इस विश्राम में उसे अपूर्व आनन्द मिलता है। विश्रान्ति के बाद वह पुनः कार्य करने में समर्थ होता है। अतः कवि कामना करता है कि जड़-चेतनात्मक समस्त संसार की विश्रामदायिनी रात्रि का कभी अन्त न हो। वह निरन्तर जागती रहे। उस एक के जागते रहने पर यदि समग्र संसार सुख-लाभ करे तो कितना अच्छा होगा। इस प्रकार इस प्रगीत में कवि की कोमलतम भावना व्यक्त हुई है। वह व्यष्टिपरक सुख एवं शान्ति की अपेक्षा समष्टिपरक सुख एवं शान्ति की कामना करता है। जिस सुख एवं आनन्द का उपभोग वह स्वयं न कर सका, उसका उपभोग संसार करे, संसार के लिए मिलन-सुख स्थाई हो, यही उसकी मनोकामना है।

अपलक जगती ....नखत पाँत।

केवल रात्रि बिना पलक झपकाए ही जागती रहे। पृथ्वी पर समस्त प्राणी (जड़ और चेतन) अपनी असमर्थता रूपी सम्बल (बिछावन) में सो रहे हों तथा कहीं भी किसी प्रकार की बातचीत न हो रही हो। (खेतों के बीच की) पगडण्डियाँ हरियाली में सो रही हों, पुष्प शाखाओं पर सो रहे हों तथा नक्षत्रों की पंक्तियां कुछ-कुछ अलसाई हों।

कवि अपनी कोमल भावना को व्यक्त करते हुए कहता है कि समग्र संसार निद्रा-सुख लूट रहा हो। केवल रात्रि जागती रहे। समस्त प्राणी दिन भर के क्रिया-कलापों से श्रान्त होकर निद्रादेवी की क्रोड़ में चले जायं। वातावरण में चारों ओर शांति एवं सुख का साम्राज्य छा जाय, कहीं किसी प्रकार का शब्द न हो। 'निरीहता सम्बल' का प्रयोग अत्यन्त सार्थक है। रात्रि के समय तक व्यक्ति इतना असमर्थ एवं अशक्त हो जाता है कि वह सोने को विवश हो जाता है। अतः कवि का कथन है कि जड़-चेतन सभी प्राणी असमर्थता रूपी बिछावन में लिपटकर निद्रालीन हो जायं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'पथ सोये हों हरियाली में' द्वारा कवि व्यंजित करना चाहता है कि हरियाली भरी पगडण्डियों पर दिन भर पथिक चलते रहते हैं, जिससे वे थक कर चूर हो जाती हैं। रात्रि के समय आने-जाने वालों का अभाव हो जाने के कारण वे भी हरियाली के मध्य सो जायं, विश्राम करें। शाखाओं के पुष्प भी निद्रामग्न हो जायं, भ्रमर और तितलियाँ उन पर गुञ्जार न करें।

'हो अलस उनींदी नखत पांत' अर्थात् रात्रि के समय आकाशमण्डल में देदीप्यमान तारों की स्थिति वैसी हो जैसी कि अर्धसुप्त प्राणी की। अर्धसुप्त प्राणी कभी जाग पड़ता है और कभी आलस्य के कारण अपने नेत्र बन्द कर लेता है। तारे भी अपनी झिलमिलाहट से कभी नेत्र उन्मीलित कर लें और कभी निमीलित।

विशेष—१. रात्रि के समय तारे लुका-छिपी करते जान पड़ते हैं, यही उनकी आँखों का बन्द होना और खुलना है। कवि की उद्भावना अत्यन्त मार्मिक बन पड़ी है।

२. 'निरीहता सम्बल' में रूपक अलंकार है।

नीरव प्रशांति.....न प्रात।

(दिनभर कलियों, पत्तियों पुष्पों, लताओं एवं वृक्षों पर इठलाता हुआ) मलय-समीर रूपी पथिक भी थक जाय (सोने को विवश हो जाय)। नीरव प्रशान्त रजनी में वह मौन होकर (अपनी शांत गति से) केवल नन्हीं कोपलों को धीरे-धीरे हिलाता हुआ बहे। आलिंगपाश में आबद्ध जो अतृप्त हृदय सो रहे हों, उनके स्वप्नों का प्रभात न हो (स्वप्न-सुख लुटते रहें)।

दिन भर मलय समीर बहता है। उसकी गति अत्यन्त तीव्र होती है। पत्तों एवं शाखाओं की खड़खड़ाहट का शब्द चारों ओर फैल जाता है, किन्तु रात्रि की वेला में दिन भर के क्रिया-कलापों के कारण श्रांत-पथिक की भाँति मलय समीर भी थक जाता है; अतः उसकी गति में मंदता आ जाती है। फलतः केवल कोमल-कोमल कोपलें हिलती हैं, शाखाओं एवं बड़े पत्तों में किसी प्रकार की खड़खड़ाहट नहीं होती। इसलिए कवि ने 'किसलय से छिछल छना' का प्रयोग किया है। वायु की मंद गति पर उसकी यह उद्भावना अत्यन्त विलक्षण है।

अन्तिम पंक्तियों में कवि ने अपनी कोमलतम भावना व्यक्त कर दी है। रात्रि के वातावरण में जड़चेतनात्मक समस्त प्राणी निद्रामग्न होते हैं। निद्रा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्था में वे अनेक मधुर सपने संजोए होते हैं । अतः कवि ईश्वर से प्रार्थना करता है कि ऐसे प्राणी जो मधुर स्वप्न-रस लूट रहे हों—प्रेमरस का पान करते रहें, जिनके हृदय की तृप्ति न होती हो, उनके लिए कभी प्रभात न हो - वे निरन्तर सुख-सपनों का रसास्वादन करते रहें ।

विशेष—१. इन पंक्तियों में कवि की उद्भावना-शक्ति एवं कोमलतम भावना का सुन्दर परिचय प्राप्त होता है । उसकी समष्टिपरक भावना अत्यन्त मुखर है—

वक्षस्थल में जो छिपे हुए—
सोते हों हृदय अभाव लिए—
उनके स्वप्नों का हो न प्रात ।

२. 'मलय-वात' का मानवीकरण किया गया है ।

३. संगीत-तत्त्व प्रचुर मात्रा में वर्तमान है ।

२०. जगत की मंगलमयी उषा बन

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत 'अरी वरुणा की शांत कछार' प्रगीत की भाँति बौद्ध विचार-धारा से प्रभावित है । यह प्रगीत मूलगन्ध कुटी विहार के समारोहोत्सव में मंगलाचरण के रूप में गाया गया । कवि 'प्रसाद' बौद्ध-दर्शन के प्रति विशेष आस्था एवं अनुराग रखते हैं । महात्मा बुद्ध ने कर्मकाण्ड और मिथ्याडम्बरों का विरोध किया । उन्होंने अपने जीवन में अहिंसा, त्याग और सत्य पर भी विशेष बल दिया । उन्होंने निवृत्तिमार्ग और प्रवृत्तिमार्ग की अपेक्षा मध्यममार्ग का अनुसरण करने का सन्देश दिया । अतएव कवि कामना करता है कि यह बौद्धधर्म युग-युग तक अमर रहे और अपनी शान्ति-प्रसारक वाणी द्वारा विश्व का कल्याण करता रहे—

स्मृति चिन्हों की जर्जरता में,
निष्ठुर कर की बर्बरता में,
भूलें हम न वह संदेश जिसने फेरी धर्म दुहाई थी ।
जगती की.....ललाई थी ।

(महात्मा बुद्ध का महात्म्य-गान करते हुए कवि कहता है कि जिस दिन महात्मा बुद्ध ने अपने धर्म-चक्र का विश्व भर में प्रवर्तन किया था) उस दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करुणा मानो समस्त जगत के लिए कल्याणकारी उषा का रूप धारण करके आयी थी। उस समय पूर्व दिशा के नवीन गैरिक अंचल में भी एक (विचित्र प्रकार की) लालिमा भर गई थी।

महात्मा बुद्ध के आविर्भाव से पूर्व मानव-समाज की दशा अत्यन्त दीन-हीन थी। वह नाना प्रकार की भूल-भुलैयों में पड़ा था—मोक्ष का मार्ग उससे कोसों दूर था। उसी समय प्राची अर्थात् भारत में भगवान् बुद्ध द्वारा बौद्ध-धर्म की स्थापना हुई। प्रभातकालीन वेला में पूर्व दिशा में चारों ओर उषा की लालिमा फैल जाती है, उसी प्रकार पूर्वी देशों में गैरिक वस्त्र धारण कर करुणा का सन्देश देने के लिए भगवान् बुद्ध के शिष्य (बौद्ध-भिक्षुक) फैल गये।

विशेष—१. कवि ने 'बौद्ध विचारधारा' और 'उषा' का रूपक बाँधा है, जिसका पालन पूरे गीत में किया गया है।

२. 'गैरिक' तथा 'प्राची' शब्द श्लिष्ट हैं। प्रभातकालीन उषा का रंग गेरुए-वस्त्र जैसा होता है तथा भगवान बुद्ध ने गेरुए वस्त्र धारण किये थे। प्राची का एक अर्थ है—पूर्व दिशा और दूसरा अर्थ है—समस्त प्राच्य देश—विशेषतः भारत।

भय-संकुल..... .....आई थी।

(उषा का उदय होते ही) भयपूर्ण रात्रि समाप्त हो गयी और संसार की व्याकुलता दूर हो गई। सघन मेघों की अन्धकार-राशि को दूर करने के लिए विद्युत की भांति (संसार के अज्ञानान्धकार का विनाश करने के लिए महात्मा बुद्ध की विचारधारा इस भूमण्डल पर) मानो स्वर्गीय किरण बनकर आयी थी।

रात्रि की अन्धकारपूर्ण वेला में भय का आधिक्य हो जाता है। चोरी, हत्या, डकैती, व्यभिचार आदि दुष्कृत्य रात्रि के समय ही किये जाते हैं। समग्र संसार आत्म-रक्षा के लिए चिंतित एवं आकुल हो जाता है। चारों ओर घनीभूत अन्धकारराशि के कारण कालिमा छायी रहती है, किन्तु उषाकाल का आगमन होते ही चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश छा जाता है। इसी प्रकार भगवान बुद्ध के अवतरण से पूर्व समग्र संसार में अज्ञान एवं मोह का अन्धकार छाया था। मोक्ष की अप्राप्ति के कारण लोग आकुल-व्याकुल थे। उन्हें इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात का भय था कि वे मोक्ष प्राप्त करने के अनधिकारी हैं। किन्तु भगवान बुद्ध के संदेशों का प्रचार-प्रसार होते ही समस्त सांसारिक अज्ञान एवं मोह-ममता का विनाश हो गया। ऐसा प्रतीत होता था मानो सांसारिक प्राणियों के अज्ञान एवं वासनाजनित अन्धकार का समूल नाश करने के लिए स्वर्ग से बौद्ध-धर्म रूपी प्रकाश-किरण इस पृथ्वीतल पर अवतरित हो गयी हो।

खिलती पंखुरी..... .....लाई थी।

(यह उषा) कमल-वन की खिलती हुई पंखुरियों में, सारनाथ की खुलती आंखों में और (ससार में व्याप्त) दुख की कठोरता को देखकर पुष्प-रस के बहाने अवतरित हुई थी। कल-कल का (मधुर) स्वर करती हुई, प्राणियों के दुख की कथा कहती हुई वरुणा नदी शांति रूपी शीतल जल को भर लाई थी।

उषा के आगमन से कमल-वन खिल उठता है—उसमें रस और माधुर्य भर जाता है। इसी प्रकार भगवान बुद्ध के उपदेश सुनकर दुःखी एवं अशान्त मानव-प्राणी सुखी एवं शान्त हो गये। सारनाथ भी महात्मा बुद्ध को पाकर धन्य हो गया। महात्मा बुद्ध ने अमर-ज्ञान को प्राप्त करके जन-जन का कल्याण किया। सांसारिक प्राणियों के दुःख एवं क्लेशों को देखकर उनके हृदय में दया तथा नेत्रों में करुण-रस उमड़ पड़ा।

काशी के इस प्रदेश (सारनाथ) में कल-कल नाद करती हुई वरुणा नदी प्राणियों के क्लेशों की करुण-कहानी कहती हुई वर्षों से बह रही थी, उसा ने मानो अपने शीतल जल के रूप में मुक्ति का अमर-सन्देश देकर प्राणी-मात्र को शान्ति प्रदान की। यही वरुणा नदी कभी विश्वास करती थी कि संसार नश्वर है, जीवन क्षणिक है, सब पदार्थ निस्सार हैं, सांसारिक आकर्षणों में लिप्त होना मानव की भूल है, आदि-आदि, किन्तु महात्मा बुद्ध के अवतरण पर यह जान गई कि इस संसार से मुक्त होने का भी उपाय है। व्यक्ति यदि अपनी तृष्णा का नाश कर दे, तो मोक्ष का मार्ग उन्मुक्त है। जिस प्रकार नदी की शीतलता भरी जल-धारा से अग्नि से दग्ध प्रदेश क्षण-भर में ठण्डा हो जाता है, उसी प्रकार व्यर्थ के धर्माडम्बरों में लिप्त, अज्ञान एवं मोह की अग्नि से दग्ध समाज महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं की शीतल जल धारा से शान्त हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—१. 'ऋषिपत्तन' सारनाथ का प्राचीन नाम है। यह काशी के निकट है। यहीं भगवान बुद्ध ने अपना प्रथम धर्मोपदेश दिया था।

२. 'कलकलनादिनि बहती-बहती' तथा 'शान्ति-वारि शीतलता-सी' में अनुप्रास और रूपक अलंकार का चमत्कार अवलोकनीय है।

पुलकित मलयानिल..... झुक आई थी।

कूलों को पुलकित (रोमांचित) कर देने वाली मलय पर्वत की (शीतल, मंद एवं सुगन्धित) वायु फूलों में (रस की) अंजलि भर रही थी, (उसकी) भय को दूर कर देने वाली वाणी का चारों ओर स्वागत किया जा रहा था। कठोरता तो मानो वहां से सर्वदा के लिए विदाई ले रही थी। उन शांत तपोवन के कुञ्जों में, (छोटी-छोटी) कुटियाओं में, तिनके और लताओं के समूहों में तथा झोंपड़ियों (उटजों) में (उस करुणास्वरूप मंगलमयी उषा का) प्रकाश भर गया था तथा विकसित लतिकाएं भी नीचे की ओर झुक गयी थीं।

कर्मकाण्डप्रधान धर्म का घोर विरोध करने वाली महात्मा बुद्ध की मंगलमयी अभयवाणी का न केवल प्राणी-जगत् ने, अपितु प्रकृति-जगत ने भी हार्दिक अभिनंदन किया। नदी के कूलों पर बहने वाला शीतल, मंद एवं सुगन्धित मलय समीर प्रसन्न हो उठा और पुष्पों की अंजुलि भर कर भगवान बुद्ध के स्वागत में बिखेरने लगा। हिंसा, स्वार्थ, शत्रुता जैसे निष्ठुर भाव भगवान बुद्ध की शान्तिप्रसारक वाणी सुनते ही संसार से विदा हो गये।

वरुणा के तटों पर बड़े-बड़े बौद्ध-विहार तथा संघाराम (मठ) स्थापित हो गये। वृक्षों, कुंजों, कुटियाओं तथा तपोवनों में बौद्धभिक्षु चिंतन-मनन करने लगे। चारों ओर बौद्धभिक्षुओं के ज्ञान का प्रकाश बिखर गया। जिस प्रकार लताएँ पुष्पभार से झुक जाती हैं, उसी प्रकार अमर ज्ञान को उपलब्ध कर ऋषितुल्य सात्विक बौद्धभिक्षु विनम्र हो गये।

विशेष—१. फूलों का खिलना और शीतल, मंद एवं सुगन्धित मलय-समीर का बहना स्वागत के द्योतक हैं। 'मलयानिल' से कवि को विशेष अनुराग है। अनेक प्रगीतों में पहले भी वह उसके सहारे भावाभिव्यक्ति कर चुका है। यथा—

(क) मलयानिल की परछाईं सी!

(ख) कहता दिगन्त से मलय पवन,
प्राची की लाज भरी चितवन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ग) पुलक उठता तब मलय-पवन ।

(घ) चल रहा सुखद यह मलय वात !

(ङ) उसकी सांसों का मलय वात ।

(च) थकता हो पंथी मलय-वात ।

२. लघुता सूचित करने के लिए कवि ने 'लता' के स्थान पर 'लतिका' का प्रयोग किया है ।

मृग मधुर.....आई थी ।

(आनन्दपूर्वक) मधुर जुगाली करते हुए मृग तथा मधुर स्वर से मनोहर ध्वनि करते हुए पक्षी विपदा से (मानो) पूछ रहे थे कि यह किसके पांवों की आवाज आयी थी ।

महात्मा बुद्ध के आगमन से पूर्व चारों ओर हिंसा का ताण्डव-नृत्य हो रहा था । पशु-पक्षियों का क्रूरतापूर्वक वध किया जाता था अतः पशु-पक्षी सदैव चिंतित एवं आतंकित रहते थे । महात्मा बुद्ध ने हिंसा का घोर विरोध कर पशु-पक्षियों को भी अभयदान दिया । इसीलिए वे भगवान बुद्ध का स्वागत कर रहे थे तथा अपने ऊपर सदैव मँडराने वाली प्राणों की चिंता (विपदा) से पूछ रहे थे कि अब तुम्हें यहाँ से भागना पड़ेगा, अब तुम्हें अपने कार्य में सिद्धि प्राप्त न होगी ।

प्राची का.....बनाई थी ।

पूर्व दिशा का पथिक चला आ रहा था और आकाश उसके चरणों की (धूलि रूपी) पराग से भर गया था । (उसकी चरण रज के) परमाणु इतने पवित्र थे कि करुणा ने भी सृष्टि रचने के लिए उनका प्रयोग किया था ।

बौद्ध-धर्म पूर्व में उदित होकर सर्वत्र फैल गया । महात्मा बुद्ध के चरणों से उठने वाली रेणु में भी दया, अनुराग तथा, करुणा जैसे भावों के कण विद्यमान थे, जिनसे इस व्यथित भूमण्डल पर मानो सुख-शान्ति-पूर्ण एक नवीन सृष्टि का निर्माण हुआ ।

तप की.....बन आई थी ।

प्रौढ़ तपस्या की मूर्ति पूर्णतः विकसित बुद्धि तथा इस दुःखी संसार की चेतनता भगवान बुद्ध के रूप में मानो सजीव बनकर (इस संसार में) अवतरित हुई थी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान बुद्ध के चरित्र की महानता अकथनीय है। उनका व्यक्तित्व अत्यधिक गरिमापूर्ण था। वे तरुण होते हुए भी तपस्वी थे और उनकी तपस्या भी अत्यन्त उत्कृष्ट थी। बुद्धि और ज्ञान के तो वे अक्षय कोष थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो उनके विराट् व्यक्तित्व में वे (बुद्धि और ज्ञान) सीमाबद्ध होकर व्याप्त हो गये हों। सांसारिक प्राणियों की आधि-व्याधियों से उत्पन्न आहें मानो उनके शब्दों के रूप में व्यक्त हो गयीं। दूसरे शब्दों में जरा-मरण आदि दुःखों से विकल साँसारिक प्राणियों की करुण पुकार ने मानो महात्मा बुद्ध के रूप में जन्म लिया।

विशेष—महात्मा बुद्ध का चरित्र अत्यन्त पवित्र एवं गरिमा सम्पन्न था। उन्होंने अपने युग का सच्चा प्रतिनिधित्व किया था। उन्होंने तत्कालीन सामाजिक विषमताओं एवं रीति-नीतियों को समझा, परखा तथा उनमें यथेष्ट संस्कार-परिष्कार किया। इसीलिए कवि ने उनके लिए—

'तप की तारुण्यमयी प्रतिमा'

'प्रज्ञा पारमिता की गरिमा'

जैसे विशेषणों का प्रयोग किया है।

उस पावन .... आई थी।

जिस दिन (गौतम के) धर्म-चक्र के सतत प्रवर्तन की सुखप्रद ध्वनि (इस भूमण्डल पर) छाई थी, उसी पवित्र दिन की कल्याणकारिणी स्मृति को (अपने हृदय में) संजोये हुए यह पृथ्वी आज भी (मानो) धैर्यमयी हो रही है। कल्याणप्रद बौद्ध संघ की जन्मभूमि युग-युग की नव मानवता एवं विस्तृत भूमण्डल में व्याप्त विपुल सम्पदा को मानो आमंत्रित कर रही थी।

भगवान बुद्ध ने बौद्ध संघ की स्थापना की तथा सद्धर्म के प्रचार के लिए अपने अनेक शिष्यों—बौद्ध भिक्षुओं—को देश-देशान्तरों की ओर भेजा। फलतः चारों ओर गौतम का धर्म-चक्र घूमने लगा तथा प्रसन्नता एवं सुख का प्रसार होने लगा। उस पवित्र एवं कल्याणकारी दिन की स्मृति आज भी इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठों पर स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है। आज भी उस दिन को गौरव एवं सम्मान दिया जाता है।

भगवान बुद्ध के उपदेशों में शाश्वत सत्यों की प्रतिष्ठा थी। अतः उनका सम्मान किसी व्यक्ति अथवा जाति-विशेष द्वारा ही नहीं किया गया, अपितु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समग्र विश्व ने उन्हें अत्यन्त श्रद्धापूर्वक ग्रहण किया। उनके उपदेश युग-युग की मानवता के कल्याण के लिए शाश्वत एवं चिरन्तन थे। उनके कल्याणप्रद संघ की भूमि ने समस्त संसार को आमन्त्रित किया। संसार की विभिन्न जातियों एवं समाजों ने बौद्धधर्म को अपना कण्ठहार बनाया। इस प्रकार यह केवल भारत का ही नहीं, अपितु समग्र विश्व का ग्राह्य धर्म बन गया। उसमें व्यष्टि के स्थान पर समष्टि को महत्त्व दिया गया।

विशेष—१. इन पंक्तियों में कवि की बौद्ध-धर्म के प्रति आस्था अत्यन्त मुखर है। निश्चय ही बौद्धधर्म विश्व-धर्म है। उसकी सार्वभौमता असन्दिग्ध है। इतिहास में फाहियान, ह्वेनसाँग जैसे विद्वानों का उल्लेख मिलता है, जो बौद्धधर्म का अध्ययन करने के लिए नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों में अत्यन्त दूरस्थ देशों से आया करते थे। कवि ने इस धर्म की सार्वभौमता के संकेत अपनी अन्य कृतियों में भी यत्र-तत्र प्रस्तुत किये हैं।

'युग युग की नव मानवता को
विस्तृत वसुधा की विभुता को"

पक्तियों में अनुप्रास का सौन्दर्य भरा है।

स्मृति चिह्नों.....दुहाई थी।

(बौद्ध-धर्म की गरिमा को व्यक्त करते हुए कवि कहता है कि) हमारे स्मृति-चिन्हों के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर तथा कठोर एवं नृशंस हाथों की क्रूरता के कारण (सब कुछ नष्ट हो जाने पर भी) हम (कम-से-कम) बुद्ध के उस शाँतिपूर्ण संदेशों को न भुलाएँ, जिसने (एक बार फिर से संसार में) धर्म की भावना का प्रचार किया था।

हमारा प्राचीन इतिहास प्रायः लुप्त हो चुका है। बौद्ध-कालीन संस्कृति के कुछ अवशेषमात्र सुरक्षित हैं, जिनसे तत्कालीन रीति-नीतियों का पता चलता है। वह युग आध्यात्मिकता की भावना से ओत-प्रोत था, जबकि आधुनिक युग में मात्र आडम्बर एवं तड़क-भड़क के अतिरिक्त कुछ नहीं है। आधुनिक युग की भौतिकता मध्ययुगीन आध्यात्मिकता को निगीर्ण करना चाहती है। अहिंसा, त्याग, शांति एवं प्रेम के स्थान पर आज हिंसा, स्वार्थ, अशांति एवं वैमनस्य का प्राधान्य है। अतः कवि की कामना है कि चाहे हमारे ऊपर कितने भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकट क्यों न आएं, हमें कभी भी महात्मा बुद्ध के अमृतमय सन्देशों को नहीं भुलाना होगा।

विशेष · स्तवन-शैली में लिखित प्रस्तुत प्रगीत में वर्णनात्मकता की प्रधानता है।

२१. चिरतृषित कंठ से तृप्त-विधुर !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने अपने अतृप्त हृदय की आशा-आकांक्षा को व्यक्त किया है। ऐसा ही प्रगीत 'उस दिन जब जीवन के पथ में' पहले आ चुका है। प्रिय को प्राप्त करने की उसकी इच्छा कितनी तीव्र एवं सघन है, इसका परिचय प्रस्तुत प्रगीत द्वारा प्राप्त हो जाता है। कवि ने यौवनकाल में अपने हृदय का रस अपने प्रेम-पात्र पर उँडेल दिया था, प्रतिदान में उसे सिवाय निराश और विषाद के कुछ प्राप्त न हुआ। अब वह साधना-मार्ग पर अग्रसर है तथा प्रेम के वास्तविक स्वरूप को पहचान चुका है। प्रेम का स्वभाव तो आत्मदान (Self-Submission) है, प्रतिदान नहीं। जो जितना अधिक देता है। वह उतना ही अधिक प्रेमी है। अतएव कवि का कथन है—

पागल रे ! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही हैं सब
... ...
... ...
तू क्यों फिर उठता है पुकार ?—
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

चिर तृषित.....कभी प्यार।

(एक प्रेम-भिखारी का दृश्य प्रस्तुत करते हुए कवि कहता है—) चिरकाल से अभावग्रस्त एवं अतृप्त कण्ठ से अत्यंत अर्थहीन ध्वनि के समान कौन अत्यधिक आकुल एवं दीन-हीन बार-बार रट लगा रहा है कि मुझे (जीवन में) कभी प्यार प्राप्त न हुआ। सागर में प्रतिदिन आलिंगन के लिए उठने-गिरने वाली लहरें निष्फल रहती हैं। यद्यपि सागर में अनंत जलराशि है, किंतु लहरें (आलिंगन-सुख के) एक कण को भी प्राप्त नहीं कर पातीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेम-भिखारी कवि वर्षों से प्रेम-प्रेम की रट लगा रहा है, किन्तु उसकी कामना अपूर्ण ही रही है। उसकी स्थिति अभाव-विकल अकिंचन भिखारी की सी है। जिस प्रकार दुर्भाग्यग्रस्त भिखारी की ध्वनि अत्यन्त अर्थविहीन एवं कम्पित होती है, उसी प्रकार कवि की वाणी भी अत्यन्त अर्थ-विहीन एवं काँप रही है। जिस प्रकार भिखारी की ध्वनि के मूल में उसके जीवन के अभाव एवं अतृप्ति निहित होती है, उसी प्रकार कवि की ध्वनि के मूल में असफल प्रेमजन्य निराशा एवं अतृप्ति विद्यमान है। अतएव वह बार-बार प्रेम की अप्राप्ति की बात कहता है।

सागर में अत्यन्त तीव्रतापूर्वक लहरें उठती हैं तथा अत्यन्त आतुरतापूर्वक सागर के आलिंगन-पाश में आबद्ध होने के लिए दौड़ पड़ती हैं, किन्तु प्रेम न पाकर निराश होकर लौट पड़ती हैं। सागर में अनन्त प्रेम-रस विद्यमान है, गहराई एवं विशालता का कोई ओर-छोर नहीं, किन्तु प्रेम की इच्छुक लहरें एक बूँद तक नहीं प्राप्त कर पातीं। वे अपने प्रिय सागर के लिये जितनी आतुरता एवं ममता रखती हैं, सागर उनकी उतनी ही उपेक्षा करता है। यही स्थिति सांसारिक प्राणियों की है। प्रेमी अपने प्रिय पर सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार रहता है, किन्तु प्रिय बदले में उसका तिरस्कार एवं उपहास करता है। तभी तो प्रेम-भिखारी कवि निराश होकर धीरे से कह उठता है—'मुझको न मिला रे कभी प्यार।'

विशेष—१. प्रेम-सम्बन्धी यही भावना प्रसिद्ध नाटककार बर्नार्ड शॉ के नाटक 'कैंडिडा' (candida) की निम्नलिखित पंक्तियों में भी लक्षित होती है—

'Hush ! I go about in search of love; and I find it in unmeasured stores in the bosoms of others. But when I try to ask for it, this horrible shyness strangles me; and I stand dumb, or worse than dumb, saying meaningless things: foolish lies; And I see the affection I am longing for, given to dogs and cats and pet birds.....'

(क) चिर तृषित कंठ से तृप्त-विधुर
वह कौन अकिञ्चन अति आतुर
अत्यंत तिरस्कृत अर्थ सदृश...

(ख) 'सागर लहरों सा आलिङ्गन'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंक्तियों में अनुप्रास और उपमा का चमत्कार दर्शनीय है।

अकरुण वसुधा.....कभी प्यार।

निष्ठुर संसार से वह (प्रेम-भिखारी) किसी की मधुर मुस्कान के लिए ललक रहा है, जिसके प्रकाश से (प्रेरणा पाकर) उसके समस्त कर्म कोमल, उज्ज्वल एवं उदार हो जायेंगे। इसीलिए वह धीरे से कह उठता है कि मुझे (जीवन-भर) प्रेम प्राप्त न हुआ।

(प्रभातकाल) जब उषा अपना राग (प्रकाश) फैलाती है, तो उसके हृदय में उदासीनता जागृत हो जाती है। प्रवंचना, वेदना, घृणा तथा ममता (उसके हृदय में) मिलकर अन्धकार बिखेरने लगते हैं। तभी वह धीरे से पुकार उठता है कि मुझे (जीवन-भर) प्रेम प्राप्त न हुआ।

प्रेम-भिखारी कवि को यदि अपने प्रिय की मधुर मुस्कान भी प्राप्त हो जाय तो उसमें एक विशेष प्रकार की कार्यशीलता एवं जागरूकता आ जायगी, किन्तु संसार इतना निष्ठुर है कि उसकी इस छोटी-सी इच्छा को भी पूर्ण नहीं होने देता। इसीलिए उसके हृदय में अत्यधिक अशांति एवं विषाद छा गया है।

प्रभातकालीन स्वर्णिम वेला में चारों ओर उषा-सुन्दरी की लालिमा व्याप्त हो जाती है, जड़चेतन सभी पदार्थ प्रकाशित हो जाते हैं, सर्वत्र आशा एवं स्फूर्ति छा जाती है किन्तु प्रेम-भिखारी कवि के हृदय में उस समय विराग का उदय हो जाता है। संसार के समस्त आकर्षण उसे व्यर्थ दृष्टिगत होते हैं। उसे अपना वह अतीत स्मरण हो आता है, जब वह अपने प्रेम-पात्र द्वारा प्रवंचित किया गया था। वह प्रवंचना, पीड़ा, घृणा एवं ममता उसकी चेतना को जड़ बना देती है। वह अतीत की घटनाओं का बार-बार स्मरण कर दुःखी होने लगता है और केवल इतना कह पाता है—'मुझको न मिला रे कभी प्यार।'

ढल विरल.....कभी प्यार।

(उद्यान में) असीम सौरभरस से पूर्ण कलियों से भरकर डालियाँ झुक रही हैं (दृश्य अत्यंत मनोहारी है), किंतु वह अपने विषाद रूपी विष द्वारा मूर्छित होकर बार-बार काँटों पर गिर-गिर पड़ता है।

(उसे इस बात का अत्यधिक दुःख है कि) उसे अपनी जीवन रूपी रात्रि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का चन्द्रमा (प्रियतम) प्राप्त न हो सका। उसे स्वाति नक्षत्र (में बरसे हुए जल) का एक बिंदु भी प्राप्त न हुआ जो उसके हृदय रूपी सीप का (सुंदर) मोती बनकर लक्षहार (लाखों बहुमूल्य मोतियों के हार के स्थान) को पूरा कर देता। इसीलिए वह धीरे से पुकार उठता है कि मुझे (जीवन-भर) प्रेम प्राप्त न हुआ।

प्रेम-भिखारी कवि अत्यन्त दुखी है। वाटिका के हरे-भरे वृक्ष, सुगन्धि-युक्त कलियों से परिपूर्ण लताएँ तथा रस भरे पुष्प भी उसके दुःख को हल्का नहीं कर पाते। कलियों के भार से लदकर कोमल-कोमल डालियाँ नीचे की ओर झुक रही हैं, किन्तु वह प्रिय-वियोग में व्यथित है। विषाद ने उसकी चेतना को इस प्रकार आवृत्त कर लिया है मानो विष का प्रभाव पड़ गया हो। विषाद के आधिक्य के कारण वह अपनी चेतना खो बैठा है, फलतः संसार के सुखों का तनिक भी उपभोग नहीं कर पाता।

उसे अतीत की स्मृतियां बार-बार रुलाती हैं। उसे केवल यही अभाव खटकता है कि वह जीवन भर अपने प्रिय को प्राप्त न सका। उसका प्रिय उसके जीवन के समस्त दुःखों एवं निराशाओं का उसी प्रकार अन्त कर देता है, जिस प्रकार चन्द्र अपनी विमल ज्योत्स्ना द्वारा रात्रि की अन्धकार-राशि का। जिस प्रकार स्वाति नक्षत्र में बरसे हुए जल का एक कण भी सीप के उदर में जाकर उसे मोती का बहुमूल्य रूप दे देता है, उसी प्रकार यदि उसे अपने प्रिय के प्रेमरस का एक कण भी प्राप्त हो जाता तो वह उसकी हृदय रूपी शुक्ति में जाकर ऐसा बहुमूल्य मोती बन जाता, जिसकी आभा के समक्ष लक्षहार की अनूठी आभा भी फीकी पड़ जाती, किन्तु दुःख तो इस बात का है कि उसे प्रेम-रस का एक कण भी प्राप्त न हुआ।

विशेष—१. 'सौरभ-रस', 'विषाद-विष', 'जीवन-रजनी' तथा 'हृदय-सीप' में रूपक अलंकार का सौन्दर्य देखते ही बनता है।

२. प्रेमरस के एक कण के समक्ष कवि मणि-मुद्राओं के वैभव को भी तुच्छ समझता है। प्रेम का महात्म्य-गान कवि ने अन्यत्र भी अनेक स्थलों पर किया है। यथा—

प्रेम, जगत का चालक है,
इसके आकर्षण में खिंच के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिट्टी वा जल पिण्ड सभी
दिन रात किया करते फेरा।
इसकी गर्मी मरु, धरणी, गिरि,
सिन्धु, सभी निज अन्तर में।
रखते हैं आनंद-सहित,
है इसका अमित प्रभाव महा।
—प्रेम-पथिक

पागल रे !.....कभी प्यार

(यहाँ कवि ने प्रेम के उज्ज्वल रूप को पहचान लिया है। वह अपने चित्त को सान्त्वना बँधाते हुए कहता है—) रे पागल ! प्रिय भला कब प्राप्त होता है ? उसे तो सब आत्मदान ही करते हैं। तेरे आँसुओं के कण-कण को पाकर विश्व तेरा ऋणी हो जायगा। फिर तू क्यों (पागलों की तरह) पुकार उठता है 'मुझे प्रेम प्राप्त नहीं हुआ'।

प्रेम में प्रतिदान की आशा नहीं की जाती। उसमें तो प्रेमी अपने हृदय के समस्त वैभव एवं रस को अपने प्रिय पर न्यौछावर कर देता है। वह अपना सर्वस्व प्रियतम के प्रति समर्पित कर देता है। वह अपने हृदय-मन्दिर में निरन्तर प्रियतम की अर्चना किया करता है। आत्मदान ही प्रेम का प्राण है। वस्तुतः जहाँ प्रतिदान की भावना होती है, वहीं दुःख एवं निराशा है, जहाँ आत्मदान की भावना होती है, वहाँ शाश्वत सुख एवं अमर शान्ति है।

प्रेम-क्षेत्र में अश्रुदान का अपार महत्त्व है। संसार में प्रेमी को माता, पिता, बहन, भाई एवं मित्र आदि के रूप में जो प्रेम प्राप्त होता है, उससे इस विश्व का उस पर मानो एक प्रकार का ऋण चढ़ जाता है। प्रिय के अभाव में वह जो अश्रु-वर्षण करता है, उससे उसका यह ऋणशोधन हो जाता है। अतः प्रेमी को प्रिय की अप्राप्ति के कारण किसी प्रकार की चिन्ता अथवा आशंका नहीं करनी चाहिए।

विशेष—१. 'प्रसाद' ने यहाँ स्पष्ट किया है कि आत्मदान ही सच्चा प्रेम है। प्रेम का स्वभाव देना है, लेना नहीं। जो जितना देता है, वह उतना ही अधिक प्रेमी है—(Self-Submission is the nature of true-love.)

२. आत्मदान की यह भावना प्रसाद ने अन्यत्र भी कई स्थलों पर व्यक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की है। 'कामायनी' के 'लज्जा' सर्ग की निम्नलिखित पंक्तियों में यही भावना मुखरित हुई है—

इस अर्पण में कुछ और नहीं,
केवल उत्सर्ग छलकता है।
मैं दे दूं और न फिर कुछ लूं,
इतना ही सरल झलकता है।

३. 'स्कन्दगुप्त' नाटक में देवसेना से नायक स्कन्द जब प्रेम-याचना करते हैं, तब देवसेना के उद्गारों से भी 'प्रेम में आत्म-समर्पण' की भावना का महत्व घोषित होता है—

'नाथ ! मैं आपकी ही हूँ, मैंने अपने को दे दिया है। अब उसके बदले कुछ लिया नहीं चाहती।' —स्कन्द गुप्त (पंचम अंक)

२२. काली आँखों का अन्धकार !

परिचय—'प्रसाद' रूप और यौवन के कवि हैं। वे रूप और यौवन को जीवन का सत्य मानते हैं। इनका उपभोग जीवन की सबसे बड़ी माँग है। इस माँग को ठुकराना व्यक्ति की भूल है। यद्यपि ये तत्त्व नश्वर एवं अस्थायी हैं, तथापि इनका जीवन में अपना विशेष महत्त्व है। अतः साधना-पथ पर अग्रसर होते हुए भी कवि 'प्रसाद' इन तत्त्वों को भुला नहीं पाते। अपनी प्रेयसी को देखकर मानो वे सौन्दर्य-मदिरा से उन्मत्त हो उठते हैं। प्रस्तुत प्रगीत में उन्होंने अपनी प्रेयसी की अनुपम छवि का वर्णन किया है।

काली आँखों.....फिर प्यार प्यार !

(प्रिया की मदभरी) काली आँखों का अंधकार (सौन्दर्य) जब वार-पार हो जाता है (अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है) तब (प्रिया की) मादकतापूर्ण आँखों से प्रभावित अचेतन कलाकार क्षितिज को पार कर जाता है (कल्पना-लोक में पहुँच जाता है)। उस समय, वह वसंत का रंग लेकर एक ऐसा चित्र खींच देता है, जिसमें केवल प्यार होता है। सुन्दर चाँदनी रात हो तथा तारावलियों (की झिलमिलाहट) से उसका शरीर रोमाँचित हो, धीरे-धीरे मलय-समीर बह रहा हो तथा भ्रमरों एवं कलियों के (परस्पर) घात-प्रतिघात चल रहे हों, (प्रेमीजन) स्वप्नों के बादल से कुछ (प्रेम की) बूंदों का दुलार (पान) कर रहे हों, (जब चारों ओर अनुराग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फैला हो) तब तू भी (प्रेम की) मधुर पीड़ा से व्याकुल होकर (सागर की) अधीर लहरों की भाँति दौड़ पड़। पतझड़ की हवा द्वारा धराशायी (ओस-कणों के) तरल हार को वक्षस्थल पर धारण किये सूखे किसलय की भाँति (तू भी वक्षस्थल पर प्रिया की कोमल बाहुलताओं का हार पहन ले और फिर) पागल होकर 'प्यार-प्यार' की (मधुर) रटन लगा दे।

अपनी प्रेयसी की मादकतापूर्ण आँखों से प्रभावित होकर कवि अपना अस्तित्व भूल जाता है। उसकी समस्त चेतना में प्रिया की आँखों की आभा छा जाती है। वह इस सामान्य जगत को त्यागकर कल्पना-जगत में उड़ानें भरने लगता है। कल्पना-लोक में वह जिस चित्र का निर्माण करता है वह बसन्त की भाँति रंगीला होता है। बसन्त में चारों ओर वन-उपवनों में पुष्पों, पौधों एवं लताओं पर एक विशेष प्रकार का सौन्दर्य छा जाता है। समग्र प्राणि-जगत पर एक प्रकार की मादकता-सी व्याप्त हो जाती है। प्रेयसी की आँखों की रूप राशि से प्रभावित कवि द्वारा निर्मित चित्र में भी केवल मादकता एवं प्रेम का ही प्राचुर्य है।

कवि की कामना है कि वह चित्र रात्रिकालीन चन्द्र की मधुर ज्योत्स्ना तथा तारों की झिलमिलाहट से परिपूर्ण हो। शीतल, मन्द एवं सुगन्धित मलय-समीर बह रहा हो तथा समग्र प्रकृति-जगत् हर्षोल्लास से भरा हो। भ्रमर और कलियाँ परस्पर प्रेम-क्रीड़ा करते हुए आनन्द-मग्न हों। प्रेमीजन प्रेम के मधुर सपनों का आनन्द लूटते हुए सन्तोष-लाभ कर रहे हों। कहीं भी किसी प्रकार की निराशा एवं निर्जीवता न हो। ऐसी स्थिति में कवि स्वयं से कहता है कि तू भी अपनी प्रेयसी से मिलने के लिए उसी प्रकार आकुल-व्याकुल हो जा, जिस प्रकार सागर की उन्मत्त लहरें तट से आलिंगन करने के लिए अधीर हो उठती हैं। प्रेम की पीड़ा भी एक विशेष प्रकार की माधुरी लिए रहती है, अतः कवि का कहना है कि तू इस मधुर व्यथा से प्रेरित होकर प्रेयसी से मिलने के लिए तैयार हो जा। पतझड़ ऋतु में वायु द्वारा गिरायी हुई कोमल-लघु पत्तियाँ भी अपने वक्षस्थल पर ओसकणों का मन-मोहक हार पहने रहती हैं, तू भी इस निराश दशा में अपनी प्रेयसी के कोमल बाहु-पाश का हार पहन ले—उसके आलिंगन-पाश में आबद्ध होकर उन्मत्त प्रेमी की भाँति 'प्यार-प्यार' की रट आरम्भ कर दे। इस प्रकार कवि एक बार फिर प्रेम प्राप्त करने को आतुर हो उठता है। चाँदनी भरी मधुर रात,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदकता भरी आँखें तथा मलय की सिहरन उसके हृदय की प्रेम-पिपासा को तीव्र कर देती हैं।

विशेष—१. 'मधुमुकलों के झले घात' तथा 'पागल पुकार फिर प्यार-प्यार' पंक्तियों में अनुप्रास की आभा बिखरी पड़ी है।

२. 'प्रसाद' रूप और यौवन के कवि हैं, इसके अनेक प्रमाण उनके नाटकों में भी उपलब्ध होते हैं। 'स्कन्दगुप्त' की विजया का निम्नलिखित कथन इस दृष्टि से अवेक्षणीय है—

'प्रियतम ! यह भरा हुआ यौवन और प्रेमी-हृदय, विलास के उपकरणों के साथ प्रस्तुत है, उन्मुक्त आकाश के नील नीरद-मंडल में, दो बिजलियों के समान क्रीड़ा करते-करते हम लोग तिरोहित हो जायँ और उस क्रीड़ा में तीव्र आलोक हो, जो हम लोगों के विलीन हो जाने पर भी, जगत् की आँखों को थोड़े काल तक बन्द रखे।'

२३. अरे कहीं देखा है तुमने !

परिचय—कवि को अपने जीवन में प्रिय से निराशा के अतिरिक्त कुछ प्राप्त नहीं हुआ। प्रिय के निष्ठुरतापूर्वक व्यवहार ने उसे अत्यधिक व्यथित किया है। प्रस्तुत प्रगीत में वह उसी निष्ठुर प्रिय की खोज में निकल पड़ा है। वह प्रत्येक पथिक से अपने प्रिय के विषय में पूछता है। विशेष परिचय देने के लिए वह अपने प्रिय की निष्ठुरता आदि विशेषताएँ बताता है।

अरे कहीं..... .....भरने वाले को ?

अरे तुमने कहीं मेरे प्रियतम को देखा है, जो मेरी आँखों में बस कर अब आंसू बनकर भागना चाहता है। मेरे सूने (हृदय रूपी) आकाश में (प्रेम की) अग्नि जलाकर जिसने मेरे निर्मल हृदय को गला दिया तथा मेरी जीवन रूपी सन्ध्या को (अपने अस्तित्व से) नहला कर (निखार कर) जिसने हृदय रूपी रिक्त सागर को (प्रेम-जल से) परिपूर्ण कर दिया था।

प्रेम-भिखारी कवि प्रत्येक पथिक से अपने प्रियतम के विषय में पूछता है। उसका प्रिय एक बार ही उसके नेत्रों में बस गया था, वह उससे अत्यधिक प्रेम करने लगा था, किन्तु आज वह अपने प्रियतम से विमुक्त है। उसकी आँखों से प्रिय वियोगजन्य अश्रु बहते हैं, उसे ऐसा प्रतीत होता है मानो इन अश्रुओं के माध्यम से प्रिय अब उसके नेत्रों से भी भागना चाहता है। प्रियतम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सम्पर्क में आने से पूर्व उसे किसी प्रकार की चिन्ता अथवा दुःख न था। उसका हृदय रूपी आकाश अत्यन्त स्वच्छ एवं निर्मल था किन्तु प्रियतम ने उसे अपनी आभा से ओत-प्रोत कर दिया, अपने प्रेम की ज्वाला भड़का दी। उसके बहते हुए अश्रुओं के रूप में मानो उसी प्रेमाग्नि में तपकर और गल-गलकर उसका हृदय बह रहा है। कवि के यौवनकाल को प्रियतम के रूपगुण-शील-सम्पन्न व्यक्तित्व ने मनोमुग्ध करके रस के अपार सागर में निमग्न कर दिया। उसके हृदय-सागर की रिक्ति को प्रियतम ने अपने प्रेम-वारि से दूर कर दिया। अतः वह अपने ऐसे ही प्रियतम की खोज कर रहा है। प्रियतम ने ही अपनी सत्ता द्वारा उसकी जीवन रूपी सन्ध्या को निखार दिया था, उसकी निराशा को समाप्त कर दिया था।

विशेष—१. यहाँ कवि ने प्रतीकात्मक शैली के कुशल-निर्वाह द्वारा भावाभि-व्यक्ति की है। 'नभ' हृदय का, 'सुवर्ण' पावनता और स्वच्छता का, 'सन्ध्या' निराशा की तथा 'जलधि' हृदय के विस्तार का प्रतीक है।

२. रूपक अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है। हृदय रूपी आकाश, प्रेम रूपी आग, हृदय रूपी सागर तथा प्रेम रूपी जल।

३. कवि का प्रेम चरम सीमा पर पहुँच गया है।

रजनी के.....वाले को ?

रात्रि के छोटे-छोटे अन्धकार-कणों में, संसार की ऊष्मा के वन में तथा (वनस्पति पर छाये हुए) तुहिनकणों में मुझसे डर कर (मानो मेरा प्रियतम) छिप गया है। मेरा प्रियतम सुख के सपने ही देखता रहा (जीवन के सुखपूर्ण पहलू को ही महत्त्व देता रहा), मेरे प्रति सदैव निष्ठुर रहा। आज शायद वह भी मेरे मौन मरण (साधना) को देखकर सिहर उठा है।

कवि को ऐसा लगता है, मानो उसका प्रियतम उससे भयभीत होकर प्रकृति के कण-कण में छिप गया है। फलतः रात्रि की तिमिर-राशि तथा दिन की प्रकाशराशि के कण-कण में उसे अपना प्रिय ही दिखाई पड़ता है। प्रभात-कालीन वेला में कोमल पत्तियों तथा लतिकाओं पर बिखरी ओसराशि में भी उसे अपने प्रिय की ही प्रतिछवि दिखाई पड़ती है। वस्तुतः कवि को अपना प्रिय अत्यन्त निश्छल एवं भोला-भाला प्रतीत होता है। वह (प्रिय) सदैव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिशु-सुलभ क्रीड़ाएँ करता रहा, कवि के हृदय की गरहाई तक न पहुँच सका। उसने जीवन के रंगीन पक्ष को ही ग्रहण किया। कवि उसके विरह में किस प्रकार तिल-तिलकर मर रहा है, यह उसने कभी न जाना। आज कवि की कठोर साधना एवं तपस्या को देखकर शायद वह भी काँप उठा है। कवि की मौनतापूर्ण कष्ट-सहन-प्रवृत्ति ने उसे अभिभूत कर लिया है।

विशेष—१. कवि पर यहाँ मुस्लिम शैली का प्रभाव लक्षित होता है। विरह की दशवीं दशा--मरणासन्न अवस्था—का अच्छा चित्रण किया गया है।

२. निम्न पंक्तियों में अनुप्रास और समासोक्ति अलंकार का चमत्कार अवेक्षणीय है—

रजनी के लघु-लघु तम कन में
जगती की ऊष्मा के बन में
उस पर पड़ते तुहिन सघन में
छिप, मुझसे डरने वाले को ?

२४. शशि सो वर सुन्दर रूप विभा।

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि एक दार्शनिक बनकर व्यक्तिनिष्ठ जीवन से ऊपर उठ गया है। वह जीवन के सत्य—चलते रहना ही जीवन है—से परिचित हो गया है। उसकी हृदय-दृष्टि उषाकाल की लालिमा और पक्षी-समुदाय के कलरव को जागरण का सन्देश देते हुए यह अनुभव करती है कि उसका प्रेम भी विश्वभर में परिव्याप्त होकर जागृति का सन्देश दे—

मेरा अनुराग फैलने दो,
नभ के अभिनव कलरव में।

शशि-सी ..... जाना।

हे प्रिय ! तुम चन्द्रमा के समान सुन्दर अपनी रूप-छटा चाहे मुझे न दिखाना, किन्तु उसकी निर्मल शीतल छाया के स्थान पर हिमकणों की वर्षा (अवश्य) करना। तुम मेरे जीवन की सुखमयी रात्रि हो, तुम जाते-जाते रुक जाना, अन्यथा मेरे मधुर स्वप्न समाप्त हो जायंगे और मुझे दिन के कठोर कार्य करने पड़ेंगे। हाँ, यदि तुम जाना ही चाहते हो तो कुछ क्षणों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए ठहर जाओ। (मैं जानता हूं कि) इस छाया-पथ (संसार) में कहीं विश्राम नहीं है, व्यक्ति को निरन्तर चलते रहना पड़ता है। (तुम्हारे चले जाने पर मेरे अनुराग में तनिक भी अन्तर नहीं पड़ेगा) तुम मेरे अनुराग को आकाश के अभिनव (प्रेरणादायक) कलरव में प्रसरित होने दो। (मेरे जीवन के) सूनेपन के अन्धकार में तुम कभी प्रकाश बनकर (अवश्य) उपस्थित हो जाना।

कवि अपने प्रियतम से अनुनय करता हुआ कहता है कि तुम चन्द्रमा के समान अत्यधिक सुन्दर हो। मैं तुम्हारे रूप-सौन्दर्य का पान करना चाहता हूँ। तुम यदि अपनी अनिन्द्य कांति मुझे नहीं दिखाना चाहते, तो कम-से-कम हिमकिरणों की वर्षा अवश्य करना, जिससे मेरा शरीर जड़ीभूत हो जाय— मैं सुख-दुःख तथा आशा-निराशा का अनुभव भी न कर सकूँ। तुम मेरे जीवन की सुखप्रद रात्रि हो। अतः मेरी कामना है कि यह सुखद रात्रि बनी रहे। रात्रि में ही व्यक्ति नाना प्रकार के मधुर स्वप्न देखा करता है, दिन का उदय होते ही फिर से जीवन के कठोर सत्य सामने आ जाते हैं। व्यक्ति को फिर से कार्यशील होना पड़ता है। अतः 'मेरे जीवन के सुख निशीथ' प्रयोग अत्यन्त सार्थक है।

कवि आशावादी है। उसका कथन है कि जीवन एक सत्य है। जीवन में सुखोपभोग का भी अपना महत्त्व होता है। अतः हे प्रिय ! तुम कुछ देर मिलन-सुख पाने के बाद चले जाना। यह मुझे विदित है कि संसार एक ऐसा मार्ग है, जहाँ 'विश्राम' नाम की कोई वस्तु नहीं है। तुम्हारे चले जाने पर भी तुम्हारे प्रति मेरे प्रेम में तनिक भी अन्तर नहीं पड़ेगा। जिस प्रकार उषाकालीन वेला में आकाशमण्डल में चारों ओर अरुणिमा छा जाती है तथा पक्षिगण अपने कलरव द्वारा समग्र वातावरण में जागरण एवं स्फूर्ति का स्वर भर देते हैं, उसी प्रकार मेरा प्रेम काव्य के रूप में समग्र संसार को नवजागरण एवं नवस्फूर्ति प्रदान करेगा। मेरा प्रेम सृष्टि के कण-कण को परिव्याप्त कर लेगा। तुम से मेरा इतना ही अनुरोध है कि यदि मेरे जीवन में कभी अज्ञान एवं निराशा का अन्धकार छा जाय, तो तुम प्रकाश-किरण के रूप में उपस्थित होकर मुझे ज्ञान एवं आशा प्रदान करना, जिससे मैं जीवन और जगत् की समस्याओं का सरलतापूर्वक सामना कर सकूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—१. कवि ने यहाँ अपने प्रेम का उदात्तीकरण किया है।

२. 'शशि-सी वर सुन्दर रूप विभा', 'संसार स्वप्न बनकर दिन-सा' में उपमा का सौन्दर्य है। 'मेरे जीवन के सुख निशीथ' साभिप्राय विशेषण है, अतः यहाँ परिकर अलंकार माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त—

'मेरा अनुराग फैलने दो
नभ के अभिनव कलरव में'

पंक्तियों में श्लेष का चमत्कार अवलोकनीय है। 'अनुराग' 'नभ' तथा 'अभिनव कलरव' पद श्लिष्ट हैं। इनमें से प्रत्येक के दो-दो अर्थ हैं और कवि को वे दोनों अर्थ अभीष्ट हैं—

अनुराग—उषा की लालिमा, प्रेम।

नभ—आकाशमण्डल, संसार (अनंत)।

अभिनव कलरव—पक्षियों का नवीन कलरव, काव्य का प्रेरणाप्रद स्वर।

३. संसार निरन्तर गतिशील है। संसरणशीलता के कारण ही उसे 'संसार' कहते हैं--'संसरति इति संसार'। 'जगत्' भी इसीलिए कहते हैं क्योंकि 'गच्छति इति जगत्'। एक पाश्चात्य दार्शनिक ने भी निम्न पंक्ति में यही भाव कहा है—This world is a bridge —pass thou over it, build not upon it.'

अर्थात् यह संसार एक पुल के समान है, इस पर घर बनाकर नहीं रहना चाहिए, यह तो केवल पार उतरने का सोपानमात्र है। अतएव कवि 'प्रसाद' ने कहा --

छाया-पथ में विश्राम नहीं,
है केवल चलते जाना।

२५. अरे आ गई है भूली-सी !

परिचय—कवि 'प्रसाद' ने जीवन और जगत की वास्तविकता से कभी मुंह नहीं मोड़ा। यद्यपि जीवन, यौवन तथा सुख क्षणिक होते हैं, तथापि ये त्याज्य नहीं हैं। इनका अपना विशेष महत्व है। यौवन की सीमित घड़ियों में जो उसका आनन्द नहीं लूटता, सुखोपभोग नहीं करता, वह मन्दबुद्धि है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यौवन रूपी वसन्त ऋतु मानो भूलकर ही जीवन में आती है। अतः इस अवसर पर प्रियतम के साथ उन्मुक्त भाव से मिलन-सुख उपलब्ध करने में ही बुद्धिमत्ता है। इस प्रकार प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने अत्यन्त मनोवैज्ञानिक दृष्टि से हार्दिक भावनाओं का सूक्ष्म निरूपण किया है।

अरे आ गई····· ····· ···· ····· ···तिनको।

मेरे जीवन में बसंत भूलकर दो दिन के लिए (अत्यन्त सीमित अवधि के लिए) आ गयी है। अतः, क्यों न मैं एक छोटी-सी कुटिया बना दूँ, बाद में तो (प्रिय-वियोग की) एक नवीन व्यथा ही मेरा साथ देगी। नीचे पृथ्वी हो और ऊपर आकाश हो तथा हमारा नीड़ सबसे अलग हो। चिरकाल से मेरे (जीवन रूपी) पतझड़ में विद्यमान सूखे तिनके (दुःख) अब भाग जायं।

कवि के जीवन में सदा निराशा एवं विषाद का ही प्राधान्य रहा। वह कभी प्रिय-मिलन-सुख के आनन्द का उपभोग न कर सका, किन्तु कुछ क्षणों के लिए अनजाने में उसका प्रियतम आ गया है। न जाने कब वह पृथक हो जाय। अतः वह कहता है कि मेरे दुःखी जीवन में अत्यन्त सीमित क्षणों के लिए सुख का उदय हुआ है, अतः क्यों न उसके ठहराने के लिए मैं एक छोटी-सी कुटिया का निर्माण कर दूँ। (छोटी-सी कुटिया ही पर्याप्त होगी, भव्य प्रासाद की आवश्यकता नहीं। कारण, प्रिय तो कुछ ही क्षणों के बाद विलग हो जायगा।) कवि इन सीमित क्षणों के सुख का पूर्ण उपभोग करना चाहता है। अतः वह नहीं चाहता कि उन दोनों के मध्य कोई किसी प्रकार की बाधा उपस्थित करे। उन दोनों का नीड़ सबसे अलग हो, जिससे वे उन्मुक्त रूप से मिलन-सुख का आनन्द ले सकें। वस्तुतः, कवि के जीवन में विषाद और निराशा की ही प्रधानता रही है। चिरकाल से उसका जीवन पतझड़ ऋतु के समान अपना रूप-वैभव खोये था। अब सुखपूर्ण दिनों का उदय होने के कारण वह उन दुःखों को भागने की चुनौती देता है।

विशेष—१. 'व्यथा' को 'साथिन' कहकर उसका मानवीकरण किया गया है। प्रियतम के वियोग में व्यथा ही प्रेमी का साथ देती है।

२. 'मधु-ऋतु' तथा 'पतझड़' का प्रयोग 'सुखी' एवं 'दुःखी' जीवन के प्रतीक रूप में किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. प्रेम-क्षेत्र में प्रियतम और प्रेमी के एकांत-मिलन की मांग सर्वथा स्वाभाविक है। तभी तो कहा है —

वसुधा नीचे ऊपर नभ हो,
नीड़ अलग सबसे हो।
आशा से.....नलिन को।

(अब तो मेरे मन में) आशा के अंकुर प्रस्फुटित होंगे। तथा नये-नये पत्र-पल्लव पुलकित होंगे। हरे कोमल पत्तों से निर्मित (मेरा) यह छोटा सा संसार भला किसको दुःख देगा! सिहरन भरी मलय-समीर की लहरें नेत्रों का चुम्बन करके मेरे मन रूपी कमल को जगा देंगी (विकसित कर देंगी)।

वसन्त आने पर चारो ओर आशा एवं हर्ष का संचार हो जाता है। अतः कवि कहता है कि अब तो मेरे मन में आशा का संचार होगा। उद्यानों में विकसित पुष्पों एवं लतिकाओं की भाँति मेरे हृदय में नवीन-नवीन आशा-आकांक्षाओं का उदय होगा। मेरा लघु नीड़ (भव) हरे-हरे कोमल मधुर पत्तों से निर्मित होगा। उसमें सुख, शांति एवं चहल-पहल का साम्राज्य होगा। मेरे इस लघु-संसार को देखकर कौन ईर्ष्या करेगा? ईर्ष्या तो तब की जाय यदि मेरा यह संसार धन-धान्य-सम्पन्न हो, हास-विलास-परिपूर्ण हो, नाना प्रकार के प्रसाधनों को लिए हो, जब मेरा संसार अत्यन्त लघु एवं साधारण है तब भला कौन ईर्ष्यानुभव करेगा? (कवि अपने सुख में दूसरों को दुःख पहुंचाने की कल्पना भी नहीं कर सकता।)

आलिंगन और चुम्बन का विलासपूर्ण चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि कहता है कि प्रियतम के मिलन होने पर हम दोनों मधुर आलिङ्गन-पाश में आबद्ध हो जायंगे। प्रियतम के गहरे एवं सुगन्धित निश्वास मेरे मुख पर पड़कर मलय-समीर की-सी शीतलता प्रदान करेंगे। जब प्रिय मेरा चुम्बन लेंगे तो मेरा हृदय ठीक उसी प्रकार विकसित हो जायगा, जिस प्रकार सूर्य की रक्तिम किरणों के पड़ते ही कमल विकसित हो जाता है।

विशेष—परिरम्भण एवं केलि-क्रीड़ा से सम्बद्ध होने पर भी चित्र की अश्लीलता पर शब्दावली की सुन्दरता ने आवरण डाल दिया है।

२. 'मानस नयन नलिन' में रूपक तथा छेकानुप्रास की छटा द्रष्टव्य है। 'पल्लव पुलकित' में भी छेकानुप्रास है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. 'मलयानिल' का प्रयोग अत्यन्त सार्थक है। मलयानिल के तीन गुण हैं – शीतलता, मंदता तथा सौरभपूर्णता। प्रिया के निश्वास भी प्रेमी को शीतल, मन्द एवं सौरभपूर्ण प्रतीत होते हैं।

४. इन पंक्तियों में कवि स्पष्टतः निराशावाद से आशावाद की ओर अग्रसर दिखाई देता है। 'आँसू' में वह कहता है—

सोयेगी कभी न वैसे, फिर मिलन कुंज में मेरे
चाँदनी शिथिल अलसाई, सुख के सपनों से मेरे।

किन्तु 'लहर' में वह प्रेम-मार्ग पर प्रगति करता है और उसे विश्वास है कि 'महामिलन' होगा, जो शाश्वत एवं अनन्त होगा।

जवा कुसुम.....तुहिन को।

(प्रियतम के आने पर मेरे जीवन की) पूर्व दिशा में रक्त-कुसुम की भांति उषा (अनुराग की अरुणिमा) विकसित (विकीर्ण) होगी। (उनकी सुहावनी) हँसी से युक्त लाल अधरों के राग (अनुराग) से मेरा संपूर्ण दिन (मुख-मण्डल) रंजित हो जायगा। (प्रिय के मुख रूपी) चन्द्र की (शीतल) किरणें मेरे (निराशा रूपी) अन्धकार के समुद्र को लांघ जायंगी (नष्ट कर देंगी)। आकाश रात्रि में (जिस प्रकार पृथ्वी पर) मधुर ओसकणों का दान करता है (उसी प्रकार मेरा प्रिय भी प्रेम-रस का मधुर दान करेगा)।

विशेष—प्रथम पंक्ति में उपमालंकार है। 'उषा' तथा 'राग' शब्द श्लिष्ट हैं। 'उषा' के अर्थ हैं—प्रभातकालीन लालिमा तथा अनुराग की अरुणिमा; 'राग' के अर्थ हैं—लालिमा तथा अनुराग।

इस एकांत.....इनको।

(मेरे) इस एकांत मिलन में कोई किसी प्रकार की बाधा मत डाले। (मेरे पास) जो कुछ सुंदर है, वह (मुझे) प्रियतम को सौंप देना है।

विशेष—कवि इस संसार से अलग अपना एकाकी संसार बनाना चाहता है। वह अपने और प्रियतम के मध्य किसी तीसरे की उपस्थिति नहीं चाहता। वह अपना सर्वस्व प्रिय को समर्पित कर देना चाहता है। आत्म-समर्पण की बात वह पहले भी कई स्थलों पर कह चुका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६. निधरक तूने ठुकराया तब !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि ने प्रिय की निष्ठुरता पर आक्षेप किया है। जब कवि के हृदय में प्रिय के प्रति अत्यधिक अनुराग था, तब प्रिय ने उसे प्रवंचित किया। फलतः जीवन भर कवि निराश एवं दुखी रहा। अतीत की स्मृतियाँ बार-बार उसके मानस-पटल पर ताजी हो जाती हैं, जिससे उसकी हृदय-तन्त्री निनादित हो उठती है। प्रस्तुत प्रगीत में उसके व्यक्तिगत जीवन की अच्छी झलक मिल जाती है।

निधरक तूने.....हरियाली को।

हे निष्ठुर ! तूने मेरी टूटी-फूटी कोमल प्याली को ठुकरा दिया, जब कि उसके सूखे अधर तेरे चरणों की लालिमा (चूम लेने) के आकांक्षी हैं। जीवन-रस के अवशिष्ट कण संपूर्ण वातावरण में अश्रु बनकर बिखर गये हैं, जिनसे वसुधा पर वैसी हरियाली छा गयी है जैसी कि सावन की घटाओं के छा जाने पर दिखाई पड़ती है।

कवि अपने प्रियतम को उपालम्भ देते हुए कहता है कि ऐ निष्ठुर ! तूने मेरे कोमल भग्न हृदय को अपनी क्रूरता द्वारा ठुकरा दिया। मेरे नीरस हृदय रूपी प्याले के अधर तेरे चरणों के अनुराग के इच्छुक हैं। प्याले में जिस प्रकार लाल मदिरा अत्यधिक शोभा देती है, उसी प्रकार मेरे हृदय में तुम्हारे अनुराग की अरुणिमा अत्यधिक शोभा दे। तूने अपने निष्ठुरतापूर्ण व्यवहार द्वारा मेरे जीवन को नीरस बना दिया, किन्तु फिर भी जो थोड़े बहुत प्रेम-रस-कण शेष हैं, उन्हें मैं अपनी अश्रुधारा के रूप में बहा रहा हूँ। तेरे प्रति मेरे कोमल-मधुर भाव अश्रुओं के रूप में व्यक्त हो रहे हैं। मेरे ये अश्रु समग्र वायुमण्डल में व्याप्त हो गये हैं। यही भापरूप होकर बादल बने तथा सावन की घटाओं के रूप में बरस पड़े। इन अश्रुओं ने ही वस्तुतः अपनी झड़ी द्वारा समूचे भूमण्डल को हरियाली से ओत-प्रोत कर दिया है।

विशेष—१. कवि ने प्रतीकात्मक शैली का सुन्दर प्रयोग किया है। 'टूटी मृदु प्याली' कवि के भग्नहृदय का प्रतीक है।

२. कवि पर फारसी शैली का प्रभाव अत्यन्त स्पष्ट है।

३. वर्षा पर कवि की उद्भावना अनूठी है—

वही दे रहा था सावन घन—
वसुधा की इस हरियाली को।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदय हृदय.....डाली को ?

मेरे हृदय में यह कैसी हूक उठी है ? क्या कोई विगत भूल पीड़ा रूप में जागृत हो उठी है ? सूखी डाली को (अपनी मधुर स्वर लहरी द्वारा) झंकृत करने के लिए क्या कसक रूप में (कोयल) कूक उठी है ?

कवि को विगत दिनों की स्मृति हो आती है, अतः उसका कथन है कि मैंने जो कुछ भूल की थी, वही आज पीड़ा बनकर मेरे सामने आ रही है। जिस प्रकार पतझड़ में शुष्क डाली पर कभी-कभी कोयल अपनी मधुर स्वर-लहरी द्वारा वातावरण को झंकृत कर देती है, उसी प्रकार कवि के भग्न हृदय में कभी-कभी अतीत की सुखद स्मृतियाँ अपनी उपस्थिति द्वारा रस का संचार कर देती हैं। वह अपने अतीत की स्मृतियों को याद कर-कर मधुर पीड़ा का अनुभव करता है।

विशेष -- निष्ठुर प्रियतम से प्रेम करने को कवि अन्यत्र भी दुर्बलता (भूल) कह चुका है—

तब भी कहते हो—कह डालूं
दुर्बलता अपनी बीती !
तुम सुन कर सुख पाओगे,
देखोगे—यह गागर रीती ।

\+ + +

यह विडम्बना ! अरी सरलते !
तेरी हँसी उड़ाऊं मैं ।
भूलें अपनी, या प्रवञ्चना
औरों की दिखलाऊं मैं ।

प्राणों के.....वाली को ।

रे मतवाले ! तुम प्राणों के प्यासे हो तथा तूफान की भांति चलने वाले हो। विस्मृति के प्याले (तेरे घावों को) भर देंगे। तू मिटने वाली 'कृति' का कोई सोच मत कर।

कवि अपने मन को समझाते हुए कहता है कि तुझे प्राणों का क्या मोह —

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तू तीव्र झंझावात की भाँति जीवन के मार्ग पर अग्रसर होता चल। तेरे असफल प्रेम की निराशा और विषाद के घावों को विस्मृति धीरे-धीरे भर देगी। तेरे प्राण यद्यपि प्रियतम की प्रेम-मदिरा का रसपान करना चाहते थे, किन्तु अब तुम प्रेम के स्थान पर विस्मृति की मदिरा का पान करके सब कुछ भूल जाओ। मिटने वाली 'कृति' की याद करके निराशाकुल होने की कोई आवश्यकता नहीं। जिस मधुमय एवं रससिक्त प्रेम-लोक की तूने रचना अथवा कल्पना की थी, वह क्षणिक एवं नश्वर था। अतः उसके नष्ट होने की स्मृति करके विकल होना व्यर्थ है। प्रेम-क्षेत्र में तो दुःख का ही आधिक्य होता है, सुख के क्षण अत्यन्त सीमित एवं लघु होते हैं।

विशेष—१. विस्मृति घावों को भर देती है—यह बात प्रसाद ने 'कामायनी' के चिन्ताकुल मनु के मुख से भी कहलवायी है—

> **विस्मृति आ, अवसाद घेर ले**
> **नीरवते ! बस चुप कर दे,**
> **चेतनता चल जा, जड़ता से**
> **आज शून्य मेरा भर दे।**

—चिन्ता सर्ग

२. संगीतात्मकता का तत्त्व पर्याप्त मात्रा में व्याप्त है।

२७. ओ री मानस की गहराई !

परिचय—कवि 'प्रसाद' एक ओर प्रेमी हैं, तो दूसरी ओर एक अच्छे दार्शनिक। साधना-पथ पर अग्रसर होते-होते वे संयम और दर्शन का आश्रय ग्रहण कर असफल प्रेमजन्य निराशा एवं विषाद का परित्यागकर अपने मन की गहराई को सम्बोधित करते हैं तथा निर्माण-कार्य में लीन होने की कामना व्यक्त करते हैं। वे अपनी अक्षय-शक्ति एवं बुद्धि को पहचानकर आत्म-गौरव की भावना से भर जाते हैं।

ओ री मानस.....परछाईं।

ओ मन की गम्भीरता, तू वायुरहित (वातावरण में) जल भरे मेघ के समान अपने में ही लीन, शांत और शीतल है। तू नवीन दर्पण के समान शुद्ध तथा नीलमणि के समान पारदर्शिका है। (अब तुझमें इतनी शक्ति है कि) यह चिरचंचल विश्व तेरी परछाईं बन गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवि अपने गम्भीर हृदय को सम्बोधित करते हुए कहता है कि ऐ मेरे गम्भीर हृदय ! तू कितना शान्त एवं सहिष्णु है। तुझ पर न जाने कितनी आपदाओं के झंझावात आये किन्तु तुझ में किसी प्रकार की अस्थिरता नहीं आई। जिस प्रकार वायु के न होने पर जलभरा मेघ अत्यन्त शान्त एवं शीतल होता है, उसी प्रकार भावना के झंझावात के अभाव में प्रेम-जल-परिपूर्ण तू शान्त एवं शीतल है। जिस प्रकार नीलमणि अत्यन्त पवित्र एवं पारदर्शी होती है, उसी प्रकार तू भी अत्यन्त पवित्र एवं सूक्ष्मदर्शी हो गया है। अब तुझमें एक विशेष प्रकार की चैतन्य-शक्ति आ गयी है, तुझमें समग्र विश्व समा सकता है। तू इतना विराट् एवं असीम है कि विश्व तेरी परछाईं-मात्र दीखता है।

विशेष—कवि ने गम्भीर हृदय के लिए अत्यन्त सार्थक विशेषणों का प्रयोग किया है। साधना-मार्ग पर चलकर साधक के हृदय में पवित्रता आ जाती है। राग-द्वेष, स्वार्थ, ईर्ष्या आदि दुर्भाव नष्ट हो जाते हैं।

तेरा विषाद··· ·····सुधराई !

तेरा विषाद अब तरलता (पवित्रता) के लिए है। विषपान की भांति वह मूर्छित करने वाला नहीं है (जीवन-शक्ति देने वाला है)। तू सरल, सुन्दर एवं लघु सुख की लहरों को उठा। तू जीवन की सुन्दरता पर प्रसन्न हो।

कवि अपने गम्भीर हृदय को सम्बोधित करते हुए कहता है कि हे गम्भीर हृदय ! अतीत के सरस दिनों की स्मृति आने पर निश्चय ही मुझे विषाद होता है, किन्तु यह विषाद हँसाता है, रुलाता नहीं। विषपान पर व्यक्ति मूर्छित हो जाता है और कभी मर भी जाता है। किन्तु मेरे लिए यह विषाद न तो मूर्छाकारी सिद्ध होता है और न मृत्युकारी। ऐ मेरे हृदय ! तू अब दुःख त्यागकर सुख का अनुभव कर। हृदय-सागर की लघु, सरल एवं सुन्दर सुख रूपी लहरों में स्वयं को वहा दे। प्रसन्न मन से हँस पड़।

विशेष—वर्ण-विन्यास अत्यन्त कोमल एवं मधुर है। अनुप्रास की छटा बिखरी पड़ी है।

हंस·····राका आई।

तुम हंसो, जिससे (आकाश के) नक्षत्रगण झिलमिलाने लगें, कुंजों के समस्त पुष्प विकसित हो उठें, (उद्यान तथा उपवन में चारों ओर) मधुरस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कण बिखर जायं। (तुम्हारे) इन कणों (के समन्वय) से ही सृष्टि का नवनिर्माण हो। सब यही कह उठें कि चाँदनी भरी पूनम रात्रि आ गई है। (तुम्हारे सुखी होने से समग्र संसार सुखी हो तथा तुम्हारा स्वागत करे।)

हँस ले ....उतराई।

ऐ मेरे हृदय! तू निरन्तर हंस, भय, शोक, प्रेम तथा संघर्ष तो जीवन में आते ही रहते हैं। तू मृत्यु के काले पट को छोड़कर भी हँस ले। तेरे जीवन का लघु-लघु क्षण भी प्रसन्न हो। अपने चुम्बन के मधुकण देकर तू अतीत के नाविक को (पार उतरने की) उतराई दे।

जीवन में कभी विषम परिस्थितियाँ आती हैं और कभी सम। कवि अपने हृदय को इस सत्य से परिचित कराकर साहस एवं स्फूर्ति बटोरने को कहता है। वीर वही है, जो विषाद एवं आपदा में भी प्रसन्न रहे, सदा प्रसन्न रहना जीवन का प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए। अतः ऐ हृदया! तू निराशाओं के विगत जीवन से अब आध्यात्मिक-प्रेम की ओर अग्रसर हो रहा है, अतः तुझे नाविक को किराया देना है। यह अश्रु रूप दुःख न हो, वरन मधुकण रूप सुख हो। विदा के समय दुःख की अपेक्षा सुख का अनुभव कर तथा अध्यात्म के नये संसार में आनन्दपूर्वक पदार्पण कर।

विशेष—१. कवि ने अपनी मानसिक भावनाओं का विवेचन दार्शनिकता-पूर्ण शैली में सफलतापूर्वक किया है।

२. वर्ण-विन्यास अत्यन्त मधुर तथा अनुप्रास-सौन्दर्य से परिपूर्ण है।

३. 'अतीत' का मानवीकरण किया गया है।

२८. मधुर माधवी सन्ध्या में!

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत में कवि का आन्तरिक द्वन्द्व व्यक्त हुआ है। कवि अपने अतीत को जितना भुलाना चाहता है, वह उतना ही अधिक स्पष्ट होकर उसे सन्तप्त करता है। सन्ध्या का अस्तमान सूर्य, मन्द समीर, कोकिला की मधुर स्वर-लहरी आदि तत्व उसे आकुल-व्याकुल करते हैं। अतीत की स्मृति की सन्ध्या के आगमन पर उसका हृदय रूपी कमल मुरझाने लगता है।

मधुर माधवी.....हो जाती है।

अत्यन्त मधुर वासंती सन्ध्या में जब राग से अरुण सूर्य अस्त होता है, कोमल पत्तियों से भरी हुई (वृक्षों की) डालियाँ मंद-समीर (के झोंकों) से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झूलने लगती हैं, प्यार भरे नीलाकाश में जब कोकिल की अधीर कूक नृत्य करते-करते शिथिल हो जाती है तथा वायु उसे वहन (प्रसारित) करने लगती है, तब तू अपनी आँखों को सजल कर आकुल-व्याकुल होकर किसी के भी पास न होने की इच्छा क्यों करता है? रे प्रवंचित मन! अतीत की किस कल्पना के कारण तू इतना दुःखी है? क्या तू किसी के नेत्रों की श्यामल रजनी में कुछ क्षणों के लिए विश्राम कर चुका है? क्या उन्हीं स्मृति-किरणों के टूटे तार फिर से झंकृत होकर शून्य आकाश (सूने हृदय) में अपनी स्वर लहरी का असीम मधु फैला देते हैं? जब तारकगणों के प्रकाश की किरणें (भूमण्डल पर) क्रीड़ा करने लगती हैं, तब तू सन्ध्या-आगमन के कारण कमलों की भांति मुकुलित (उदास) क्यों हो जाता है।

अत्यन्त स्निग्ध वासन्ती सन्ध्या में समय अत्यन्त मनोरम एवं शाँतिप्रद होता है। लालिमा भरा सूर्य अस्ताचल की ओर गमन करता है। वृक्षों की कोमल पत्तियाँ एवं शाखाएं हिलने लगती हैं, ऐसा प्रतीत होता है मानो मंद-मंद समीर उनसे उलझ गया हो। कोकिला अपनी मधुर स्वर लहरी-द्वारा सम्पूर्ण वातावरण को गुंजित कर देती है। उसकी कूक में हृदय की अधीरता व्यक्त होती है। जिस प्रकार नर्तकी नृत्य करते-करते शिथिल होकर गिरने लगती है, उसी प्रकार कोयल की कूक का प्रसारण तीव्र गति से होता है, किन्तु धीरे-धीरे उसमें मंदता आ जाती है। ऐसी स्थिति में कवि का मन आकुल-व्याकुल होकर अश्रु वर्षण करने लगता है तथा सर्वथा एकांत में रहने की कामना करता है। कवि अपने मन से प्रश्न करता है—ऐ प्रवंचित एवं प्रताड़ित मन! अतीत की कौन-सी मधुर-स्मृति तेरी विकलता का कारण बनी है। तूने अवश्य किसी के नयनों की मादकता में मस्त होकर कुछ क्षणों के लिए हर्षोल्लास प्राप्त किया होगा, किसी की प्रेम-मदिरा का पान किया होगा, जिसकी स्मृति आज तुझे पागल बना रही है। वे रसभरे क्षण यद्यपि अब अतीत के गर्भ में विलीन हो चुके हैं, किन्तु उनकी स्मृति अब भी तेरी हृदय-वीणा के टूटे तारों को झंकृत कर देती है। तुझे विगत घटनाएं स्मरण हो आती हैं। फलतः तू व्यथित हो उठता है। जैसे वीणा के टूटे तारों की मधुर स्वर-लहरी सम्पूर्ण आकाश-मण्डल में व्याप्त हो जाती है, उसी प्रकार उन विगत स्मृतियों से उत्पन्न वेदना तेरे सूने हृदय को आक्रांत कर लेती है। रात्रि के आगमन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय आकाशमण्डल में तारक समुदाय की शीतल किरणें समस्त भूमण्डल को आलोकित करने लगती हैं, किन्तु तू उसी प्रकार मलिन एवं उदास हो जाता है, जिस प्रकार कमल का पुष्प सूर्यास्त होने पर।

विशेष—१. कवि ने प्रस्तुत प्रगीत में सन्ध्याकालीन वातावरण का अत्यंत भावात्मक वर्णन किया है। उसने सन्ध्या के अस्ताचलगामी सूर्य, मंद-समीर एवं कोयल के मधुर स्वर को लाक्षणिकता के आवरण में सजाकर प्रस्तुत किया है। प्रकृति उद्दीपक रूप में चित्रित हुई है। विरह की स्मृति-दशा का सुन्दर चित्रांकन हुआ है।

२. यह एक तथ्य है कि संयोग की बेला में जो उपकरण आनन्द प्रदान करते हैं, वही वियोग की घड़ियों में असह्य वेदना का कारण बनते हैं। प्रस्तुत प्रगीत में कवि विरह की स्थिति में है। अतः उसे कोकिल का स्वर भी अधीर जान पड़ता है। कविवर आलम के निम्न सवैये में भी यही भाव मिलता है—

जा थल कीन्हें बिहार अनेकन,
ता थल काँकरी बैठ चुन्यो करैं।
जा रसना सों कही रस बातन,
ता रसना सों चरित्र गुन्यो करैं।
आलम जौन से कुंजन में करी केलि
तहाँ अब सीस धुन्यो करैं।
नैनन में जो सदा रहते, तिने
कान्ह की कान कहानी सुन्यों करैं।

इस दृष्टि से सूरदास का निम्न पद भी भाव-साम्य रखता है—

बिनु गोपाल बैरिन भईं कुंजें।
तब ये लता लगति अति सीतल अब भईं विषम ज्वाल की पुंजें।
बृथा बहति जमुना, खग बोलत, बृथा कमल फूलें अलि गुंजें।
... ...
'सूरदास' प्रभु को मग जोवत, अंखियाँ भईं बरन ज्यों गुंजें।

३. मधुरस के कवि 'प्रसाद' के प्रिय शब्द—मधुर, माधवी, रागारुण, मृदुल, मधु, समीर, श्यामल-अम्बर आदि—इसी प्रगीत में बिखरे पड़े हैं। 'मधुर माधवी', 'रागारुण रवि' 'कोकिल की कूक अधीर' तथा 'नयन की नील निशा' में अनुप्रास का सौन्दर्य द्रष्टव्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९. अंतरिक्ष में अभी सो रही है ऊषा मधुबाला !

परिचय—प्रस्तुत प्रगीत अत्यन्त मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है। कवि ने स्वयं को एक प्रेम-भिखारी के रूप में चित्रित किया है। उसका करुण स्वर चारों ओर गूंजता हुआ रह जाता है। अपने अतृप्त हृदय को उन्मुक्त रूप में व्यक्त कर वह संतोष-लाभ करता है।

अन्तरिक्ष में.....टूटा प्याला।

आकाश में अभी उषा रूपी मधुबाला सो रही है। पूर्व दिशा की मधुशाला भी अभी बन्द है। ताराओं की किरणें सो रही हैं तथा मलय-समीर रोमांचित एवं पुलकित हो रहा है। कोमल शरीर वाले पक्षीगण आलस्य के कारण (अपने-अपने) नीड़ों में अँगड़ाई ले रहे हैं। रजनी-रानी की श्लथमाला के फूल (उनींदे नक्षत्रों के रूप में) इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। (ऐसी स्थिति में) भिखारी अपना टूटा-फूटा प्याला लेकर (प्रेम-भिक्षा के लिए) चल पड़ा है।

आकाश में अभी उषा का उदय नहीं हुआ है। पूर्व दिशा में किसी प्रकार की लालिमा व्याप्त नहीं है। चारों ओर आलस्य एवं जड़ता छायी है। वायु स्तब्ध है, मानो निद्राग्रस्त है। पक्षी अलसाये नेत्रों से अपने-अपने नीड़ों में बैठे हैं, आकाश में अपनी उड़ानें नहीं भर रहे। तारे झिलमिला रहे हैं, उनकी कांति अवश्य मंद पड़ गई है। कवि अपना भग्न-हृदय रूपी प्याला लेकर इसी वेला में प्रेम-भिक्षा के लिए निकल पड़ा है।

विशेष—१. कवि ने मधुशाला एवं मधुबाला का रूपक बाँधकर उषाकाल के पूर्व समय का सुन्दर चित्र खींचा है। उस पर अपने युग के 'हालावाद' की छाप लक्षित होती है।

२. कवि ने 'उषा', 'तारक किरन', 'मलय-समीर' तथा 'रजनी' का मानवीकरण किया है। उसकी उद्भावनाएं अत्यन्त उत्कृष्ट हैं।

३. 'भिखारी' तथा 'टटा प्याला' पद क्रमशः कवि के 'व्यक्ति' तथा 'भग्न-हृदय' के प्रतीक बनकर आये हैं।

गूँज उठी.....सुख का सपना।

(रे भिखारी !) तेरी पुकार—"कुछ मुझको भी दे दो, मैं केवल कुछ ही वैभव-कण (प्रेम-कण) प्राप्त करना चाहता हूं, किन्तु तुम्हारा यश हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायगा'' (चारो ओर) गूँज उठी है। तू दुःख-सुख दोनों के डग भरते हुए जीवन-पथ पर बढ़ रहा है। (तुझे भय है कि कहीं) जीवन-पथ पर चलते-चलते रात्रि समाप्त न हो जाय, अतः हे अकिंचन ! तू अपना करुण स्वर छोड़ता हुआ आगे बढ़ता जा रहा है। सुप्त ससार जरा जागकर अपने सुख का स्वप्न तो देखे।

प्रेम-भिखारी कवि केवल प्रेम के कुछ कण प्राप्त करने का इच्छुक है। अतः वह 'प्रेम-प्रेम' की रट लगाये निरन्तर आगे बढ़ रहा है। वह सुख और दुःख दोनों का अनुभव करते हुए जीवन-यात्रा पर अग्रसर है। उसे भय है कि कहीं चलते-चलते उसके जीवन की सीमित अवधि समाप्त न हो जाय और वह अपनी लक्ष्य-पूर्त्ति न कर पाये। अतः, वह अपना करुणा भरा स्वर वातावरण में छोड़ते हुए निरन्तर बढ़ता जा रहा है। सांसारिक प्राणी अभी निद्रालीन हैं। उन्हें उस दीन-हीन का कुछ भी ध्यान नहीं। जागृतावस्था में आने पर ही वे वास्तविक स्थिति से परिचित हो सकेंगे। तभी उन्हें यह भी अवबोध होगा कि जिस सुख में वे निमग्न थे, वह वास्तव में स्वप्न-तुल्य, मिथ्या तथा अस्थायी था।

विशेष—इन पंक्तियों में कवि के हृदय की मर्म-व्यथा मुखर हो उठी है।

३०. अशोक की चिन्ता

परिचय—अशोक ने अपने शासनारम्भ के लगभग दस वर्ष बाद कलिंग पर चढ़ाई की। इस युद्ध में यद्यपि उसे विजय प्राप्त हुई, किन्तु युद्ध में हुए नाश एवं हानि से उसका हृदय दहल उठा। युद्ध में कुछ ऐसी घटनाएँ घटित हुईं, जिनकी मार्मिकता ने उसके चरित्र का कायाकल्प कर दिया। फलतः वह क्रूरता के स्थान पर दया तथा हिंसा के स्थान पर अहिंसा का आश्रय लेता है। उसके मन में क्षणभंगुर जीवन के प्रति अनास्था उदित होती है। प्रस्तुत कविता में 'प्रसाद' ने उसके हृदय की इसी विरक्ति एवं उदासीनता को व्यक्त किया है।

जलता है.....उमंग ?

(जीवन की निस्सारता के विषय में कवि का कथन है कि) जीवन-रूपी पतंग जलता है। यह जीवन अत्यन्त क्षणिक है। (समस्त मनुष्य) लघु-लघु पतंगों के पुँज-सदृश हैं। (मादक यौवनकाल से उत्पन्न तथा पार्थिव उप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लब्धियों की ओर उन्मुख करने वाली) तृष्णा अग्नि की शिखा बनती है। अतः जलने की उमंग उठना स्वाभाविक है।

मानव-जीवन अत्यन्त क्षणिक एवं निस्सार है। उसकी स्थिति तो वस्तुतः उस शलभ के समान है, जो दीपशिखा के घातक आकर्षण से आकृष्ट होकर अपने प्राणों का होम कर डालता है। स्वर्णिम परिणामों के सुखद कल्पना-चित्र नेत्रों के समक्ष प्रस्तुत करके तृष्णा मानव को प्रतिस्पर्द्धा एवं द्वेष के उस पथ पर अग्रसर कर देती है, जहाँ संघर्ष ही जीवन है। तृष्णाग्रस्त मानव परमार्थ का मूल्य चुका कर स्वार्थ-साधन का प्रयास करता है, परन्तु इस प्रकार भौतिक उपलब्धियों की मृग-मरीचिका की ओर बढ़ता हुआ वह वस्तुतः आत्म-विनाश की ओर ही चला जाता है।

विशेष—१. 'जीवन-पतंग' में रूपक अलंकार है।

२. जीवन की निस्सारता एवं क्षणिकता के विषय में हिन्दी और संस्कृत के अनेक अन्य कवियों ने भी ऐसे भाव व्यक्त किये हैं—

(क) "कितना अस्थिर है संसार"

— महादेवी वर्मा

(ख) खोलता इधर जन्म लोचन,
मूँदती उधर मृत्यु, क्षण-क्षण;
अभी उत्सव औ' हास हुलास,
अभी अवसाद, अश्रु, उच्छ्वास !

\+ + +

हाय री दुर्बल भ्रांति !
कहां नश्वर जगती में शांति !

—पन्त

(ग) भोगा न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः, कालो न यातो वयमेव जाताः।
तपो न तप्तः वयमेव तप्ताः, तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।

—भर्तृहरि

है ऊँचा..... .....प्रसंग !

(इन पंक्तियों में सम्राट् अशोक का चिंतन व्यक्त हुआ है।) आज (कलिंग पर विजय प्राप्त करने के कारण) मगध-साम्राज्य का सिर ऊँचा हो गया है—कलिंग उसके चरणों में पड़ा है, किन्तु (जनता की) दुखभरी ध्वनि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूर-दूर से आकर (मानो) विजयी (अशोक) का अभिमान चूर कर रही है। (मगध के वीरों की) प्यासी तलवारों ने अपनी पैनी (तीक्ष्ण) धारों द्वारा निर्दयतापूर्वक कलिंग को नतमस्तक कर दिया। आज कलिंग उन हिंसा-पूर्ण हुंकारों के मध्य (कुचला हुआ) पड़ा है। किंतु यह शासन का सुख भी कैसा ? मानव-मन का शासन ही महत्व रखता है। शासन-सुख तो पर्वत की भांति भारी (दायित्व-प्रधान) होकर भी वस्तुतः तिनके की भांति (तुच्छ) है। इसकी (घनघोर) घटाएं क्षणिक हैं, बाद में तो सूर्य और चन्द्र की किरणों का प्रसंग (क्रम) चलेगा। अन्ततोगत्वा, शासन अथवा विजय और पराजय की स्थिति तो क्रमिक रूप से उदित एवं अस्त होने वाली सूर्य तथा चन्द्रमा की किरणों सरीखी ही है।

आज कलिंग-युद्ध में मगध के शूरवीर यद्यपि विजयी हुए हैं, किन्तु दीन-दुःखियों का चीत्कार उनकी विजय को चुनौती दे रहा है। इतना अधिक नाश करने के बाद प्राप्त की गयी इस विजय की कोई सार्थकता नहीं है। मनुष्यों के रक्तपान की प्यासी तलवारें तभी सार्थक थीं, यदि उनके द्वारा मानव-मन पर, जनता की चित्तवृत्ति पर शासन किया जा सकता। राज्य का प्रत्येक व्यक्ति सुखी एवं समृद्ध हो—इसी में राजा की महानता है। जिस प्रकार सघन काले बादल कुछ समय के लिए आकाश में अपना भीषण रूप दिखाकर लुप्त हो जाते हैं, उसी प्रकार विजय आदि के हर्षोल्लास भी क्षणिक होते हैं।

विशेष—'प्रसाद' ने शासन-मद को अत्यन्त सारहीन एवं क्षणिक कहा है। 'स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य' नाटक में नायक स्कन्द के निम्नलिखित शब्दों में भी यही भाव निहित है—

'अधिकार-सुख कितना मादक और सारहीन है। अपने को नियामक और कर्ता समझने की बलवती स्पृहा उससे बेगार कराती है। उत्सवों में परिचारक और अस्त्रों में ढाल से भी अधिकार-लोलुप मनुष्य क्या अच्छे हैं ?'

—प्रथम अंक, प्रथम दृश्य

यह महादम्भ.....राग-रंग।

महादम्भ का राक्षस कामनाओं की मदिरा का पान करके काफी भीषण चीत्कार कर चुका है। अब हे मानव ! तू विजय-पराजय की दुर्नीति को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याग कर प्राणिमात्र को सुख दे । (नियति की अनंत-शक्ति के समक्ष) किसी का वश नही चलता, तब इन्द्रियां निस्सहाय सिद्ध होती हैं। उसके संकेतमात्र से मुकुट और जयमालाएं सूख जाती हैं तथा नश्वरता का गीत सुनाई पड़ने लगता है। किन्तु संसार (सांसारिक प्राणी) वैभव की मधुशाला में पागल एवं मतवाला होकर उठ-गिरकर प्याले में हाला भरता है—उसके ये राग-रंग क्षणिक हैं।

अशोक कलिंग-विजय में हुए नाश से अत्यन्त खिन्न एवं विषण्ण है। वह अपने मन को सम्बोधित करते हुए कहता है कि तू विजय-पराजय के प्रलोभनों को त्यागकर सच्चा जनसेवी बन। प्राणि-मात्र को सुख देना ही जीवन का उद्देश्य होना चाहिए। नियति बड़े-बड़े दम्भियों का गर्व खण्डित कर देती है। उसके संकेतमात्र से बड़े-बड़े साम्राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। तब व्यक्ति की इन्द्रियाँ एवं शक्तियाँ सर्वथा अशक्त हो जाती हैं। जीवन में उत्थान-पतन आते रहते हैं, किन्तु व्यक्ति की महत्वाकांक्षा कभी समाप्त नहीं होती। वह मिथ्या दम्भ को उसी प्रकार नहीं छोड़ पाता, जिस प्रकार मदोन्मत्त व्यक्ति गिरते-गिरते भी हाला के प्याले को नहीं छोड़ता। जीवन के हास-विलास, राग-रंग सर्वथा अस्थिर हैं। उनमें आसक्त होना मनुष्य की भयंकर भ्रांति है।

विशेष—१. 'तुरंग' में श्लेष तथा 'राग-रंग' में छेकानुप्रास है। 'तुरंग' के दो अर्थ हैं—राजा के पक्ष में 'घोड़े' तथा सामान्य व्यक्ति के पक्ष में 'इन्द्रियाँ'। उपनिषदों में भी इन्द्रियों के लिए 'तुरंग' शब्द का व्यवहार किया गया है।

२. 'प्रसाद'-साहित्य में 'नियति' शब्द का प्रयोग अत्यन्त व्यापक अर्थ में किया गया है। वह एक ऐसी चेतन शक्ति है, जिसके सम्मुख मानव विवश हो जाता है। वह मनुष्य की उच्छृंखलता पर एक प्रकार का अनुशासन एवं प्रतिबन्ध है। संसार का समस्त क्रिया-व्यापार नियति के द्वारा ही चलता है। 'कामायनी' की निम्न पंक्तियों में भी इसी शक्ति का उल्लेख किया गया है—

नियति चलाती कर्म-चक्र यह
तृष्णा-जनित ममत्व वासना
पाणि-पादमय पंच भूत की
यहाँ हो रही है उपासना।

—रहस्य-सर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काली काली..... .....मृदंग।

(कवि की दृष्टि में) प्रेम-तरंग भी क्षणिक है। काली-काली अलकें, अलसाई हुई मदोन्मत्त पलकें, मणिमुक्ताओं की आभा तथा सुख की प्यासी इच्छाएं सब नाशशील हैं। उत्सव-शाला निर्जन (शून्य) हो जाती है, श्लथ-माला (बिखर जाती है) तथा नूपुर (की झंकार) शाँत हो जाती है। मदिरा पिलाने वाली सो जाती है तथा (हाला का) सूखा प्याला लुढ़कने लगता है। वीणा और मृदंग (के स्वर) भी शाँत हो जाते हैं।

यौवन के हास-विलास तथा ऐश्वर्य अन्ततः नाशशील हैं। उत्सवशाला की रौनक तभी तक रहती है, जब तक कि राग-रंग जारी रहता है। राग-रंग के समाप्त होते ही उत्सवशाला में एक निर्जीवता-सी आ जाती है। सुख और आनन्द के स्थान पर दुःख और विषाद छा जाता है। स्पष्ट है कि समस्त हास-विलासों का अन्त दुःखमय है।

विशेष—बार-बार 'मधुबाला', 'प्याला' आदि शब्दों का प्रयोग कवि पर 'हालावाद' का प्रभाव सूचित करता है।

इस नील..... .....निषंग।

इस नीले, विषाद के आकाश में सुख तो चपला के समान (क्षणिक) होता है, जब कि दुःख बादल के समान। मिलन से विरह के क्षण ही अधिक होते है। इस (संसार रूपी) मरु-मरीचिका में चंचल मन रूपी हरिण उलझ जाता है। (दुःख के कारण) नेत्रों से बहने वाले आंसू-कणों की नदी छल-छलाने लगती है। (यहां) प्रत्येक व्यक्ति अपने में मस्त है। कोई भी सूने पलों (दुःखियों) का ध्यान नहीं करता। काल (समय) का निषंग कभी खाली नहीं रहता।

इस संसार में सुख की अपेक्षा दुःख तथा संयोग की अपेक्षा वियोग के क्षण ही अधिक होते हैं। जिस प्रकार आकाश-मण्डल में घनघोर घटाएँ बहुत देर तक छायी रहती हैं, किन्तु विद्युत् कुछ क्षणों के लिए कौंध कर विलीन हो जाती है, उसी प्रकार दुःख तो बहुत देर तक रहता है, किन्तु सुख के क्षण अत्यन्त अल्प होते हैं। इस संसार की स्थिति मृग-मरीचिका के समान भ्रम में डालने वाली है। रेगिस्तान में मृग जिस प्रकार जल की खोज में व्यर्थ प्रयास करता है, उसी प्रकार इस संसार में सुख का आकांक्षी मन दुःखों की भूल-भुलैयाँ में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़कर दुःखी होता है। समय की गति बड़ी विचित्र है। वह निरंतर अपनी कराल-लीला दिखाता रहता है। अतः व्यक्ति को व्यर्थ के आकर्षणों में लिप्त न होकर दीन-दुखियों के दुःख दर्द को समझने की चेष्टा करनी चाहिए।

विशेष—१. रूपक और अनुप्रास का अत्यन्त सुन्दर एवं स्वाभाविक प्रयोग हुआ है।

२. इन पंक्तियों में बौद्धदर्शन की करुणा-भावना तथा शून्यवाद अत्यन्त स्पष्ट है—

आंसू कन-कन ले छल छल-
सरिता भर रही दृगंचल,
सब अपने में हैं चंचल
छूटे जाते सूने पल,
खाली न काल का है निषंग।

३. सांसारिक पदार्थ मृगतृष्णा की भाँति भ्रम-मात्र हैं—यह भाव प्रसाद ने 'कामायनी' की निम्नपंक्तियों में भी व्यक्त किया है—

यहाँ राशिकृत विपुल विभव सब
मरीचिका से दीख पड़ रहे,
भाग्यवान बन क्षणिक भोग के
वे विलीन, ये पुःन गड़ रहे।

—रहस्य-सर्ग

वेदना ..... सुरग।

(इस संसार में) जड़ और चेतन सभी पदार्थ कष्टाधिक्य से छटपटा रहे हैं। पीड़ा-नृत्य के लय-ताल में भी कंपन (अस्थिरता) है। यहाँ का परिवर्तन बड़ा अभिनयपूर्ण है। न जाने यह कुढंग कब तक चलता रहेगा! वायु करुणापूर्ण गीत गाती है। उषा उदास होकर आती है तथा सन्ध्या के समय पीला मुंह लिए हुए लौट जाती है।

विशेष—संसार के जड़-चेतन सभी पदार्थ पीड़ित हैं। यहाँ तक कि अमूर्त वायु भी दुःखभरी गाथा का गान करती है। 'कवि को वस्तुतः प्रकृति जगत् में भी दुःख का दर्शन होता है।

आलोक ..... सुमन रंग ?

(प्रभातकाल में) प्रकाश की किरणें आती हैं, वे (आकाश में) रेशमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डोर की भांति प्रतीत होती हैं, (जिनके दर्शन से) नेत्रों की पुतलियां नाचने लगती हैं (प्रसन्न होने लगती हैं) फिर वे अन्धकार-पट में विलीन हो जाती हैं तथा पक्षी-समुदाय कलरव करके निद्रा-लीन हो जाते हैं। जब (इस संसार में) मिलन क्षणिक है तथा वियोग की अवधि ही अधिक है, फिर सुन्दर चटकीला पुष्प क्यों खिलता है—प्रातः विकसित होने के बाद फिर तो उसे सूख कर धूल में ही मिलना है।

'कलरव कर सो जाते विहंग' पंक्ति द्वारा कवि एक ओर पक्षियों की ओर संकेत करना चाहता है और दूसरी ओर संघर्षशील मानव की ओर। जिस प्रकार दिनभर आकाश-मण्डल में कलरव करते हुए पक्षी अन्धकार भरी रजनी में निद्रालीन हो जाते हैं, उसी प्रकार दिनभर नाना प्रकार के संघर्ष एवं क्रन्दन करते हुए मानव रात्रि के समय विश्राम करने के लिए सो जाते हैं। चटकीले सुन्दर पुष्पों की ओर देखते हुए अशोक की चिन्ता करवट लेती है। पुष्प इतना सौन्दर्य, माधुर्य एवं सौरभ लेकर विकसित होता है, किन्तु उसकी जीवनावधि इतनी क्षणिक है कि सन्ध्या ढलने तक वह निष्प्रभ होकर धराशायी हो जाता है—'शाख पर बैठा न चहचाहाया उड़ गया।'

विशेष—१. 'कलरव कर सो जाते विहंग' में श्लेष का चमत्कार है।

२. संयोग की अपेक्षा वियोग-क्षण ही अधिक होते हैं, यह भाव कवि पंत की निम्नलिखित पंक्तियों में भी व्यक्त हुआ है—

शून्य साँसों का विधुर वियोग
छुड़ाता अधर मधुर संयोग;
मिलन के पल केवल दो, चार,
विरह के कल्प अपार !

—परिवर्तन

संसृति के.....जीवन पतंग।

संसार के पग घायल हैं, अतः वह डगमगा कर चल रहा है, तू उसके मार्ग में कोमल पंखुरियां बिखेर तथा उसके लिए मरहम-रूप हो जा। न जाने कितने भ्रमर इसका मधुपान कर चुके हैं! (दुःख के कारण) भूमण्डल तथा पर्वत संतप्त हैं। जड़-चेतनात्मक समस्त संसार दुःखी है। यहाँ पग-पग पर काँटे बिछे हैं। यह जीवन-पथ तो मरुस्थल की भांति तप्त है। अतः तू (इसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उष्णता को दूर करने के लिए) करुणा की तरंग बन जा। यह जीवन रूपी पतंगा जलता है।

मानवता अनादिकाल से निरन्तर विकसित हो रही है। चलते-चलते उसके पाँव घायल हो चुके हैं, अतः वह डगमगा रही है। अनेक शासकों ने अपनी महत्त्वाकांक्षा को पूर्ण करने के लिए उस पर नाना प्रकार के प्रहार किये। अतः तू अपनी करुणा-धारा द्वारा उसके घावों को भर दे। तू अपने धर्म-शासन द्वारा उसे सुखी एवं आनन्दित कर दे। अन्य शासकों ने अपनी स्वार्थ-परता के कारण इस पृथ्वीमण्डल का भोग मात्र किया, उसमें किसी प्रकार का संस्कार-परिष्कार न किया। उन्होंने अपने वैयक्तिक लाभ को ही सर्वोपरि समझा, मानवता के दुःख-दर्द उन्हें आकृष्ट न कर सके। अतः तेरा कर्त्तव्य है कि तू अपनी करुणा, अहिंसा तथा धर्म-नीति की शीतल धारा द्वारा मानवता के घावों को भर दे।

विशेष – १. इन पंक्तियों में अशोक के माध्यम से कवि ने बौद्ध-धर्म की करुणा-भावना का सुन्दर परिचय प्रस्तुत किया है। तन-मन-धन से अशोक सन्तप्त धरा के दुःखों का नाश करना चाहता है। उसकी मनोदशा अत्यन्त करुणापूर्ण है। वस्तुतः महात्मा बुद्ध का करुण सन्देश उसके मन को झकझोर देता है।

२. इन पंक्तियों में संगीतात्मकता आद्यन्त व्याप्त है।

३. 'जीवन-पतंग' में रूपक तथा 'अग-जग,' 'प्रति पग,' 'मधुर मधुपान' आदि में छेकानुप्रास का सौन्दर्य बिखरा पड़ा है।

३१. शेरसिंह का शस्त्र-समर्पण

परिचय—रणजीतसिंह के शासन-काल में सैन्य-शक्ति पर्याप्त थी। कुशल शासक के नेतृत्त्व में सेना परस्पर संगठित थी, किन्तु रणजीतसिंह की मृत्यु के उपरान्त यह सैन्य-शक्ति कुछ-कुछ विघटित हो गयी। उसमें लालसिंह जैसे प्रवंचक तथा कपटी व्यक्तियों का आगमन हुआ। एक बार जब पंजाब पर यवनों का आक्रमण हुआ, तो वीर सिख-जाति ने बड़े साहसपूर्वक उनका सामना किया, किन्तु कपटी योद्धा लालसिंह ने छल किया और बारूद के स्थान पर आटा तथा तोपों के गोलों के स्थान पर लकड़ी के टुकड़े भर दिये। फलतः यवनों के सम्मुख इनकी पराजय होने लगी, तब शेरसिंह ने आत्महत्या कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शस्त्र समर्पित करने की ठान ली। आत्महत्या के उन क्षणों में उसकी भावनाएँ किस प्रकार आवेश एवं उत्तेजना से भर गयीं, इसी का चित्रण 'प्रसाद' ने प्रस्तुत कविता में किया है। यह कविता ऐसी है कि पढ़ते-पढ़ते नाड़ियों में रक्त तेजी से प्रवाहित होने लगता है। भुजाएँ फड़कने लगती हैं। वस्तुतः इसमें भारतीय इतिहास सजीव हो उठा है। आधुनिक हिन्दी-साहित्य में इस प्रकार की कविताएँ बहुत थोड़ी हैं।

ले लो.....रुकती?

(शेरसिंह अत्यन्त क्षोभपूर्वक कहता है) ले लो यह शस्त्र, अब इसे ग्रहण करने की शक्ति मेरे हाथों में लेशमात्र भी नहीं रही। ओ पंजाब के जीवित कलंक लालसिंह! देख आज सिंहों का समूह अपना (सर्वोत्तम शस्त्र) नखदंत समर्पित कर रहा है।

(अपनी तलवार को सम्बोधित करते हुए शेरसिंह कहता है—) ओ रणभूमि की रंगिनी! तू तो सिक्खों के शौर्यपूर्ण जीवन की संगिनी है। तेरा पानी (रक्त) पान कर कपिशा की भूमि लाल हो गई थी। गर्वीले एवं कठोर धर्म-विद्रोहियों को तुम आतंकित करने वाली हो। किन्तु आज हम प्रताड़ित हैं, तू हमारे हाथ से निकल जा। चिलियानवाला में तेरी जलन की अन्तिम सीमा के त्रास से (आतंकित होकर) तोपें मुँह खोले खड़ी देखती थीं। हमारी जाति जो कल तक विजयी थी, आज पराजित हो रही है, तू हमारे वीर हाथों में युद्ध-क्षेत्र में नाचा करती थी और तेरी जिह्वा (कराल) यमराज की भाँति लपलप करती थी। (इस बार) न जाने किस भय के कारण तू अपनी निराशा भरी आँखों से घोर अत्याचार को देखकर भी शाँत रही। एक निराश पुत्र-वत्सला विधवा (अपने पुत्र की रक्षा के लिए) पीड़ा भरी पुकार कर उठी। और इसके अतिरिक्त जन्मभूमि (शत्रुओं द्वारा) दलित, अपमानित, विकल तथा आतंकित होकर कराह उठी, किन्तु तू फिर भी मौन रही।

विशेष—१. शेरसिंह की वाणी का ओज एवं आवेश इन पंक्तियों में अत्यन्त मुखर है।

'अरी रण-रङ्गिनी!
सिक्खों के शौर्य भर जीवन की संगिनी॥'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंक्तियां अत्यन्त सार्थक हैं। गुरु ग्रन्थ साहब के अनुसार प्रत्येक सिख कृपाण धारण किये होना चाहिए। रणक्षेत्र में तो कृपाण वीर-योद्धा की संगिनी होती ही है। इसी के बल पर वीर रक्त की नदियां प्रवाहित करते हैं।

३. 'कपिशा हुई थी लाल तेरा पानी पान कर' पंक्ति का संकेत अफगानिस्तान के उत्तरी प्रदेश की ओर है, जहाँ हरीसिंह नलवा ने मुसलमानों को हराकर इस प्रकार आतंकित कर दिया था कि बच्चे उसका नाम सुनते ही भयभीत होकर रोना बन्द कर देते थे।

४. 'चिलियानवाला में' का संकेत चिलियानवाला नामक स्थान में हुए सिख-अंग्रेज युद्ध की ओर है। कृपाण-बल द्वारा सिखों ने चिलियानवाला में अँग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए थे। उनकी तोपें अग्नि-वर्षा करती रहीं, किन्तु सिक्ख-सेना अपराजेय रही, उसका बाल-बाँका भी न हुआ।

५. 'एक पुत्र-वत्सला दुराशामयी विधवा'— रणजीतसिंह की विधवा अपने एकमात्र पुत्र दिलीपसिंह की रक्षा के लिए चिन्तित थी। रणजीतसिंह के बाद दिलीपसिंह ही उसकी आशाओं का एकमात्र केन्द्र-बिन्दु था। उक्त पंक्ति का संकेत इसी ओर है।

'आज विजयी.....हारा हुआ।'

(यवनों को सम्बोधित करते हुए शेरसिंह का कथन है—) आज तुम विजयी हो और हम पराजित हैं। तुम भी यही कहोगे और इतिहास (के पृष्ठ) भी यही कहेंगे, किन्तु यह प्रशंसाभरी विजय केवल एक छलना (धोखा) है। वीरों की भूमि पंजाब (वस्तुतः) वीरता से शून्य नहीं है (वह तो वीरता की साकार प्रतिमा है।) जहां काठ के गोले हों तथा बारूद के स्थान पर आटे का प्रयोग हो और पीठ पर (विरोधियों के) विषपूर्ण दंश हों तथा जहाँ (वीरों की) छाती आगभरी तोपों से बाहु-बल द्वारा युद्ध कर रही हो, वहाँ तो मृत्यु ही विजय है। तुमने वृद्ध वीर श्यामसिंह की मृत्यु तो सतलज के तट पर देखी ही होगी, जब कपटियों द्वारा वापस आने का पुल तोड़ दिया गया था।

विधाता हमारा भाग्य वाम कर से (विरोधी भाव से) लिख रहा था। छल में बल विलीन (नष्ट) हो रहा था और बल के मूल में विलास-भावना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम कर रही थी। यवनों के हाथों से स्वतन्त्रता की प्राप्ति कर पंजाब (का वीर) यौवन-विलास की मदिरा से उन्मत्त होकर वासना की छाया में प्रणय-व्यापार करता रहा, किन्तु लड़ते समय वह (सदैव) प्राण-पण से लड़ा (उसने कभी मृत्यु की परवाह नहीं की)।

सैकड़ों युद्धों में साथ देने वाली हमारी यह तलवार (कृपाण इस बात का प्रमाण है कि सिख शक्तिशाली थे तथा अधिकार-रक्षा में जागरूक थे। वे तो स्वयं जीते थे, अन्यों का वध करते थे। किन्तु आज उनके अतीत की वह वीर-गाथा लुप्त हो गई है—आज तो विजयी ही विजित है।

विशेष १.—'वीरभूमि पंचनद वीरता से रिक्त नहीं' द्वारा कवि पंजाब के वीरों के अदम्य साहस की ओर संकेत करना चाहता है। पंजाब ने अनेकानेक वीर-पुत्रों को जन्म दिया है, जिनकी अदम्य शक्ति एवं वीरता अजर-अमर है।

२. 'लिखता अदृष्ट था विधाता वाम-कर से' पंक्ति में प्रयुक्त 'अदृष्ट' शब्द का संकेत उस चेतन-शक्ति की ओर है, जिसके समक्ष मानव का वश नहीं चलता। इस शक्ति को 'प्रसाद' ने 'नियति,' 'भाग्यलिपि' आदि शब्दों द्वारा भी सम्बोधित किया है। पंजाब के वीर तभी पराजित हुए जब भाग्य ने उनका साथ नहीं दिया, अन्यथा उनमें अदम्य उत्साह एवं साहस था।

३. 'प्रणयविहीन एक वासना की छाया में'—जिस प्रकार युवक वासना-तृप्ति के लिए सच्चे प्रेम जैसी वस्तु का त्याग कर देते हैं, उसी प्रकार सुख-शान्ति के समय पंजाब के वीर उन्मुक्त-भाव से सांसारिक आकर्षणों एवं विलासों का उपभोग किया करते थे।

४. 'किन्तु आज उनकी अतीत वीर गाथा हुई'—आज भाग्यचक्र विपरीत होने के कारण पंजाब के वीरों की वीर-गाथाएँ केवल अतीत के गर्भ में विलीन हो गयी हैं। आज उसके अपने ही योद्धा लालसिंह ने उसे प्रवंचित किया है। जब बारूद के स्थान पर आटा और तोपों में गोलों के स्थान पर लकड़ी के साधारण टुकड़े भर दिए गये हों, तब शत्रुओं की अग्नि-वर्षिणी तोपों का सामना करना भला कैसे सम्भव है! ऐसी स्थिति में तो उसकी पराजय अवश्यभावी है।

'ऊर्जस्वित रक्त.....थाती है।

(पंजाब के वीरों की यशोगाथा गाते हुए आवेशपूर्ण स्वर में शेरसिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहता है –) जिन युवकों (की शिराओं) में ऊर्जस्वित रक्त का संचार था, जिनका मन उमंगों से परिपूर्ण था, जिनके मणिबन्धों में इतना अदम्य बल था कि सौ-सौ गोलों वाली तोपें भी उलट जाती थीं, (आग के) गोले जिनकी गेंदे थीं तथा अग्नि-वर्षा जिनकी क्रीड़ा थी और जो रक्त की नदी में सिर ऊँचा कर छाती के बल से तैरा करते थे, आज मातृभूमि के सुपुत्र पंजाब के वही वीर प्रतारणा की थपकी लगने के कारण सो गये हैं, छल की बलिवेदी पर निद्रालीन हो गय हैं। (कैसी विडम्बना है भाग्य की!) रूप, आशा तथा अधीर यौवन से परिपूर्ण अपनी प्रेमिकाओं के मधुर बाहु-पाश को त्याग कर तथा वात्सल्यमयी माताओं की गोद को सूना कर आज वही वीर निद्रामग्न हो गये हैं। आज समग्र पंजाब सूना हो गया है। आज (इस अंतिम वेला में) मैं प्राणों की भिक्षा नहीं माँगता, महाकाल (मृत्यु) ही उनकी रखवाली करेगा, ये उसी का आहार हैं। देखो, पजाब का शेर रणजीत सिंह तो आज मर रहा है। आज सारा पंजाब उसी शोक में खोया है। यह तलवार ले लो, यह (तुम्हारी अमूल्य) धरोहर मेरे पास थी।

विशेष—१. 'रक्त की नदी में सिर ऊँचा छाती कर तैरते थे'—पंजाब के वीर इतने अधिक साहसी थे कि युद्धक्षेत्र में सिर उन्नत किए छाती तानकर विपक्षी का प्रतिरोध किया करते थे। वे रक्त की नदियाँ बहाने में भी संकोच नहीं करते थे। विपक्षी दल उनकी असीम वीरता का लोहा मानते थे।

२. 'रूप भरी आशा भरी .....सो गये'—मातृभूमि की रक्षा के समय पंजाब के वीरों को प्रेयसियों का रूप-सौन्दर्य भी आकृष्ट नहीं कर पाता था। उनकी दृष्टि में कर्त्तव्य ही प्रमुख था, अन्य समस्त तत्त्व गौण थे। फलतः रूप-सौन्दर्य-सम्पन्न प्रेयसियों का प्रणय तथा माताओं का दूध-सा कोमल वात्सल्यपूर्ण हृदय भी उनको कर्त्तव्य-पथ से विचलित नहीं कर पाता था।

३. 'दूध भरी दूध-सी दुलार भरी माँ की गोद' में उत्प्रेक्षा तथा अनुप्रास का सौन्दर्य अवलोकनीय है।

४. 'सो रहा है पञ्चनद आज उसी शोक में' पंक्ति अत्यन्त सार्थक एवं सुन्दर है। इसमें एक ओर रूढ़ि लक्षणा का चमत्कार है, तो दूसरी ओर लक्षणा-मूला शाब्दी व्यंजना का। पंचनद के द्वारा यहाँ पर पंचनद के लोगों की सुप्तावस्था का वर्णन है—अतः रूढ़ि लक्षणा है। पंचनद के द्वारा पंचनद के निवासियों की ध्वनि निकलने के कारण यहाँ लक्षणामूला शाब्दी व्यंजना भी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३२. पेशोला की प्रतिध्वनि

परिचय— प्रस्तुत कविता भारतीय इतिहास से सम्बद्ध है। महाराणा प्रताप का अदम्य उत्साह एवं ओज आज भी इतिहास के पृष्ठों में सुनहरी अक्षरों में अंकित है। उन्होंने वर्षों तक निरन्तर युद्ध किया, किन्तु शत्रु की अधीनता स्वीकार न की। अनेक कठिनाइयों एवं आपदाओं का भी सहर्ष सामना किया। जिस समय वे मेवाड़ छोड़कर जा रहे थे, तब पेशोला के तट पर उन्होंने जो शब्द कहे, उनकी ध्वनि आज भी वहाँ गूँज रही है, आज भी वहाँ प्रताप की माया पड़ी है, यद्यपि उनका प्रत्यक्ष स्वर सुनाई नहीं पड़ता।

अरुण करुण.....व्योम में।

सूर्य का अरुण प्रकाश करुण (निस्तेज) हो गया है। वह अग्नि-पिण्ड बिना धुएँ और भस्म के (जल रहा) है। परिवर्तनों से विकल, चक्कर खाने के कारण श्रांत एवं नतशिर वह पश्चिम के आकाश में आज निराश्रय-सा दिखायी पड़ रहा है। (पेशोला में चमकने वाला) यह सूर्य कभी विश्व की निरन्तर आहुतियाँ ले-लेकर अपनी सहस्रों रश्मियों की माला से कदम्ब-वृक्ष की भांति तेज, ओज तथा शक्ति बिखेरता था। (वृक्षों की) घनी छाया के बीच (स्थित) आज पेशोला (झील) की लहरें शांत हैं, उसके तट पर स्थित वृक्ष चित्रशाला में चित्रित वृक्षों के समान (निश्चल एवं मौन) प्रतीत हो रहे हैं। (तट पर स्थित) झोंपड़े दुःख से जले हुए विषाद-खण्डहरों के समान प्रतीत हो रहे हैं। (उन्हें देखकर) ऐसा लगता है, मानो अनन्त आकाश-मण्डल में धुंधले मेघ-खण्ड भटक रहे हों। (चारों दिशाओं में) सन्ध्याकालीन (सूर्य के) कलंक के समान कालिमा बिखर रही है। आज यहाँ दुन्दुभि, मृदंग तथा तूर्य सबके सब शांत, स्तब्ध तथा निःशब्द हैं। फिर भी (उस शांत वातावरण में) आकाश-मण्डल में एक पुकार-सी गूँज रही है।

विशेष—१. प्रस्तुत पंक्तियों की रचना का आधार घनाक्षरी छन्द है। अनुप्रास, उपमा तथा उत्प्रेक्षा जैसे अलंकारों के प्रयोग ने इन पंक्तियों की सौन्दर्य-वृद्धि की है—

अरुण करुण बिम्ब !
वह निर्धूम भस्म रहित ज्वलन पिण्ड ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकल विवर्तनों से
विरल प्रवर्तनों में
श्रमित नमित सा—
पश्चिम के व्योम में है आज निरलम्ब सा।

\+ + +

तेज ओज बल जो वदान्यता कदम्ब-सा।

\+ × +

धूसर जलद खण्ड भटक पड़े हैं,
जैसे विजन अनंत में
कालिमा बिखरती है सन्ध्या के कलंक-सी।

उपर्युक्त पंक्तियों में अलंकार-सौन्दर्य के साथ-साथ सन्ध्याकालीन सूर्यास्त का वर्णन भी देखते ही बनता है।

२. 'तट तरु है चित्रित तरल चित्रसारी में' पंक्ति में 'तरल' शब्द का प्रयोग अत्यन्त उपयुक्त है। पेशोला-झील के तट पर छायादार वृक्ष स्थित हैं, उनकी छाया झील के जल में प्रतिबिम्बित हो रही है। झील का जल अत्यंत शांत एवं स्तब्ध है। इस पर कवि कल्पना करता है कि ये वृक्ष मानो तरल चित्रशाला में चित्रित हैं।

३. 'दुन्दुभि-मृदङ्ग तूर्य शान्त, स्तब्ध, मौन हैं'—आज पेशोला-तट की स्थिति भिन्न है। आज युद्ध सम्बन्धी नगाड़ों में भी सम्पूर्ण मौन की व्याप्ति है। कारण, जब वीर ही न रहे, तो इन नगाड़ों में गर्जन ध्वनि कैसे सम्भव है! आज चारों ओर अवसाद एवं नीरवता है। 'प्रसाद' ने एक अन्य स्थान पर भी कहा है—

"बजती वीणा न वहां मृदंग"
"कौन लेगा .....प्रतिध्वनि कहां।"

(पेशोला के तट पर प्रताप का अन्तिम स्वर गूँज रहा है। प्रताप तो मेवाड़ छोड़कर जा रहा है,) अब कौन उसका भार (उत्तरदायित्व) संभालेगा, अब कौन (उसकी भांति बड़ी-बड़ी बाधाओं में भी) अविचलित रहेगा? लोहे से ठोककर, वज्र से परखकर तथा प्रलयकालीन उल्काओं की कसौटी पर कसकर, उसकी इस अस्थिमांस की दुर्बलता पर पिसी हुई हड्डियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के समूह के समान कौन अट्टहास करेगा ? (ऐसा कौन व्यक्ति है जो अस्थि-मांस के बने अपने शरीर को अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार सहन कर, भीषण नर-संहार वाले युद्धों की कसौटी पर कसकर, देश की स्वतन्त्रता के लिए मरने को प्रस्तुत है ?) कौन ऐसा व्यक्ति है जिसकी भयंकर फुत्कार से (क्रोधाग्नि से) राक्षसों की समस्त साधना (अभिसंधि) बिखर कर चूर-चूर हो जायगी, धूल के समान उड़ने लगेगी। यह भार कौन वहन करेगा ? (मेवाड़ रक्षा के लिए) कौन जीवित है ? किसकी साँस चल रही है, कौन है, जो साहस-पूर्वक यह कहे कि मैं मेवाड़-रक्षा के लिए तैयार हूं। अरावली के शिखर के समान किसका सिर उन्नत है ? अरे, कोई तो बोलो, क्या तुम सब मृत हो ? आह, ऐसी विकट स्थिति में क्या कोई भी इस खिवैया की पतवार नहीं थामेगा ! गंभीर नियति के समान अन्धकार का सागर ज्योति-रेखा-रहित होकर उमड़ रहा है। काल रूपी धीवर (मछियारा) इस अनन्त (अंधकार-सागर) में खींचे ले जा रहा है, किंतु सांस मछली की भांति इसी आशा में अटका है—(कि शायद कोई कह दे—मैं मेवाड़ का उत्तरदायित्व संभालूंगा)। आज भी पेशोला के तरल जल-चक्रों में वही शब्द घूम रहे हैं, उनमें विकलता है। किंतु वह ध्वनि कहाँ है ? आज भी मेवाड़ में गौरवपूर्ण प्रताप की माया पड़ी है किंतु उनकी अनुगूँज कहाँ ?

विशेष—आख्यानक शैली में रचित प्रस्तुत पंक्तियों में कवि की राष्ट्रीय भावनाओं का अच्छा परिचय मिलता है। प्रेम और सौन्दर्य का कवि शृंगार की मधुर भूल-भुलैयाँ में ही नहीं भटकता रहा, उसे अपने देश के प्रति भी मोह है, प्रेम है।

इन पंक्तियों में उसकी राष्ट्र-भावना अत्यन्त स्पष्ट है—

गौरव की काया पड़ी, माया है प्रताप की
वही मेवाड़ !
किंतु आज प्रतिध्वनि कहां ?

३०३. प्रलय की छाया

परिचय—प्रस्तुत कविता जनवरी १९३१ में 'हंस' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। बाद में 'लहर' में संगृहीत की गई। इसमें ऐतिहासिक घटना के आधार पर नारी का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारी के अन्तरतम में रूप और यौवन को लेकर उठने वाली आकांक्षा तथा क्षण-क्षण में परिवर्तित होने वाली भावनाओं को अपनी तूलिका से चित्रित करने का प्रयत्न कवि ने किया है। गुर्जर की रानी कमला के अन्तर में क्षण-क्षण में उठने वाले भाव यहाँ चित्रित हैं।

थके हुए..... ..... प्याली थी।

(गुर्जरप्रदेश की रानी कमला भारतेश्वरी हो गयी, किंतु मानिक ने उसे आदर की दृष्टि से न देखा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो) उसका जीवन थक चुका है, उसके निराशा भरे जीवन की सन्ध्या हो रही है, जो धूल भरे क्षितिज की भाँति अस्पष्ट है और उसे उस दिन की अनुराग भरी सन्ध्या याद आती है जब सागर में दूर से आती हुई धीवरों की नावों से वंशी का (मधुर) स्वर सुनाई पड़ता था तथा (सागर की लहरें) सौरभ भरे पुष्पों के साथ रंग-रेलियां करती थीं। (अब उसे अपने यौवन का ध्यान आता है।) उसे हँसाने और उकसाने के लिए उसके यौवन रूपी उपवन में रात्रि की नीली किरणें स्थान खोजती थीं। (उसके यौवन का उपवन रसपूर्ण था।) वह कस्तूरी मृग के समान अपने ही मधुरस से मस्त थी। उसकी अलकावली के समान नीली एवं घुंघराली लहरें पश्चिम के सागर में उठती थीं, वे मानो उसे चूमना चाहती थीं। समीर उसे स्पर्श करके ही मानो सांस लेता था (बहता था)। उस नृत्यशीला के बचपन की स्फूर्तियां मानों दूर जाकर हँसने लगी थीं। उसके चरण तो मधु-भार से विजड़ित (भारी) हो गये थे। अपनी प्रणय-क्रीड़ा के मधु-भार से नतमस्तक उसे देखकर आकाश में काम-बालाएँ प्रसन्न होती थीं। समस्त गुजरात प्रदेश की सुन्दरता मानो उसी एक अंगलतिका में पुंजीभूत हो गई थीं। उसकी पलकें मद-भार से झुकी रहती थीं। नन्दनवन में विहार करने वाली, पुष्पों से केशों को सजाए हुए, सुगन्ध की पुतलियाँ, सैकड़ों अप्सराएँ आकर उसके अरुण मधुर अधरों का चुम्बन लेती थीं। उसके अधरों में स्मित स्वभावतः ही खिल पड़ती थी। उसके चरणों की लालिमा से नूपुरों की झंकार घुली-मिली जा रही थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो गगन की लालिमा दिगन्तव्यापी सन्ध्या-संगीत का पान कर रही हो। (उसके सौन्दर्य में) कितनी मादकता थी? (ऐसी मादकता में) वह सुखपूर्ण रात्रि की हास-विलास-भरी कथा सुनती हुई झपकी लेने लगती थी (उनींदी-सी होने लगती थी)। उसका यौवन जीवन रूपी मदिरा से भरी पहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्याली के समान था, जिसमें आशा-आकांक्षा व्याप्त थी। वह मधुर प्रमोद से आपूर्ण थी।

विशेष—१. "थके हुए दिन के निराशा भरे जीवन की
संध्या है आज भी तो धूसर क्षितिज में!"

इन पंक्तियों में छायावादी काव्य की प्रमुख विशेषता—विशेषण-विपर्यय—के दर्शन होते हैं। यहाँ दिन को थका हुआ बताया गया है, जबकि जीवन थकता है, दिन नहीं।

२. निर्जन जलधि-वेला रागमयी सन्ध्या से—
सीखती थी सौरभ से भरी रंग-रलियाँ।

\+ \+ \+

जैसे अन्तरिक्ष की अरुणिमा
पी रही दिगंत व्यापी सन्ध्या-संगीत को।

इन उदाहरणों में प्रायः सभी शब्द नवीन अर्थ लिए हुए हैं। वेला, अरुणिमा आदि का मानवीकरण (Personification) किया गया है।

३. 'लहरें उठती थीं मानो चूमने को मुझको' और 'साँस लेता था समीर मुझे छूकर' व्यतिरेक, 'मेरे उस यौवन के मालती-मुकुल' में रूपक और छेकानुप्रास, 'अपसरायें मानो वे सुगन्ध की पुतलियाँ' में उत्प्रेक्षा तथा 'जीवन सुरा की पहली ही प्याली थी' में रूपक आदि अलंकारों का सुन्दर एवं स्वाभाविक प्रयोग हुआ है।

४. 'थके हुए .....क्षितिज में' में कवि यह कहना चाहता है कि आज रानी कमलावती का जीवन निराशा एवं विषाद से परिपूर्ण है। वह जीवन-पथ पर चलते-चलते श्रान्त हो गयी है। उसके जीवन की मानो अन्तिम अवस्था आ पहुँची है, जो अत्यन्त अस्पष्ट एवं अनिश्चित है।

५. पागल हुई.....मृग जैसी'—मृग की नाभि में कस्तूरी वस्तुतः वर्तमान होती है, किन्तु वह अज्ञानवश उसे वन-वन खोजता है। वह उसी कस्तूरी की गन्ध पाकर ही पागल एवं विकल होता है। इसी प्रकार रानी कमलावती भी अज्ञात-यौवना थी। वह वस्तुतः अपने मादक यौवन से ही पागल होने लगी, किन्तु उसे इस पागलपन के रहस्य (यौवन) का ज्ञान न था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. 'हँसती·····मुझे'—कमला का रूप-लावण्य इतना उत्कृष्ट था कि स्वर्ग की अप्सराएँ भी उसके समक्ष लज्जित हो जाती थीं।

'आँखें खुलीं ····· ·····करती मैं।'

(उनींदेपन में ही जब उसकी) आँखें खुलीं तो उसने देखा कि संसार का समस्त वैभव उसके चरणों में बिखरा पड़ा था और वहीं गुर्जर-नरेश भी (प्रणय-याचना करते हुए) प्रणत थे—वह सन्ध्या ऐसी (मादक) थी।

श्यामा-युवती (रात्रि) तारों भरा नीलपट ओढ़े हुए अनंत आकाशमंडल में व्याप्त थी। उसमें लालसा की देदीप्यमान मणियाँ चमक रही थीं। वे (मणियाँ) सुन्दर, हास्यमयी तथा विलासपूर्ण थीं। (नभोमण्डल में तारक-समुदाय झिलमिल कर प्रकाश विकीर्ण कर रहे थे)। उस मादक रात्रि में मंद-मंद गति से सरिता बह रही थी और मलय-समीर पुष्पों से पराग ले-लेकर उस (के जल) में मिला रहा था। चाँदनी के आँचल में हरा-भरा तट अलस कर (प्रेम की) नींद ले रहा था। तारक-गण उसकी सुंदरता को परखने के लिए (आकाश मण्डल से) मानों झाँक रहे थे। सैकड़ों कमलों की मधुर भीनी-भीनी सुगन्ध उसके रोमों में प्रवेश करके (उसके शरीर में) लावण्य की धारा प्रवाहित कर रही थी। चन्द्रकान्त मणि के समान उसके सुन्दर अंगों को, चन्द्ररूपी कामदेव की किरणें स्पर्श करती थीं, (फलतः उन पर) स्निग्धता बिछलने लगती थी। गुर्जर-नरेश (उसकी राहों में) पलकों के पांवड़े बिछाते थे, उसकी (मादकता भरी) अंगड़ाइयों की लहरों में डूब जाते थे और उसका प्रेम-भरा हृदय उन्हें उपहारस्वरूप मिलता था। वे उसके अर्द्ध-विकसित मुख रूपी कमल के मकरन्द का रसपान किया करते थे। उनका प्रेम तथा रानी का सौभाग्य अपूर्व था। वह सौरभपूर्ण सुनहरी मल्लिका की लता के समान खिली थी तथा गुर्जर (नरेश) के थाले में रस-वर्षा करती थी (गुर्जर नरेश की रानी बन गई थी)।

विशेष—१. 'श्यामा-सृष्टि युवती थी' प्रयोग अत्यन्त सार्थक है। तारों भरी रात्रि अपनी श्यामलता के कारण ठीक वैसी प्रतीत होती है जैसी यौवन भरी युवती। 'श्यामा' का प्रयोग कवि ने 'षोडशी' बाला के अर्थ में किया है।

"बहती थी धीरे-धीरे सरिता
उस मधु यामिनी में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मदकल मलय पवन ले ले फूलों से
मधुर मकरन्द-बिन्दु उसमें मिलाता था।"

इन पंक्तियों में प्रतीकात्मकता तथा अनुप्रास की छटा अवेक्षणीय है।

'सृष्टि के रहस्य-सी परखने को मुझको' तथा 'खिली स्वर्ण मल्लिका की सुरभित वल्लरी-सी' में उपमा तथा 'स्मर-शशि', 'आनन-सरोज' में रूपक अलंकार है।

और परिवर्तन .....गुजरात की।

सहसा परिवर्तन हुआ! क्षितिजपटल को आन्दोलित करती हुई नीली मेघमाला के समान नियति-नटी सहसा आकाश में उदित हुई। वह अपनी भौंहें उसी प्रकार नचा रही थी, जिस प्रकार (मेघ-घटाओं में यदा-कदा) कौंधने वाली विद्युत्।

(ऐसी स्थिति में रानी को पद्मिनी का जौहर याद आया।) अग्नि के सरोवर में आत्म-सम्मान के यज्ञ की पूर्णाहुति के लिए पद्मिनी ने मानो अवभृत स्नान किया था। (वह आग की लपटों में जल उठी)। उसके पवित्र आत्मगौरव की पुण्य-गाथा भारत के कोने-कोने में गूँज उठी तथा उसके त्याग से नारी जाति का मस्तक उन्नत हो गया था। अभिमानी मेवाड़ के पवित्र बलिदान का ऊर्जाभरा आलोक सब की आँखों को निद्रामुक्त कर रहा था। कुल वधुएँ तथा कुमारियाँ अपने भावी जीवन के सम्बन्ध में नये सिरे से सोचने लगीं। उसी दिन से (उन्हें) अपनी विषाद भरी परतंत्रता खलने लगी। (उन्हें ऐसा प्रतीत होता था मानो) मौन देव-मन्दिरों की घण्टियों का स्वर भी उन पर व्यंग्य-संकेत कर रहा हो। अतः वे जीवन की समस्त लज्जा को त्यागकर जाग उठीं (स्फूर्तिवती हो गयीं)।

विशेष— कमला भी गुजरात की रूप-रानी थी।

'पावक-सरोवर में अवभृत स्नान था
आत्म-सम्मान-यज्ञ की वह पूर्णाहुति।'

इन पंक्तियों में रूपक अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है। अवभृत स्नान वह स्नान होता है, जो यज्ञ की पूर्ति-हेतु किया जाता है।

सोचती थी.....आगे था।

(इन पंक्तियों में पद्मिनी के जौहर को देखकर रानी कमला के मान-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिक संघर्ष का मनोवैज्ञानिक चित्र प्रस्तुत किया गया है।) वह सोचती थी कि पद्मिनी तो स्वयं जली थी, किन्तु वह सुलतान को अपनी (रूप-) ज्वाला में भस्मीभूत करेगी। वह भी अपने विरुद्ध नारी की प्रचण्ड रूप-ज्वाला को सजीव देखेगा। किन्तु यह स्पर्द्धा भी कैसी थी— इस रूप की। पद्मिनी की बाह्य रूप-रेखा तुच्छ थी, उसके सुन्दर शरीर के समक्ष वह फीकी थी। दर्पण में अपनी रूप-शोभा को देखकर तथा उसकी पद्मिनी के चित्र से तुलना करके उसने स्वयं को ही श्रेष्ठ पाया था। किन्तु उसमें (पद्मिनी का) वह दिव्य हृदय नहीं था। वह (अपने चित्र की) लघुता से (उसके चरित्र की) महानता को मापना चाहती थी।

उसका अभिनय आरंभ हुआ। अनिहलवाड़ा में अग्नि-चक्र घूमने लगा (सुलतान का आक्रमण होने लगा)। किंतु चिरकाल से सौन्दर्य का आदर करते हुए गुर्जर-नरेश उसी के संकेतों पर नाच उठे। नारी के त्रिगुणात्मक (सत्व, रज और तम से युक्त) नेत्र भला किसे प्रमादी नहीं बना देते—ये तो सभी का धैर्य हर लेते हैं। उसके अस्त्र भी यही (नेत्र) थे। अतः एक ही झटके में गुर्जर सजीव होकर स्वतंत्रता की सांस लेता था। किंतु सुलतान का क्रोध दावाग्नि का रूप धारण करके हरे-भरे प्रफुल्ल कानन के समान (प्रसन्न) गुजरात को जलाने लगा! गुजरात में बालकों की करुण पुकारों, वृद्धों तथा रमणियों के चीत्कारों से ताण्डव-नृत्य का भैरव (भयंकर) संगीत सुनाई पड़ने लगा। देश की उस आपत्तिग्रस्त स्थिति में रानी भी अट्ट-हास करती हुई सहर्ष कूद पड़ी। (वह भी देश-रक्षा के लिए रण-भूमि में आ पहुँची।) रंगभूमि की रानी को रण-भूमि में देखकर राजा बहुत प्रसन्न थे। सब बाधाएँ, विघ्न तथा आपत्तियां अपनी दुर्बलता में ही समाप्त हो जाती थीं। गुर्जरेश रानी को देखकर प्रसन्न होते थे और रानी भी (बदले में) मुस्करा देती थी।

किन्तु उस कृत्रिमता (प्रसन्नता और हास्य) में अधिक शक्ति न थी। जब उन्हें अपने देश में कोई आश्रय न मिला तो उन्हें स्वदेश त्यागकर निर्वासित होना पड़ा। किन्तु दुर्भाग्य तो उनसे भी आगे भाग रहा था (भाग्य प्रति-कूल था)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष--१. 'नारी के नयन ! त्रिगुणात्मक ये सन्निपात
किसको प्रमत्त नहीं करते
धैर्य किसका ये नहीं हरते ?'

नारी के नेत्र बड़े मादक एवं आकर्षक होते हैं। इनका प्रभाव अचूक होता है। कारण, इनमें सत्व, रज और तम तीनों गुणों का समन्वय होने के कारण अपूर्व बल होता है। सत्व प्रतीक है भोलेपन का, रज प्रतीक है अनुराग का तथा तम वासना का प्रतीक है। भोलेपन, अनुराग तथा वासना की समन्वित शक्ति के कारण नारी के नेत्र प्रत्येक को प्रमादी एवं चंचल बना देते हैं। रीतिकालीन कवि रसलीन ने भी नेत्रों के विषय में यही भाव व्यक्त किया है:—

अमिय हलाहल, मद भरे, स्वेत, स्याम रतनार ।
जियत मरत झुकि झुकि परत, जेहि चितवत इक बार ।

२. 'किन्तु दुर्भाग्य पीछा करने में आगे था'
इस पंक्ति में विरोधाभास का चमत्कार देखते ही बनता है।
वह दुपहरी थी.....अभूतपूर्व !

लू से संतप्त करने वाली तथा प्यास से मारने वाली दुपहरी थी। वे दोनों (कमला तथा गुर्जर नरेश) थक कर वृक्षछाया में सो रहे थे। तभी झंझावात (तूफान) की भांति (वहाँ) तुर्कों का एक दल आया। गुर्जरेश सच्चे राजपूत वीर थे, (अतः युद्ध करने लगे)। रानी एक ओर खड़ी खड्ग-लीला देख रही थी। घात-प्रतिघात में वे कहीं दूर निकल गये और रानी बंदी बना ली गई। भाग्य की कैसी विडम्बना है। (रानी कमला को ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों सूर्य की) किरणों से आकाश में पद्मिनी का चित्र बन गया है और वह उसे देखकर व्यंग से हँस रहा है। एक क्षण उसे भ्रम में डालकर मानो वह उसे संकेत कर रहा था कि कमला पद्मिनी का अनुकरण करे। किंतु कुछ न समझ सकी।

पद्मिनी की जो (छिपकर प्राण-त्याग करने की) भूल थी, उसे समझने के लिए उसने विराट सिंहनी का रूप धारण कर सुलतान के सम्मुख मारने अथवा स्वयं मर जाने की अटल प्रतिज्ञा कर ली और गर्वपूर्वक छाती तानकर (बंदी करने वाले सैनिकों से) कहने लगी—

'मुझे ले चलो, मैं गुजरात की रानी कमला हूँ'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय उसकी मनोवृत्ती विचित्र थी। उसका यह व्यंग्य उपहास के योग्य था। उस आपत्काल में उसे अपने रूप का ध्यान (अभिमान) आ रहा था। सुलतान जरा सा उसका भी रूप देख ले और यह भी देख ले कि उसका सौन्दर्य और मृत्यु कितनी महान एवं अपूर्व है। (सुलतान तो पद्मिनी के रूप पर मुग्ध हो गया था, अब जरा कमला का रूप देखे और यह देखे कि वह कितने धैर्य और साहस के साथ मृत्यु का वरण करती है। वह उसके धैर्य और सौन्दर्य से आश्चर्यचकित हो जायगा)।

विशेष—'वाह री नियति'—'प्रसाद' का प्रिय प्रयोग है। वे नियति को कहीं भी नहीं भुला पाते। इसी कविता में वे अनेक स्थलों पर उसका प्रयोग कर चुके हैं। यथा —

(क) नियति नटी थी आई सहसा गगन में
तड़ित विलास-सी नचाती भौंहे अपनी।

(ख) किंतु दुर्भाग्य पीछा करने में आगे था।

वस्तुतः 'प्रसाद'-काव्य में नियति का अर्थ उस चेतन-शक्ति से है, जिसके समक्ष मानव का वश नहीं चलता। उन्होंने अनेक पर्यायों द्वारा इस शक्ति की ओर संकेत किया है। उदाहरणार्थ 'स्कन्दगुप्त' नाटक में इस शक्ति को विजया 'अदृष्ट,' चक्रपालित 'अदृष्टलिपि', खिंगल 'भाग्य', प्रपंचबुद्धि 'ललाटलिपि', कमला और मातृगुप्त 'दुर्दैव' कहकर पुकारते हैं। निम्नलिखित पंक्तियों में भी उनका यही नियतिवाद व्यक्त हुआ है—

नचती है नियति नटी-सी
कन्दुक-क्रीड़ा सी करती
इस व्यथित विश्व आँगन में
अपना अतृप्त मन भरती।
—'आँसू'

इस नियत नटी के अति भीषण
अभिनय की छाया नाच रही।
—कामायनी, इड़ा सर्ग

कायरता से भरी निराशा,
देख नियति पथ बनी वहीं।
—कामायनी, चिंता-सर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वन्दिनी मैं.....सुलतान के।

रानी वन्दिनी होकर बैठी रही और दिल्ली के वैभव, ऐश्वर्य तथा विलास को देखती रही। क्रूरता की प्यारी वह दिल्ली छलना के समान सन्ध्या में सज रही थी।

फिर काली निशा का आगमन हुआ। निशा अपने नक्षत्रों की दंत-पंक्तियाँ खोलकर मानो दूर आकाश में अट्टहास कर रही थी किंतु रानी को अपने ही कोलाहल (अन्तर्द्वन्द्व) के कारण कुछ सुनाई न पड़ा। वह कभी तो अपने पति (की पराजय) का प्रतिरोध लेने का विचार कर रही थी और कभी सुलतान के कठोर हृदय में अपनी रूप-सुन्दरता की अनुभूति जगाने का। नारी कितनी अबला और रूप की मतवाली होती है। (प्रतिरोध लेने के लिए उसके हृदय में) वेगपूर्ण ओघ के समान साहस उमड़ता था, किंतु वह उसे संभाल न पाती थी। जिस प्रकार तिनका (नदी में) बह जाता है, उसी प्रकार वह विचारों (की नदी) में डूबती-उतराती थी। वह रूप के (अभिमान के) कारण शत्रुता (प्रतिहिंसा) की भी उपेक्षा कर रही थी। (उसके मन में बार-बार यह विचार आता था कि) कितने महीनों के बाद कहीं आज उसका (सुलतान से) साक्षात्कार होगा। वह सौन्दर्यपूर्ण वासना की आंधी के समान अपनी ही गर्व-गरिमा (की सरिता) में लहरों के समान उठती-गिरती सुलतान के समीप पहुँची।

विशेष—१. 'कभी सोचती थी.....निर्मम हृदय में' पंक्तियों में नारी-हृदय की सहज भावना का स्वाभाविक एवं चारु चित्रण हुआ है।

२. नारी मैं!
कितनी अबला थी और प्रमदा की रूप की!

यहां प्रयुक्त 'अबला' और 'प्रमदा' शब्द विशेष सार्थक हैं। पति-विहीन होने के कारण रानी 'अबला'—शक्तिहीन—थी और रूप-सौन्दर्य की मादकता से परिपूर्ण होने के कारण 'प्रमदा' थी।

तातारी.....सुवर्ण पींजरा।

(सुल्तान की) तातारी दासियों ने उसे (सुलतान के प्रति आदर भाव-व्यक्त करने के लिए बलपूर्वक) झकाना चाहा, किन्तु वह अविचलित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही। सहसा उसने अपनी मणि-मेखला में रखी कठोर कृपाण को निकाल कर अपना अंत करना चाहा, किन्तु वह (कृपाण) छीन ली गयी : (अग्नि में जली हुई) रस्सी जैसे जल जाने पर भी अपनी ऐंठ नहीं छोड़ती, उसी प्रकार वह अधीरतापूर्वक अपमान-ज्वाला में जलने पर भी ऐंठती रही। सुलतान को मारने का या स्वयं मर जाने का उसका उत्साह फीका पड़ गया। तत्क्षण आने वाली मृत्यु से बचकर वह सोचने लगी—जीवन सौभाग्य है, अलभ्य है (उसका स्वयं नाश करना बुद्धिहीनता है)। (जीवित रहने की) लालसा चारों ओर भिखारिणी के समान (जीवन की) याचना करने लगी। उसके दयनीय और काम्य प्राणों के कण-कण भिखारी की भाँति आत्म-विश्लेषण कर रो उठे।

(उसके मन में विचार आया कि) जीवन अनन्त है, इसे नष्ट करने का किसी को अधिकार नहीं है। जीवन की सीमाओं में आबद्ध प्रतिमा (काया) अत्यन्त मधुर है। (जीवन कितना मधुर-कोमल है, इसे) वह आज तक विश्व भर से छिपाती रही। (जड़-चेतन) सभी तत्त्व इस मधुर भिक्षा (जीवन) की याचना करते हैं। बन-राजी अपने पत्तों का आंचल फैलाकर ओस-बिन्दुओं की याचना करती है, क्योंकि वह जीना चाहती है। सागर एक अतृप्त भिखारी की भाँति चीत्कार करता हुआ मीठी-मीठी नदियों से जीवन-धारा की ही याचना करता है। संपूर्ण संसार घोर अंधकार से विकल होकर प्रभातकाल में जीवनदायिनी स्वर्णिम प्रकाश-किरणों की याचना करता है। वस्तुतः जीवन प्रिय है और जीवित रहना एक सौभाग्य है, किन्तु रानी क्रोधपूर्वक बात करती हुई रो उठी—(उसके प्रिय को) मारकर भी क्या उसे मरने न दोगे। वह मानती है कि सुलतान बलशाली है और वह बन्दिनी है। यद्यपि वह राज्यविहीन है, किन्तु उसमें मनुष्यता तो व्याप्त है, मनुष्यता से तो वह शून्य नहीं हैं। उसका कण्ठ क्षोभपूर्ण था, किन्तु फिर भी वह मौन रही। शक्तिशाली सुलतान की अनुनयभरी वाणी (इतने में) गूंज उठी—"भारतीय नारियों की गरिमा मरने में ही है। तुम, इस समय मेरी प्रार्थनाओं की बन्दिनी हो, (आज्ञाओं की नहीं)। पद्मिनी को मैं खो बैठा, किन्तु तुम्हें नहीं मरने दूंगा। तुम अपने हृदय की मधुरता और कोमलता द्वारा मेरी दयाहीनता पर शासन करोगी। आज तुम इस तीव्र उत्तेजना की स्थिति में मेरी बात न सुन सकोगी, तुम विचार भी न कर सकोगी, अभी कुछ ठहर कर विश्राम करो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(इतना कहकर) सुलतान वेगपूर्वक कहाँ चले गए—रानी यह न जान सकी और तभी से यह रंगमहल उसके लिए स्वर्ण-पिंजरा बन गया।

विशेष—"देखता हूं मरना ही भारत की नारियों का
एक गीत-भार है !

... ...

शासन करोगी इन मेरी क्रूरताओं पर
निज कोमलता से—मानस की माधुरी से !"

इन पंक्तियों में कवि ने 'गीत-भार' का प्रयोग अंग्रेजी भाषा के प्रसिद्ध मुहावरे 'Burden of Song' के अर्थ में किया है। जब किसी गीत की पंक्ति बार-बार दोहराई जाती है तो उसे 'Burden of song' कहा जाता है। इसी प्रकार भारतीय नारी बार-बार मरने की बात कहती है। अतः कवि ने उसके इस कथन के लिए 'गीत-भार' शब्द का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त इन पंक्तियों में कवि ने सुलतान की प्रणय-याचना व्यक्त की है। रानी कमला रूप-सौन्दर्य की कोमलता-मधुरता द्वारा उसकी क्रूरता को भी दूर कर सकती है, उसके प्रेम में कुछ ऐसी ही शक्ति है। वस्तुतः नारी-प्रेम में पड़ कर क्रूर-से-क्रूर व्यक्ति भी कोमल बन जाता है।

एक दिन .....अतल में।

एक दिन सन्ध्या समय था। उसके हृदय-पटल के समान दिशाएँ भी अपने क्षोभ से लाल-पीली हो रही थीं। मंद-मंद गति से करुणा और विषाद से भरी यमुना बह रही थी, (ऐसा प्रतीत होता था कि) पृथ्वी का अवसान मानो तरल होकर बह रहा हो। कमला (दुर्भाग्य की) कालिमा के चित्रपट को देखती हुई सहसा (किसी के) तीव्र पैरों की ध्वनि से चौंक उठी। उसने चौंक कर देखा तो सामने (उसके यहाँ) बाल्यकाल में अनुचर का काम करने वाला युवक मानिक खड़ा था। उसकी दुःखी आँखों के समक्ष समुद्र-तट (पर स्थित गुजरात) का वह रमणीय चित्र खिंच गया। उसने मानिक को बाल्यकाल से ही अद्भुत, कुतूहलपूर्ण तथा हंसी भरी कहानियाँ सुनाकर बड़ा किया था। अतः उसने पूछा—'तू अभागा, यहाँ मरने कैसे आ पहुँचा ?' उस (मानिक) ने उत्तर में कहा कि 'वह मरने के लिए नहीं, वरन् जीवन की आशा से आया है। वह भला क्यों न आता !' इतना कहकर वह मौन हो गया। वहीं एक हाथ में छुरा पकड़े हुए तथा दूसरे हाथ से उसके दोनों हाथ पकड़े हुए तातारी दासियाँ प्रस्तुत थीं। सहसा सुलतान भी वहाँ आ गये और रानी गरिमा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मायाजाल में (ऊंसे व्यक्ति की भाँति) निःशब्द थी। उन्होंने वज्र के समान भीषण स्वर में कहा—इसे (मानिक को) मृत्यु-दण्ड दिया जाय, किंतु (तत्क्षण रानी के) कानों में ये शब्द गूंज उठे—

"जीवन अलभ्य है, जीवन सौभाग्य है।"

गर्वीली किंतु अनुनय की पुकार में झुकी हुई आवाज में उसने कहा—इसे छोड़ दीजिए। इस पर सुलतान हँस पड़े और रानी (अपनी भूल के कारण) फीकी पड़कर लज्जा की शृंखला में जकड़ी जा रही थी। अब वह अपनी प्रार्थना वापस कैसे ले सकती थी। अतः अनुग्रह के भार से दबे हुए सुलतान ने कहा—'इसे जाने दो (मृत्यु दण्ड रहने दो), यह रानी की पहली आज्ञा है।' (रानी को बहुत क्षोभ हुआ) उसके दुर्बल हृदय ने जीवन का मणि-कोष (अभिमान) कौड़ी के मोल बेच दिया। आकाश को पकड़ने की आशा में ऊंचा हाथ करने वाली वह महातल में जा पहुँची (सुलतान को पराजित करने के स्थान पर स्वयं पराजित हुई।)

'अन्तर्निहित थी..... .....अपमान को।

जीवन की दीनता और पराधीनता में अन्तर्निहित (अन्तर्व्याप्त) आशा-आकांक्षाएं अनजाने में ही उसकी चेतना में विकसित होने लगीं। जैसे आँखों की लालिमा में अनजाने ही मादकता निहित रहती है, उसी प्रकार उसकी चेतना में प्रतिशोध की भावना होने पर भी वासना निहित थी। न जाने कब से वासना के ये बिन्दु उसकी संवेदनाओं (Sensations) को सींचते रहे थे, जो सहसा रात्रि के निविड़ अंधकार में तारों के समान जाग उठे थे। वह दुर्बलता को सहारा मानती हुई (वैभव की) फिसलन-भरी जीवन-भूमि पर खड़ी थी। राज्य के प्रलोभनों को सत्य मानकर वह शासन की कामना करती हुई मतवाली हो झूमने लगी। क्षण भर में भावना का वह परिवर्तन सर्वथा अजेय था। (वैभव-सिद्धि के कारण प्रतिशोध की भावना लुप्त हो गई।)

इधर गुर्जर-नरेश कर्णदेव जीवित थे। उन्होंने रानी को जीवन समाप्त कर देने का संदेश भेजा, किन्तु रानी तो लालसा की अर्द्ध-कृति (पुत्तलिका) बनी थी। उस युद्ध में जब वे स्वयं प्राण न दे सके और अब स्वयं जीवित हैं, तो फिर वह (रानी) क्यों न जीवित रहे। वह तो अबला थी और बन्दिनी बनायी गयी थी। प्राणों के लोभ के कारण वे (युद्ध-क्षेत्र से) भाग खड़े हुए। उनका उससे (सच्चा) प्रेम ही कहाँ था? वह भी उनसे शुद्ध प्रेम नहीं करती थी। मानिक उसे मरने को कहता था, किन्तु उसे तो उसके रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने ही गुजरात की रानी बनाया था और आज वही रूप उसे भारतेश्वरी का पद ग्रहण करने को प्रेरित कर रहा था। प्रतिहिंसा की भावना लोभ के रूप में मानो मूर्तिमन्त हो उठी थी। आज वह सुलतान को पराजित कर स्वयं को (रूप के कारण) विजयिनी मान रही थी। जैसे काली सुगन्धित अगरबत्ती स्वर्णपात्र में जल जाय और उसके धूम की रेखामात्र शेष रह जाय, उसी प्रकार रानी राजप्रासाद के आकाश में धूम-रेखा के समान पड़ी थी, (उसकी मान-मर्यादा नष्ट हो चुकी थी), किंतु वह अपनी रूप-माधुरी को ही जीवन समझती थी—यही उसका उपहार था और यही शृंगार। रानी के सौन्दर्य की रंगशाला (काया) मणि-नूपुर से सजायी गई। विश्व भर अभिमान का उत्सव मना रहा था। आज रूप की विजय थी। क्रूर सुलतान उसके रूप-सौन्दर्य के कृपा-कटाक्ष देखता था। उसके कटाक्षों की मादकता भरी लालिमा विश्व-भर के प्रेम पर व्यंग्य करती थी। (वह विलासिता और वासना में इतनी लिप्त थी कि सच्चा प्रेम उससे उपहसित हो रहा था। शुद्ध प्रेम जैसी वस्तु का उसमें सर्वथा अभाव था।) वह (लोगों के) अनुग्रहों को अवहेलना पूर्वक बिखेर देती थी। उसकी भौंहों के संकेतों पर ही जीवन के स्वप्न बनते-बिगड़ते थे। उन्हीं संकेतों द्वारा लोगों का भाग्य निर्णीत किया जाता था (जिस पर रानी की कृपादृष्टि हो जाती थी, वही प्रतिष्ठित होता था)। पद्मण-मणि के समान (उसके अरुण अधरों से) मुस्कान ऐसे झरती थी, मानो सौरभ के अमृत का स्रोत मंद-मंद गति से झर रहा हो। उसके रत्नों के आभूषण पुष्पों के पराग से सुवासित होते थे और अनेक (लोगों की) आँखों की प्रसन्न पुतलियां दर्पण के समान उसका रूप प्रतिबिम्बित करती थीं (अनेक लोग उसके रूप-सौन्दर्य पर मुग्ध थे)। उस मीनाक्षी के चपल संकेतों पर कन्याकुमारी से लेकर हिमालय की शृंखलाओं तक का शासन बादलों में कौंधने वाली विद्युत्-रेखा के समान तीव्र एवं अबाध गति से संचालित होता था। सुन्दर कामदेव की पताका भी उसे देखकर अपना जीवन सफल करती थी (वह सौन्दर्य में अप्रतिम थी)। जो सुलतान सिर पर मुकुट पहनते थे, वही (उसके रूप के समक्ष पराजित होकर पृथ्वी पर) लोटते थे। सुलतान की हरमें अपने अपमान को सशंक नेत्रों से देखती थीं (अपने अपमान को पी जाती थीं)। पूर्ण भूमण्डल पर उसके रूप की विजय थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष-१. "उस प्रत्यावर्तन में प्राण जो न दे सके, हाँ

जीवित स्वयं हैं।

जियें फिर क्यों न सब अपनी ही आशा में ?"

यदि गुर्जरेश कर्णदेव स्वयं युद्ध में साहसपूर्वक नहीं लड़ सके, तो उन्हें रानी को जीवन-लीला समाप्त करने का संदेश भेजने की क्या आवश्यकता थी ? वे स्वयं तो भीरु बनकर देवगिरि में जा छिपे और रानी को आपदा में अकेली छोड़ दिया। अतः रानी का कथन है कि यदि वे प्राण-रक्षा-हेतु भाग सकते हैं, तो उसे प्राण-नाश करने को क्यों कहा गया।

२. इस मुसक्यान के, मृदु-राग उद्गम से
बहता सुगन्ध की सुधा का सोता मन्द-मन्द
रत्न राजि, सींची जाती सुमन-मरन्द से।

इन पंक्तियों में वर्ण-विन्यास की चारुता तथा अनुप्रास की सज्जा द्रष्टव्य है।

बेंच दिया..... .....छाया में।

उसने आत्म-सम्मान को, जो मानवता का सर्वोपरि सत्य (गुण) है, (साम्राज्य के) माया-जाल में फँसकर बेंच दिया था। जीवन में इस सत्य को परखने का कोई एकाध क्षण ही आता है। लोभ, लिप्सा, भीति, क्रोध तथा प्रतिहिंसा के पाश में जकड़ा मनुष्य आत्म-सम्मान की पुकार को सुन ही नहीं पाता। रानी ने आत्म-सम्मान का स्मरण उस दिन किया, जब अलाउद्दीन के दास मलिक काफूर ने छलपूर्वक सूलतान का वध कर दिया। क्रूरता की आंधी में रक्त-वर्षा होने लगी। राजवंश के रूपशील-सम्पन्न तथा प्यार से पालित प्राणी मारे गये। वह सन्ध्या रक्तभरी थी। शक्तिशाली होना सौभाग्य की बात है तथा विघ्न-बाधाओं का प्रबल विरोध करने में एक विशेष सुख मिलता है। रानी को इसका भी अनुभव हुआ, किन्तु वह तो मिथ्या अधिकार की प्रवंचना मात्र थी। (रानी ने सम्राज्ञी के नाते मलिक काफूर का प्रबल विरोध किया था।) जिस दिन रानी ने सुना कि आजीवन दास रहने वाले मानिक ने प्रतिशोध लेने के लिए सुलतान का नाश कर स्वयं ही रक्त से रंजित हाथों से राज्य-मुकुट पहन लिया, खूसरू के नाम से गर्वपूर्वक शासन-दण्ड ग्रहण किया, उसी दिन उसे अपनी वास्तविक स्थिति ज्ञात हुई। उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा अनुभव हुआ मानों सैकड़ों बिच्छुओं ने एक साथ उसे डंक मारा हो। (प्रतिशोध लेने का) जो काम वह करने आयी थी, उसे मानिक ने पूर्ण किया। आज वह खूसरू है—प्रभुत्वशाली है। वह वात्याचक्र (आँधी) के समान प्रतिशोध की दावाग्नि में जलता हुआ अभी-अभी रानी के पास आया और कह गया—

"ऐ नारी ! तेरा यह रूप अभिशाप की सजीव मूर्ति है। इसमें पवित्रता का रंचमात्र भी अंश नहीं है। (अत्याचारों और क्रूरताओं से) पीड़ित होकर मृत व्यक्ति अपनी सत्ता को भुला नहीं सके। वे आज भी संसार में ठोस प्रतिहिंसा की प्रतिध्वनि चाहते हैं। (उनकी आत्माएँ कह रही हैं कि क्रूर से प्रतिहिंसा की ही जानी चाहिए।)"

सम्राट् अलाउद्दीन ने अधिकार-मद में जो रूप, वैभव, शील एवं प्रभुत्व अर्जित किया था, आज वह सब-कुछ एक माया-स्तूप की भांति बिखर रहा है। उन सबका लोप रानी कमलावती के नेत्रों के समक्ष हो रहा है। उसके सौन्दर्य का चंचल आवरण ओस-कणों के समान नष्ट हो रहा है। वासना की छलना इस पर पिशाची के समान अट्टहास कर रही है। चारों ओर से (जनता की) उँगलियों के संकेत उस पर व्यंग्य-वर्षा कर रहे हैं। उसकी वेगभरी वासना उसे पतन के अन्धकारपूर्ण गर्त में ले गयी थी। (वह मृत्यु के निकट पहुँच रही थी, विलासाधिक्य उसके स्वास्थ्य को नष्ट कर रहा था।) अंधकार में पक्षी के काले पंख जिस प्रकार उसके नाश पर आवरण बन जाते हैं, उसी प्रकार रानी का ज्योतिहीन तथा पापपूर्ण सौन्दर्य कालिमा की धारा की भाँति प्रलय की छाया में सोती असफल सृष्टि पर नक्षत्र के समान गिर रहा है (उसका सौन्दर्य नष्ट हो रहा है)।

विशेष—१. अन्तिम पंक्तियों में मानिक के चुनौती भरे शब्दों द्वारा कवि ने अपना मूल-प्रतिपाद्य स्पष्ट कर दिया है। नारी-हृदय का यह नवीनतम विश्लेषण कवि ने इतिहास को आधार बनाकर प्रस्तुत किया है।

२. इन पंक्तियों में कविता का शीर्षक भी स्पष्ट हो गया है। शीर्षक अपने आप में अत्यन्त सार्थक एवं कौतूहलपूर्ण है। जिस प्रकार प्रलय के सामने सृष्टि असफल हो जाती है, उसी प्रकार रानी कमलावती महान परिवर्तन के प्रलय में नष्ट होती जा रही है।

पुस्तकालय विज्ञान शाखा
आ०नं० .....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे साहित्यिक प्रकाशन

सटीक ग्रन्थ

जायसी ग्रन्थावली	डॉ० मनमोहन गौतम	१२.००
साहित्य लहरी	डॉ० मनमोहन गौतम	५.००
विद्यापति पदावली	श्री कुमुद विद्यालंकार	१०.००
वीसलदेव रासो	श्री भवानीशंकर त्रिवेदी	२.५०
उत्तर काण्ड	श्री भवानीशंकर त्रिवेदी	२.००
मित्र लाभ	श्री भवानीशंकर त्रिवेदी	१.५०
शकुन्तला नाटक	श्री सुधांशु चतुर्वेदी	३.००
रघुवंशम् (१३ वां सर्ग)	श्री भरतराम भट्ट	१.००
कर्पूर मंजरी	श्री नगीनचन्द सहगल	१.७५
सुदामा चरित	श्री कृष्णमोहन अग्रवाल	०.७५

आलोचनात्मक टीकाएँ—

साकेत सौरभ	श्री नगीनचन्द सहगल	१०.००
साकेत सौरभ (नवम् सर्ग)	श्री नगीनचन्द सहगल	३.००
कामायनी दीपिका	श्री नगीनचन्द सहगल	६.००
कामायनी "(दर्शन, रहस्य, आनन्द)	श्री नगीनचन्द सहगल	३.००
रश्मिबन्ध : व्याख्या-विवेचन	श्री सत्यपाल 'निराश'	५.००
द्वापर : व्याख्या-विवेचन	श्री भवानीशंकर त्रिवेदी	४.५०
आधुनिक कवि पन्त	श्री भारतभूषण 'सरोज'	२.५०
आधुनिक कवि पन्त (नवीन)	प्रो० भारतभूषण 'सरोज'	३.००
आधुनिक कवि महादेवी	श्री भारतभूषण 'सरोज'	३.००
प्रियप्रवास की टीका	श्री भवानीशंकर त्रिवेदी	६.००

आलोचनात्मक अध्ययन

प्रेमचन्द और उनकी रंगभूमि	डॉ० शान्ति स्वरूप गुप्त	३.५०
सेवासदन-विवेचन	प्रो० बलदेवकृष्ण	२.००
शकुन्तला: एक अनुशीलन	प्रो० सुधांशु चतुर्वेदी	२.००
बिहारी का काव्य-दर्शन	प्रो० उदयभानु हंस	३.००
महादेवी की साहित्य-साधना	डॉ० सुरेशचन्द गुप्त	३.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलोचनात्मक अध्ययन (प्रश्नोत्तर)

पाश्चात्य काव्यशास्त्र-मीमांसा	प्रो० देशराज सिंह भाटी	३.००
भारतीय काव्यशास्त्र-मीमांसा		३.००
जायसी का काव्य-दर्शन	प्रो० देशराजसिंह भाटी	३.००
जयशंकरप्रसाद	प्रो० देशराजसिंह भाटी	२.५०
प्रेमचन्द : एक विवेचन	डॉ० सुरेश सिनहा	३.००
गोदान: एक विवेचन	डॉ० सुरेश सिनहा	२.५०
साहित्यालोचन	डॉ० राजेन्द्र शर्मा	२.५०
हिन्दी भाषा का वैज्ञानिक इतिहास	डॉ० द्वारकाप्रसाद 'द्वारिकेश'	१.५०
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ० राजेन्द्र शर्मा	२.५०
भाषा विज्ञान	डॉ० गणेशदत्त गौड़	३.००
प्रसाद का स्कन्दगुप्त	प्रो० पुरुषोत्तम लाल विज	२.५०
प्रसाद और उनका चन्द्रगुप्त	प्रो० पुरुषोत्तम लाल विज	३.००
सूरदास	प्रो० भारत भूषण 'सरोज'	३.००
तुलसीदास	प्रो० विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक'	२.५०
कामायनी	प्रो० महेन्द्रकुमार	१.५०
साकेत	प्रो० प्राणनाथ शर्मा	१.५०
कबीर का काव्य-दर्शन	प्रो० कलाधर	३.००
विद्यापति का काव्य-दर्शन	प्रो० केसरीकुमार	३.००
भाषा विज्ञान	श्री जयवंशी झा	२.५०
हिन्दी साहित्य का इतिहास	श्री सुगणचन्द शास्त्री	३.००
ध्रुवस्वामिनी	श्री कृष्णमोहन अग्रवाल	१.५०
मुद्राराक्षस	श्री कृष्णमोहन अग्रवाल	१.००

निबन्ध—

निबन्ध रत्नाकर	डा० मनमोहन गौतम, सहगल	५.५०
निबन्ध प्रबन्ध	रामकृष्ण शिलीमुख	४.००
विचार और निबन्ध	सरोज तथा डा० राजेन्द्र शर्मा	२.००

रीगल बुक डिपो, नई सड़क, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

STOCK VERIFY
2020
G.K.V. Library

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri